PRINTED MATTER/PRINTING BOOK CLAUSE 121 (A) P & T GUIDE

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)
द्वारा भिवानी (हरियाणा), काठमाण्डू (नेपाल) से प्रकाशित

ISSN : 2395-7115
Impact Factor 8.642

बोहल शोध मंजूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL MULTI DISCIPLINARY, MULTIPLE LANGUAGES
PEER REVIEWED, REFREED RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website :
www.bohalshodhmanjusha.com
Email : grsbohal@gmail.com

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
HOD Hindi, Tantia University
M. : 8708822674, 9466532152

गीना देवी शोध संस्थान
द्वारा श्रीगंगानगर, (राजस्थान), पटियाला (पंजाब) व नेपाल से प्रकाशित

ISSN : 2321-8037
Impact Factor 7.834

Gina Shodh SANGAM

A Peer Reviewed & Refereed International Research Journal
Journal of Literature, Arts, Culture, Humanities and Social Sciences

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 2018)

Website : www.ginajournal.com
Email : grngobwn@gmail.com
Office : 8708822674

Editor :
Dr. Rekha Soni, Vice Principal
Education, Tantia University
M. 9828531975

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा नई दिल्ली, आगरा, गाजियाबाद एवं नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Website : https://ginajournal.com/shodh-samalochan/
Executive Editor : Dr. Varsha Rani M. 9671904323
Managing Editor : Dr. Mukesh Verma M. 9627912535

Editor :
Dr. Naresh Sihag, Advocate
M. 8708822674

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक गुगनराम सोसायटी (रजि.) के लिए डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से छपवाकर गीना प्रकाशन, 202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा) से वितरित की।

ISSN 2348:5639

SHODH SAMALOCHAN 2025 Dr. Versha Rani Dr. Naresh Sihag, Adv.

गिरधारीलाल घासीराम शोधपीठ
द्वारा भारत-नेपाल से प्रसारित

ISSN : 2348-5639
Impact Factor : 6.521

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Vol. : 12, Issue : 4

Oct.-Nov.-Dec. : 2025

Executive Editor :
Dr. Varsha Rani

Editor :
Dr. Naresh Sihag 'Bohal'
Advocate

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.) द्वारा प्रकाशित

संस्थापक संपादक
स्व. फतेहचंद

SHODH SAMALOCHAN

शोध-समालोचन (त्रैमासिक)

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REREREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES QUARTTERLY RESEARCH JOURNAL

UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

वर्ष-12, अंक-4 **अक्टूबर-दिसम्बर 2025 (भाग-1)** **आईएसएसएन : 2348-5639**

संपादक
• डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल' एडवोकेट

कार्यकारी संपादक
• डॉ. वर्षा रानी

प्रबंध संपादक
• डॉ. मुकेश 'ऋषिवर्मा'

सह-संपादक
• डॉ. लता एस. पाटिल,
• डॉ. सुलक्षणा अहलावत

अक्षर संयोजन
• मो. सलीम

कानूनी सलाहाकार
• डॉ. रामफल दलाल, एडवोकेट
• अजीत सिहाग, एडवोकेट

सलाहकार सम्पादक मंडल

• डॉ. निशीथ गौड, आगरा
• डॉ. ऊषा रानी, शिमला
• डॉ. गोविन्द सोनी, श्रीगंगानगर
• डॉ. सुषमा रानी, जीन्द
• डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट, श्रीनगर
• डॉ. दीपशिखा, पटियाला
• डॉ. गौतम कुमार साहा, दरभंगा
• श्री राकेश शंकर भारती, युक्रेन
• डॉ. के.के. मल्होत्रा, कैनेडा
• डॉ. आशीष कुमार दीपांकर, मेरठ
• डॉ. कामिनी कौशल, गाजियाबाद
• डॉ. रवि शंकर सिंह, आरा
• डॉ. संजय कुमार, रांची
• डॉ. संतोष कुमार भगत, रांची

1. 'शोध-समालोचन' का प्रबंधन और संपादन पूर्णतः अवैतनिक है।
2. 'शोध-समालोचन' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखकों के अपने हैं। उनके प्रति वे स्वयं उत्तरदायी है।
3. पत्रिका से संबंधित प्रत्येक विवाद का न्याय क्षेत्र भिवानी न्यायालय ही मान्य होगा।
4. प्रकाशक/ स्वामी डॉ. नरेश सिहाग, एडवोकेट ने सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से मुद्रित करवाया।

'शोध समालोचन' की सदस्यता का शुल्क भुगतान राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा सीधे ट्रांसफर या जमा किया जा सकता है। बैंक का विवरण निम्नानुसार है–**बैंक :** PUNJAB NATIONAL BANK **Branch :** Yamuna Vihar, Delhi-110053 **IFSC :** PUNB0225600 **Account Holder :** SANIA PUBLICATION **Current Account No.** 2256002100405546 भुगतान की मूल रसीद, शोध -पत्र पत्रिका की ई-मेल पर भेजना अनिवार्य है।

नोट :- इस अंक की प्रिंट कॉपी खरीदने के लिए सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094 से सम्पर्क करें मो. 9818128487

मूल्य : 650/- रु. एक प्रिंट प्रति वार्षिक 2500/- रु.

Editorial Board Member

1. **Dr. Priyanka Ruwali**
   Dept. Of Sociology
   D.S.B. Campus, Kumaun University, Nainital, Uttrakhand
2. **Ashutosh Singh**
   Department of History,
   Kurukshetra University, Kurukshetra, Haryana
3. **Mansi Sharma**
   ICSSR- Doctoral Fellow,
   Department of Political Science,
   University of Lucknow, Lucknow, U.P.
4. **Kishor Kumar**
   Department of History,
   Kumaun University, Nainital, Uttarakhand.
5. **Vivek Kumar**
   Research Scholar,
   Department of Medivial and Modern History,
   University of Lucknow, U.P.

विषय विशेषज्ञ सलाहकार समिति/ संपादकीय मंडल :

- **Dr. Mudita Popli**
  Principal, Maa Karni B Ed College Nal, Bikaner
- **Dr. Tapasya Chauhan**
  Assistant Professor,
  Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra (Utter Pradesh)
- **Dr. AMBILI V. S.**
  Assistant Professor, Department of Hindi,
  N.S.S. College, Pandalam, Pathanamthitta Distt. University of Kerala.
- **Dr. Om Prakash Mehrara**
  Director, Shri Ramnarayan Dixit PG College, Srivijaynagar, Distt. Anupgarh (Rajasthan)
- **Dr. Anju Bala**
  Assistant Professor Hindi,
  Guru Nanak Girls College, Yamunanagar-135001
- **डॉ. श्रीमती अभिलाषा सैनी**
  प्राचार्य, स्व. रामनाथ वर्मा शासकीय महाविद्यालय, मोपका, जिला-बलौदा बाजार, छत्तीसगढ़
- **डॉ. माया गोला,** असिस्टेंट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, सोबन सिंह जीना विश्वविद्यालय, अल्मोड़ा (उत्तराखंड)
- **डॉ. मोहित शर्मा**
  श्री सर्वेश्वर संस्कृत महाविद्यालय, निम्बार्क तीर्थ किशनगढ़, जिला अजमेर (राजस्थान)-305815
- **रजनी प्रिया**
  राँगाटाँड़ रेलवे कॉलोनी, क्वार्टर सं. 502/136, तरुण संघ क्लब दुर्गा मंदिर, धनबाद, लैण्डमार्क - नियर श्रमिक चौक, पोस्ट जिला-धनबाद, झारखंड-826001

- **डॉ. आँचल कुमारी,** असिस्टेंट प्रोफेसर हिंदी
  राम चमेली चड्ढा विश्वास गर्ल्स कॉलेज गाजियाबाद चौधरी चरणसिंह युनिवर्सिटी, मेरठ (उ. प्र.)
- **डॉ. सरिता भवानी मालवीय**
  असिस्टेंट प्रोफेसर, फैकल्टी ऑफ लॉ.,
  आर.के.डी.एफ. विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)
- **डॉ. संदीप कुमार,** असि. प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, कन्हैयालाल मानिकलाल मुंशी हिंदी तथा भाषाविज्ञान विद्यापीठ, डॉ. भीमराव अम्बेडकर वि.वि., आगरा
- **डॉ. प्रमोद नाग**
  सहायक प्राध्यापक, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेजुएट स्टडीज, बेंगलुरु-560107
- **पल्लवी आर्य**
  असि. प्रोफेसर, भाषाविज्ञान विभाग, के.एम.आई. डॉ. भीमराव अम्बेडकर वि.वि., आगरा
- **डॉ. अमित कुमार सिंह**
  डी. लिट्., असि. प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, के.एम. आई., डॉ. भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
- **कोकिला कुमारी**
  शोद्यार्थी, हिंदी विभाग, राँची वि.वि. राँची, झारखंड
- **गोस्वामी सोनीबाला**
  शोधार्थी - जयप्रकाश विश्वविद्यालय, छपरा, बिहार
- **डॉ. करुणेन्द्र सिंह**, असिस्टेंट प्रोफेसर
  रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, गोरखपुर, बापू स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पीपीगंज, गोरखपुर
- **डॉ. मीरा चौरसिया**
  चमनलाल महाविद्यालय लंढौरा, रुड़की, हरिद्वार, उत्तराखण्ड-247664
- **Dr. Vimal Parmar**
  Assistant Prof. Rajasthan P.G. Law College, Chirawa , Rajasthan
- **डॉ. तनु श्रीवास्तव**
  असिस्टेंट प्रोफेसर (अर्थशास्त्र), स्कूल ऑफ सोशल साइंस, देवी अहिला विश्वविद्यालय, इन्दौर
- **डॉ. कुमारी लक्ष्मी जोशी**
  उप-प्राध्यापक, केंद्रीय हिन्दी विभाग
  त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमांडू, नेपाल
- **Dr. Archana Tiwari** , Assistant Professor , History and Indian Culture, Uni. Rajasthan, Jaipur
- **डॉ. जगदीप दुबे**
  सहायक प्राध्यापक वाणिज्य (म.प्र.), शासकीय आदर्श महाविद्यालय, डीनडोरी (म.प्र.)
- **डॉ. चन्द्रशेखर सिंह**
  समाज कार्य विभाग, काशी विद्यापीठ, वाराणसी
- **लेफ्टि. डॉ. सन्दीप भांभू**
  शारीरिक शिक्षा विभाग, टॉटिया वि.वि. श्रीगंगानगर

Request to Writers

Send quality original and unpublished works written on language, literature, society, science and culture. For publication, along with the translated works, also send the letters of consent received from the original authors. Compositions should be typed in Hindi Unicode Mangal font, English Time Roman. At the beginning of the article, a summary of the article is required which should be between 150 to 200 words maximum. The abstract must reflect the purpose of writing the article. Also write 5 to 7 'key words' (seed words) according to the article.

Write the article by dividing it appropriately into subheadings. Be sure to give a conclusion at the end of the article. The word limit should be 2000 to 2500 words. List of bibliographies at the end of the article APA Be in the format of. While sending the article, please write your name, address, phone number and title of the article in the e-mail. Submit a declaration to the effect that the article is original, unpublished, the author and not the editorial board will be responsible for any dispute related to it in future.

At the end of the composition, mention your complete postal address, mobile number and e-mail address.

- Editor

लेखकों से निवेदन

भाषा, साहित्य, समाज, विज्ञान एवं संस्कृति पर लिखी गयी स्तरीय मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएं भेजें। प्राकशनार्थ अनूदित रचनाओं के साथ मूल लेखकों से प्राप्त सहमति पत्र भी भेजें। रचनाएँ हिंदी यूनिकोड मंगल फान्ट अंग्रेजी टाइम रोमन में टंकित होनी चाहिए। लेख के प्रारंभ में लेख का सार अपेक्षित है जो अधिकतम 150 से 200 शब्दों के मध्य हो। सार में लेख लिखने का उद्देश्य अवश्य परिलक्षित होना चाहिए। लेख के अनुरूप 5 से 7 (की वर्ड) (बीज शब्द) भी लिखें। लेख को यथोचित उपशीर्षकों में विभाजित करके लिखें। लेख के अंत में निष्कर्ष अवश्य दें। शब्द सीमा 2000 से 2500 शब्दों की हो। आलेख के अंत में संदर्भ ग्रंथों की सूची ए.पी.ए. के प्रारूप में हो। लेख भेजते समय अपने नाम, पता, फोन नंबर एवं लेख का शीर्षक ई-मेल में अवश्य लिखें। इस आशय का एक घोषणा-पत्र प्रस्तुत कर दें कि लेख मौलिक है, अप्रकाशित है, भविष्य में इससे संबंधित किसी भी विवाद के लिए लेखक उत्तरदायी होंगे संपादक मंडल नहीं।

रचना के अंत में अपना पूरा डाक पता, मोबाइल नंबर और ई-मेल पता अंकित करें।

-संपादक

प्रकाशित पत्रिका प्राप्त करने के लिए संपर्क करे :
सानिया पब्लिकेशन, दिल्ली-110094
मोबाइल : 9818128487, 8383042929

ISSN : 2348-5639

SHODH SAMALOCHAN

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES QUARTERLY RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

Table 2

Methodology for University and College Teachers for calculating Academic/Research Score

(Assessment must be based on evidence produced by the teacher such as: copy of publications, project sanction letter, utilization and completion certificates issued by the University and acknowledgements for patent filing and approval letters, students' Ph.D. award letter, etc,.)

S.N.	Academic/Research Activity	Faculty of Sciences /Engineering / Agriculture / Medical /Veterinary Sciences	Faculty of Languages / Humanities / Arts / Social Sciences / Library /Education / Physical Education / Commerce / Management & other related disciplines
1.	**Research Papers in Peer-Reviewed or UGC listed Journals**	08 per paper	10 per paper
2.	**Publications (other than Research papers)**		
	(a) Books authored which are published by ;		
	International publishers	12	12
	National Publishers	10	10
	Chapter in Edited Book	05	05
	Editor of Book by International Publisher	10	10
	Editor of Book by National Publisher	08	08
	(b) Translation works in Indian and Foreign Languages by qualified faculties		
	Chapter or Research paper	03	03
	Book	08	08
3.	**Creation of ICT mediated Teaching Learning pedagogy and content and development of new and innovative courses and curricula**		
	(a) Development of Innovative pedagogy	05	05
	(b) Design of new curricula and courses	02 per curricula/course	02 per curricula/course

202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

संपादकीय

प्रिय पाठको,

हर्ष और गर्व का विषय है कि शोध समालोचन पत्रिका का यह तिमाही अंक (अक्टूबर-नवंबर-दिसंबर 2025) आपके हाथों में है। जब हम नए वर्ष की दहलीज़ की ओर बढ़ रहे हैं, तब यह अंक न केवल समकालीन साहित्यिक विमर्शों का दस्तावेज़ है, बल्कि समय की चुनौतियों और संभावनाओं पर एक गंभीर चिंतन भी है।

आज का दौर तीव्र परिवर्तन का दौर है। समाज, राजनीति, शिक्षा, संस्कृति और तकनीक - हर क्षेत्र में गहरे बदलाव हो रहे हैं। इन परिवर्तनों के बीच साहित्यकारों और शोधकर्ताओं की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। साहित्य केवल भावनाओं का संसार नहीं है, यह हमारे सामूहिक जीवन का दर्पण भी है। इसीलिए शोध समालोचन ने सदैव यह प्रयास किया है कि अकादमिक शोध, आलोचना और साहित्यिक रचनाओं को एक साथ लाकर पाठकों को सार्थक विमर्श उपलब्ध कराए।

इस अंक में शामिल शोध लेख विविध विषयों को स्पर्श करते हैं। कहीं परंपरा और आधुनिकता के बीच संतुलन की खोज है, तो कहीं स्त्री विमर्श, पर्यावरण चेतना और सामाजिक न्याय की आकांक्षा। शोधकर्ताओं ने अपने लेखों में साहित्य और समाज के अंतर्संबंधों को रेखांकित किया है। यही अकादमिक विमर्श की सबसे बड़ी विशेषता है—वह केवल शब्दों का सौंदर्य नहीं, बल्कि विचारों का मंथन भी है।

आज हिंदी साहित्य में जो सबसे प्रमुख प्रश्न उभर रहा है, वह है—'यथार्थ की अभिव्यक्ति किस प्रकार हो?' क्या साहित्य केवल आनंद देने का साधन है या वह परिवर्तन का औजार भी हो सकता है? समकालीन कवियों और आलोचकों ने यह सिद्ध किया है कि साहित्य दोनों है। वह संवेदना का भी स्रोत है और क्रांति का भी बीज।

हमारे समय में स्त्री विमर्श विशेष महत्व पा रहा है। स्त्री की स्वतंत्रता, गरिमा और आत्मनिर्णय की आकांक्षा अब साहित्यिक विमर्शों में गहराई से उपस्थित है। इस अंक में प्रकाशित कई शोध लेखों ने स्त्री की बदलती भूमिका, उसकी चुनौतियों और संभावनाओं को केंद्र में रखा है। इसी प्रकार पर्यावरण विमर्श भी एक गंभीर मुद्दा है। प्रदूषण, जलवायु परिवर्तन और प्राकृतिक संसाधनों के अंधाधुंध दोहन ने साहित्य को भी झकझोरा है। कवि और लेखक अब प्रकृति को केवल सौंदर्य प्रतीक के रूप में नहीं, बल्कि जीवन की मूलभूत शर्त के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं।

समकालीन हिंदी आलोचना भी इन विषयों से अछूती नहीं रही है। आलोचना की भूमिका केवल पाठ विश्लेषण तक सीमित नहीं है; वह समाज और साहित्य के संवाद को दिशा देने का कार्य करती है। हमें यह स्वीकार करना होगा कि साहित्य का मूल्यांकन समय के साथ बदलता है। आज की पीढ़ी जिस दृष्टि से साहित्य को देख रही है, वह बीते समय से भिन्न है। यही आलोचना की जीवन्तता है।

इस अंक का एक और विशेष आकर्षण है—नवीन लेखकों और शोधार्थियों को मंच प्रदान करना। शोध समालोचन सदैव यह मानती है कि साहित्य और शोध का भविष्य नई पीढ़ी के हाथों में है। इसीलिए युवा लेखकों की रचनाओं को यहाँ स्थान देकर उन्हें प्रोत्साहन देना हमारा दायित्व भी है और प्रतिबद्धता भी।

हम यह भी मानते हैं कि अकादमिक शोध केवल पुस्तकालयों और कक्षाओं तक सीमित नहीं रहना चाहिए। उसका प्रत्यक्ष संबंध समाज से होना आवश्यक है। जब तक शोध समाज की ज्वलंत समस्याओं को नहीं छूता, तब तक उसका महत्व अधूरा है। इस दृष्टि से इस अंक में शामिल कई आलेख शिक्षा नीति, सामाजिक विषमताओं और लोकतांत्रिक मूल्यों जैसे विषयों पर केंद्रित हैं।

संपादकीय के माध्यम से हम अपने पाठकों और लेखकों से यह भी निवेदन करना चाहेंगे कि साहित्य को केवल अध्ययन का विषय न समझें, बल्कि जीवन का मार्गदर्शक भी मानें। आज जब समाज अनेक चुनौतियों का सामना कर रहा है—भ्रष्टाचार, असमानता, हिंसा और पर्यावरणीय संकट—तब साहित्य की जिम्मेदारी और बढ़ जाती है। यह हमें संवेदनशील, मानवीय और जागरूक नागरिक बनाने का साधन है।

अंततः, यह अंक आप सभी के लिए एक चिंतन-यात्रा है। इसमें जहाँ शोध और आलोचना की गहराई है, वहीं रचनात्मक साहित्य की भावनात्मक ऊष्मा भी है। हम आशा करते हैं कि यह अंक आपके अध्ययन, अध्यापन और शोध में सार्थक योगदान देगा।

आप सभी पाठकों, लेखकों और समीक्षकों का सहयोग ही हमारी शक्ति है। हमें विश्वास है कि आने वाले समय में भी यह पत्रिका हिंदी साहित्यिक आलोचना और शोध की गंभीर परंपरा को और समृद्ध करेगी।

सादर,

संपादक

डॉ. नरेश सिहाग एडवोकेट

विषयानुक्रमणिका

संपादकीय 6

हिन्दी साहित्य में गाँधी का प्रभाव (विशेष सन्दर्भ-सियाराम शरण गुप्त) 11
भक्ति कुमारी

हरीश अरोड़ा की कविताओं में स्त्री-जीवन के विविध सौंदर्य आयाम 17
राकेश
प्रो. ज्योति किरण

मलबे का मालिक कहानी में भारत विभाजन की त्रासदी : एक अध्ययन 22
सन्तोष कुमारी

Quality Analysis and Management Practices for Sugar Factory Wastewater 30
Dr. Atul Kumar
Dr. Pardeep Kumar

AI and Digital Education in India: Driving a Pedagogical Shift for Better Learning Outcomes 36
Arti Sood

हिंदी साहित्य में पर्यवरण प्रदूषण - जल प्रदूषण समकालीन हिंदी कविताओं के विशेष संदर्भ में 41
Dr. Dhanya B

आधुनिक जीवन-शैली में योग की प्रासंगिकता का अध्ययन 45
डॉ. बी.के. चौधरी
पूजा नागपाल

मुंशी प्रेमचंद के कथा-साहित्य में स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान का अध्ययन 47
विनोद प्रसाद जायसवाल
डॉ. विनोद कुमार शर्मा

छत्तीसगढ़ के कबीरधाम जिले में निवासरत बैगा जनजाति के विकास में शासकीय योजनाओं की भूमिका 54
प्रवीण कुमार
डॉ. अश्विनी महाजन

समकालीन हिंदी नवगीतों में व्यक्त पर्यावरणीय चेतना 62
प्रो. डॉ. केशव क्षीरसागर

Stacked for Scale: India's Digital Public Infrastructure, UPI Adoption, and Inclusive Growth 67
Jagdish Rai
Dr. Aman Gupta

कृषि में कीटनाशकों का उपयोग : मानव व पारिस्थिति पर प्रभाव (हनुमानगढ़ जिले का भौगोलिक अध्ययन) 75
रोहताश कुमार
डॉ. सोम प्रकाश
मानव अधिकार की अवधारणा, विकास और महत्व : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 83
डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन
राजस्थान की स्थापत्य कला : एक ऐतिहासिक अध्ययन 87
Subhash Chander
Dr. Vijay Shankar Kaushik
जयप्रकाश नारायण की संपूर्ण क्रांति एवं विचारों का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 93
आदित्य राज
भाषा और समाज (वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भाषाओं का योगदान) 100
डॉ. सुनीता सिंह मरकाम
प्रेमचंद का साहित्य : समाज का दर्पण 104
नेहा जैन अज़ीज़
डॉ. बी.आर. अंबेडकर और उनका समतामूलक समाज-इतिहास के परिप्रेक्ष्य में 109
सावन कुमार
डॉ. विजय शंकर कौशिक
उच्च माध्यमिक स्तर पर विभिन्न संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन 115
कुसुम लता टाक
डॉ. श्रद्धा सिंह चौहान
मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में शोधार्थियों की डिजिटल सूचना संसाधनों के प्रति अभिरुचि और संतुष्टि : एक समीक्षात्मक अध्ययन 121
आरती ग्वालेर
डॉ. मोहम्मद नासिर
महिला सशक्तिकरण में मानवाधिकारों की भूमिका : एक अध्ययन 129
डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा
कविता
अगम बहै दरियाव : किसान जीवन का महाकाव्य 132
आन्नपूर्ण भोसले
डॉ. अमरनाथ प्रजापति
भारत में महिला अधिकार विधान एवं संरक्षण : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन 136
डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा
सरिता पूनिया
मोहनदास नैमिशराय का उपन्यास 'महानायक बाबासाहब डॉ. आम्बेडकर' डॉ. बाबासाहब आंबेडकर-संघर्षशील महानायक 138
डॉ. विजय सदामते

महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका 142
निहारिका शुक्ला
प्रो. राजीव कुमार
పాల్కురికి సోమనాథుని రచనలు – సామాజిక దృక్పథం 145
Dr. Adapa Kedari
गोंड जनजातियो में 750 का योगदान (सीधी जिले के विशेष संदर्भ) 153
बबिता सिंह मरकाम
कबीर समाज सुधारक के रूप में 157
ललित कुमार
किन्नर विमर्श : सामाजिक पहचान और आधुनिक संदर्भ में संभावनाएँ 160
Dr. Anupama
धर्मशास्त्रों का नारी के प्रति दृष्टिकोण 167
Dr. Indu P
उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के समक्ष ऑनलाइन शिक्षण की चुनौतियों का अध्ययन 171
पूनम व्यास
प्रो. ग्रीष्मा शुक्ला
पारम्परिक पारिस्थितिकी ज्ञान और जलवायु 180
डॉ. वाणीश्री बुग्गी
हिन्दी उपन्यास में मानव तस्करी : सरिता पटेल का उपन्यास 'बिकता बदन' के विशेष संदर्भ में 183
SILPA. A
मरंग गोडा नीलकंठ हुआ : विकिरण, प्रदूषण से जूझते आदिवासियों की गाथा 185
डॉ. श्रीकांत राठोड
डॉ. नरेश सिहाग का कहानी संग्रह और किन्नर विमर्श 189
डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी
इच्छा उपाध्याय
2047 में भारत की उच्च शिक्षा का परिदृश्य : विश्वविद्यालय और कॉलेजों में शिक्षा के स्वरूप और वैश्विक प्रतिस्पर्धा 194
Dr. Mahesh Chand Gurjar
A Study on Differential Geometry of Curved Manifolds 200
Dr. Nimesh Kumar

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

हिन्दी साहित्य में गाँधी का प्रभाव
(विशेष सन्दर्भ–सियाराम शरण गुप्त)

भक्ति कुमारी
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
Email : bhaktiduphd@gmail.com
Mob- No- 7543947364

गाँधी जी स्वभावतः एक मृदुभाषी, सौम्य, सहनशील और सिद्धान्तवादी महापुरूष थे, जिन्होंने भारत माँ की स्वाधीनता के लिए अपना सम्पूर्ण जीवन समर्पित कर दिया था। गाँधी जी अपने विचारों, अपने व्यक्तित्व, अपनी भाषा, अपने कार्यों विशेषकर अपने व्याख्यानों (भाषणों) एवं लेखन के सशक्त माध्यम से देशवासियों में मूलतः लेखकों, साहित्यकारों, पत्रकारों के मानस पटल पर सत्य-अहिंसा, प्रेम, एकता, शान्ति, सद्भावना, जागृत किए। गाँधी जी का प्रमुख राजनैतिक सिद्धान्त सर्वोदयी व्यवस्था की स्थापना थी। उनके अनुसार सर्वोदय व्यवस्था वह व्यवस्था है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति दूसरे की भलाई में ही अपनी भलाई समझता है। इस व्यवस्था की स्थापना के लिए गाँधी जी रचनात्मकता को आवश्यक मानते हैं। जिसके अन्तर्गत साम्प्रदायिक एकता, अस्पृश्यता, मद्य-निषेध, ग्रामोद्योगों का विकास, गाँवों की सफाई में सुधार, बुनियादी शिक्षा, आर्थिक समानता, स्वास्थ्य व्यवस्था, नारी का सम्मान आदि सर्वोदय की अनिवार्य शर्तें हैं। किसी भी देश की राजनैतिक स्वतंत्रता के लिए ही नहीं, अपितु उसके सामाजिक, आर्थिक और नैतिक जीवन के विकास के लिए भी रचनात्मकता आवश्यक प्रतीत होती है।

सन् 1920 से लेकर 1947 तक का समय भारतीय इतिहास में सामाजिक बदलावों के दौर से गुज़र रहा था। इस परिवर्तन के प्रमुख सूत्रधार महात्मा गाँधी थे, जिन्होंने अपने भाषा, भाव, विचारों एवं व्यक्तित्व के माध्यम से भारतीय जन मानस में सत्य, अहिंसा, प्रेम, एकता, शान्ति, राष्ट्रीयता और राष्ट्रभाषा जैसे मानवीय मूल्यों को जगाने का स्तुत्य प्रयत्न किया। हिन्दी साहित्य के कवि और लेखक भी गाँधी जी के इन विचारों से प्रभावित हुए बिना न रह सके। आचार्य शुक्ल जी ने ठीक ही कहा है– "जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है, तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।"[1] अतः साहित्य और समाज का घनिष्ठ सम्बन्ध होता है, वे एक-दूसरे से प्रभावित होते और करते चलते हैं।

हिन्दी कवियों और लेखकों ने गाँधी जी के इन्हीं आदर्शों को ध्यान में रखते हुए सामाजिक बदलाव के विभिन्न विषय-वस्तुओं को केन्द्र में रखकर रचना की। जिसमें 'माखनलाल चतुर्वेदी' द्वारा 1913 ई. में लिखी गयी कविता 'निःशस्त्र सेनानी' को गाँधी पर लिखी गयी हिन्दी की पहली कविता मानी जा सकती है। राष्ट्रकवि 'मैथिलीशरण गुप्त' की अनेक रचनाओं में गाँधीवादी विचारों की पूर्ण अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। जिसमें भारत-भारती, किसान, अछूत, साकेत आदि प्रमुख हैं। 'भारत-भारती' में गुप्त जी का हृदय भारत की दुर्दशा को देखकर द्रवित हो उठता है। वे लिखते हैं–

हम कौन थे, क्या हो गये हैं और क्या होंगे अभी,
आओ विचारें आज मिलकर, ये समस्याएँ सभी।
यद्यपि हमें इस देश का, कुछ गर्व था, पर क्यों तभी
पूरा नहीं जो याद भी है, वह कहानी हो रही।।[2]

यह ठीक वही समय है जिस समय गाँधी देश और समाज की दशा देखकर क्षुब्ध थे। उनका मानना था कि हमें अतीत के गौरवमयी इतिहास का स्मरण करके उचित और अनुचित का निर्णय लेना चाहिए।

'रामनरेश त्रिपाठी' ने भी गाँधी जी से प्रभावित होकर 'राष्ट्रीय आन्दोलन' में भाग लिए थे। गाँधी जी जिस स्वतंत्रता आंदोलनों के माध्यम से भारतीय जनता को अंग्रेजों के खिलाफ़ जागरूक करके आगे बढ़ा रहे थे वही काम त्रिपाठी जी अपनी रचनाओं के माध्यम से कर रहे थे। त्रिपाठी जी का खण्ड काव्य 'पथिक' का तानाबाना गाँधी जी को केन्द्र में रखकर बुना गया है जिसमें भारतीय स्वतंत्रता संग्राम और गाँधी जी का बलिदान बड़ी तन्मयता के साथ चित्रित किया गया है–

जब तक धर्म दुःख है, सुख में कर्म न भूलो।
कर्म-भूमि में न्याय-मार्ग पर छाया बनकर फूलो।।
जहाँ स्वतंत्र विचार न बदले मन में आकर, सुख में।
बनो न बाधक शक्तिमान जन जहाँ निर्बल के सुख में।।[3]

इस खण्डकाव्य का पथिक कोई और नहीं अपितु गाँधी जी ही हैं जो देश की दशा, कर्तव्य-पालन, आत्मबल, त्याग, तपस्या और स्वतंत्रता के लिए भारतीय मानस को दृढ़प्रतिज्ञ होने का उपदेश दे रहे हैं।

छायावादी कवि चतुष्ट्य (प्रसाद, निराला, पन्त और महादेवी वर्मा) की रचनाओं में भी गाँधी दर्शन देखने को मिलता है, इन चारों में पन्त जी गाँधी जी के अधिक करीबी रहे, जो बापू के विचारों से इस कदर प्रभावित हुए की प्रतीकात्मक महाकाव्य 'लोकायतन' की रचना कर डाली जिसमें गाँधी जी के अतिरिक्त सभी पात्र कल्पना की उपज हैं। 'छायावाद' का प्रसिद्ध महाकाव्य 'कामायनी' भी गाँधीवादी विचारों की वाहक रही है, जिसमें प्रसाद जी 'तर्क' को चलाने का चित्रण कर गाँधी दर्शन का संदेश देते हैं–

तुमुल कोलाहल कलह में, जब-तब लेकर सबको, यहीं बैठूं।
मैं इसी फिरती रहती हूँ, अपनी निर्जनता बीच पैठूं।।
मैं इसी गाती हूँ, तकली के परिवर्तन में मुखरित होकर।
चल सी सकती धीरे-धीरे प्रिय गये खेलने को अधेरा।।[4]

छायावादोत्तर काल के कवियों में नरेन्द्र शर्मा, हरिवंशराय बच्चन, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', भगवती चरण वर्मा, रामधारी सिंह 'दिनकर', भवानी प्रसाद मिश्र इत्यादि ने गाँधीवादी मानवतावादी विचारों को अपनी कविता के माध्यम से धार दी है। भवानीप्रसाद मिश्र तो खुद को 'गाँधी का बच्चा' मानते थे।

यह तो रहा काव्यपक्ष की बात यदि हिन्दी गद्य साहित्य की बात करें तो यह भी गाँधी के विचारों का सच्चा वाहक सिद्ध हुआ है। हिन्दी गद्य साहित्य के सम्राट उपन्यासकार 'मुंशी प्रेमचन्द' की बात करें तो वे गाँधी जी का 1923 ई. में गोरखपुर वाला व्याख्यान सुनकर इस कदर प्रभावित हुए की 'रंगभूमि', 'प्रेमाश्रम' और 'गोदान' जैसे महत्वपूर्ण गाँधीवादी उपन्यासों की रचना की।

'रंगभूमि' का सूरदास कोई और नहीं गाँधी जी ही हैं। उल्लेखनीय है कि प्रेमचन्द के विचारों में दो महान व्यक्तियों का प्रभाव पाया जाता है गाँधी और मार्क्स। जहाँ सामाजिक और वैयक्तिक जीवन में गाँधी को अपना आदर्श मानते हैं वहीं आर्थिक रूप से शोषित, दलित जनता को वे मार्क्सवादी दृष्टि से देखते हैं। प्रेमचन्द जी ने स्वयं ही लिखा है– "रहा तो महात्मा जी का सूक्ष्म-स्थूल के कायल। हाँ जो बात की खुदा की कसम लाजवाब की। न जाने कहाँ से नमक की खान निकालते उससे देखते-देखते सारे देश में आग लगा दी।"[5]

सन् 1954 ई. में प्रकाशित 'फणीश्वरनाथ रेणु' कृत उपन्यास 'मैला आँचल' में भी गाँधी जी का प्रभाव दिखाई पड़ता है जिसमें 'बावन दास' गाँधीवादी चरित्र है जो गाँधी जी से पत्राचार करता दिखाया गया है। जिसकी सबसे बड़ी चिन्ता है– "भारत माता उजड़ बेजार हो रही है।" दूसरे पात्रों की बात करें तो 'लक्ष्मी कोठारिन' और 'मंगला देवी' चरखा चलाकर लोगों को सूत काटने का संदेश देती हैं, जो सर्वोदय के सिद्धान्तों में से एक है।

गिरिराज किशोर प्रमुख गाँधीवादी उपन्यासकारों में से एक हैं, उनका पहला 'गिरमिटिया' उपन्यास गाँधी जी के अफ्रीका प्रवास पर आधारित है जिसमें गिरमिटिया मजदूरों को स्वतंत्र कराने में गाँधी जी की भूमिका निभाई गयी है। इनके अन्य उपन्यास 'गाँधी गिरमिटिया', 'बा' और 'बापू' भी गाँधी जीवन और दर्शन पर लिखे गये उपन्यास हैं। या यूँ कहा जाय कि इनका सम्पूर्ण साहित्य गाँधीवाद पर आधारित है तो अतिशयोक्ति नहीं होगा।

'रामदरश मिश्र' भी गाँधीवादी विचारों के वाहक हैं, इन्होंने अपने उपन्यास 'जल टूटता हुआ' में 'सतीश' नामक चरित्र के माध्यम से सत्य और अहिंसा का संदेश देते हैं। जब 'रघुनाथ' और 'दौलतराम' गाँव की सड़क जोत लेते हैं, जिसके एवज में जुर्माना भरना पड़ता है, तब गाँव की इस हालात को देखते हुए 'सतीश' 'जग्गू' से कहता है कि- "ठीक है जग्गू, मैं तो जो भोग रहा हूँ वह भोग ही रहा हूँ, लेकिन चिन्ता इस बात की है कि गाँव का क्या होगा? क्या इसी गाँव की कल्पना गाँधी जी ने की थी? हम तुम आज हैं कल नहीं रहेंगे, लेकिन इस गाँव का क्या होगा? ऐसे ही अनेक गाँवों का क्या होगा?"[6]

इतना ही नहीं गाँधी के विचारों को आगे बढ़ाने में जैनेन्द्र, कमलेश्वर, भगवतीचरण वर्मा, निर्मल वर्मा इत्यादि लेखकों ने भी कोई कसर नहीं छोड़ी।

राष्ट्रीय सांस्कृतिक काव्यधारा के प्रमुख कवियों में मैथिलीशरण गुप्त के अनुज 'सियाराम शरण गुप्त' का रचना कर्म गाँधीवादी विचारधारा से पूर्णतः प्रभावित रहा। इनकी रचनाओं में सत्य, अहिंसा, करुणा, राष्ट्रप्रेम, विश्वबन्धुत्व, शान्ति आदि मूल्यों का जबरदस्त प्रभाव दिखाई पड़ता है। यही कारण है कि डॉ. नगेन्द्र इन्हें गाँधी दर्शन का निश्छल व्याख्याता कहकर सम्बोधित किया है– "गुप्त जी और दिनकर के समान सियाराम शरण गुप्त इस धारा के विशिष्ट कवि हैं। इनकी कृतियों में सर्वत्र गाँधीवाद की अभिव्यक्ति दिखती है। देश की ज्वलंत घटनाओं और समस्याओं का इन्होंने बड़ा जीवन्त चित्र प्रस्तुत किया है, किंतु संस्कृति के उदात्त तत्त्वों के प्रति गहरी आस्था रखने वाले सियाराम शरण' जी इन घटनाओं, अव्यवस्थाओं और समस्याओं को तात्कालिक तथ्य के रूप में न देखकर उन्हें वृहत्तर मानवीय मूल्यों संवेदनाओं और संदर्भों से जोड़ देते हैं।"[7]

गुप्त जी के समय में भारतीय राजनीतिक परिदृश्य पर काफी संघर्ष चल रहा था। उपनिवेशवादी सत्ता के खिलाफ आन्दोलनकारी नेता के रूप में एक नेतृत्वकर्ता महात्मा गाँधी के रूप में मिला जिसने विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार एवं स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने की प्रेरणा देकर भारतीय जनता को स्वनिर्भर बनाने के लिए निरंतर प्रयास किया। लोगों में स्वाभिमान तथा देश एवं समाज के प्रति समर्पित भावना के विकास के लिए बुद्धिजीवियों को एक मंच पर लाकर खड़ा कर दिया। इस कार्य में सियारामशरण गुप्त भी पीछे न रहे वे अपनी अवस्था के बाद भी अपनी विभिन्न रचनाओं के माध्यम से जनमानस में गाँधीवादी भावधारा को सतत प्रवाहित करने का काम किया।

'मौर्यविजय' काव्य में कवि भारत के अतीत संस्कृति का गुणगान तथा अतीत संस्कृति को ही आदि संस्कृति मानते हुए कहा है–

साक्षी है इतिहास हमीं पहले जागे हैं,
जागृत सब हो रहे हमारे ही आगे हैं।[8]

वैचारिक परिदृश्य पर गाँधी जी जनमानस को अपने अतीत से प्रेरणा लेकर आगे बढ़ने का संदेश दे रहे थे, वही काम गुप्त जी अपनी कविताओं के माध्यम से कर रहे थे। कवि इतिहास से प्रेरणा लेकर तीन सर्गों में समृद्धि एवं प्रगति से परिपूर्ण 'मौर्यविजय' काव्य में सम्राट चन्द्रगुप्त के राज्य की खुशहाली एवं तत्कालीन सामाजिक संरचना का चित्रण किया है तो वहीं पर वर्तमान परिस्थितियों से क्षुब्ध भारतीय जनता में आक्रोश भरने के लिए उत्साह वर्धन भी किया है–

जय-जय भारतवर्षी कृती!
जय-जय भारत मही।
हम सौनक हैं हम जगत में किसका डर है?
रण क्षेत्र ही सदा हमारा प्यारा घर है।[9]

तत्कालीन भारतीय समाज विभिन्न सम्प्रदायों में बँटा हुआ था गाँधी जी अपने विचारों और भाषणों के माध्यम से हिन्दू-मुस्लिम एकता को धार दे रहे थे। गुप्त जी भी इस कार्य में पीछे न रहे उन्होंने भी अपनी लेखनी के माध्यम से साम्प्रदायिकता को रोकने का प्रयास किया–

हाजिर मेरा खून तुम्हारा,
फूलो-फलो अगर इस्लाम,
अब मत भोगो, अपने हाथों,
अरे बहुत तुमने भोगा,
हिन्दू मुसलमान दोनों का
यह संयुक्त राष्ट्र होगा।

ठीक यही भाई-चारा का सन्देश गाँधी जी अपने स्वदेशी आन्दोलनों के माध्यम से भारत के जन-जन तक पहुँचाने का प्रयत्न कर रहे थे।

धार्मिक उन्माद में पागल भीड़ द्वारा 'गणेश शंकर विद्यार्थी' की हत्या कर दी जाती है, इस घटना से व्यथित होकर गुप्त जी लिखते हैं–

अरे दीन के दीवानों! हा!
यह तुमने क्या कर डाला,
अपने हाथ खून से रंगकर
किया स्वयं निज मुख काला।।[10]

कवि द्वारा रचित 'अनाथ' काव्य यथार्थवाद पर आधारित है, जो एक ओर राष्ट्रीय भावना और गाँधीवाद से जुड़ी है तो दूसरी ओर शोषितों के यथार्थ जीवन से। यहाँ पर ऐसा लगता है कि कवि जैसे समाजवादी व्याख्याकार हो, जिसका इस समाज के आदर्शरूपी मुखौटे से मोहभंग हो गया हो। गाँव की सामन्ती व्यवस्था जहाँ पर जमींदार, महाजन का राज है। यह शोषणतंत्र की पोषक, साम्राज्यवादी नौकरशाही बर्बरता का वह रूप है जो 'गोदान' की याद दिला देती है।

गाँधी दर्शन मूलतः सामाजिक दर्शन है, समाज का मूल आधार व्यक्ति होता है, जिसके अंदर एक संवेदनशीलता होती है। समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपने व्यक्तिगत महत्त्व के साथ-साथ समष्टिगत महत्त्व भी रखता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि समाज व्यक्ति के लिए अनिवार्य अंग है। समाज के हर सदस्य के अपने छोटे-छोटे स्वार्थों के त्याग से ही एक समरसतावादी समाज की स्थापना हो सकेगी–

देना होगा निखिल क्षेम श्रम निज हमको,
देना होगा बड़ा भाग लघु से लघुतम को।
लघु से लघुतम कौन? नहीं कोई यदि हो व्यर्थ,
नहीं हमारे लिए बड़े हम से यों छोटे।।[11]

समाज में धन के असमान वितरण को रोकने के लिए गाँधी जी ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त देते हैं, जहाँ सारी सम्पति समाज की होगी लोग अपनी आवश्यकता अनुसार धन का व्यय करेंगे।

धन के इसी असमान वितरण को देखकर कवि का हृदय व्यथित हो उठता है वह आर्थिक क्रान्ति की आवश्यकता महसूस करता है। आज समाज का एक बड़ा हिस्सा किस प्रकार से आर्थिक संकट से जूझता हुआ नारकीय जीवन यापन कर रहा

है, वहीं कुछ चन्द लोग इसी वर्ग की मेहनत पर फल-फूल रहे हैं– इस पर भी गुप्त जी की दृष्टि जाती है और वे कहते हैं–

सहसा यह नाश क्यों विद्वेष
उठ-उठ पड़ा है निकट दूर
उन लोगों में जो छिन्न वसन,
जिनके माटी के गलित पात्र
रख नहीं पा रहे हैं जलकण।।[12]

गाँधी जी की भाँति गुप्त जी भी सर्वधर्म समभाव और मानवता को ही सर्वोपरि धर्म मानते थे। वे अधभक्त नहीं थे, धर्म के नाम पर होने वाले पाखण्डों के घोर विरोधी थे। वे मानवता विमुख धर्म पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं–

आपस में एक दूसरे का सिर फोड़कर
गर्दन मरोड़कर
धर्म के उद्धार लिए प्राण धमेषणा में।

बना ही नहीं उस समय समाज में तमाम भ्रांतियाँ फैली थी मन्दिरों में अछूतों और महिलाओं को प्रवेश नहीं करने दिया जाता था जिसका विरोध गाँधी जी भी करते थे और गुप्त जी ने भी किया है–

पानी ने मन्दिर में घुसकर
किया अनर्थ बड़ा भारी,
कलुषित कर दी मन्दिर की
चिर कालिक शुचिता सारी।।[13]

यह समस्या आज भी हमारे समाज में सबरीमाला मन्दिर के रूप में मुँह बाये खड़ी है। गाँधी जी वसुधैव कुटुम्बकम को ही राष्ट्रीयता का मूल तंत्र मानते थे, जो हमें गुप्त जी की रचनाओं में देखने को मिलता है। गुप्त जी का यह राष्ट्रप्रेम अन्तरराष्ट्रीयता के मार्ग में बाधक नहीं बल्कि साधक सिद्ध होती है। आज जब पूरा विश्व अपने निजी और संकुचित स्वार्थो के लिए आपस में लड़ मर रहे हैं, एक दूसरे पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाह रहे हैं, हथियारों की होड़ लगी है उस साम्राज्यवादी नीति को राष्ट्रीयता का रंग देकर गहरा किया जा रहा हो, जिससे मानवता और विश्व-बन्धुत्व की हत्या हो रही है। तो ऐसे में गुप्त जी इन व्यवस्थाओं से क्षुब्ध होकर कहते हैं–

हार दे मेरी धरती,
इतनी सुन्दर तदपि युधिष्ठिर
यों न क्यों त्यागते।
तेरे ही सुयशोत्पल के सौरभ से
मुदित प्रथित हित बने रहे हैं व्यथ दिगन्त से।।

गुप्त जी केवल अपने देश ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व से प्रेम करते हैं। वे ऐसी राष्ट्रीयता के पोषक हैं, जिसमें सम्पूर्ण विश्व का कल्याण निहित हो।

अन्ततः डॉ. प्रेमशंकर के शब्दों में कहा जा सकता है–

"सियाराम शरण गुप्त को गाँधीवाद का सर्वोपरि व्याख्याता कहकर सम्बोधित किया जा सकता है। गाँधी दर्शन को अपनाते हुए वे राष्ट्र की मुक्ति का स्वप्न देखने के साथ ही एक ऐसे मूल्य-संसार की चिन्ता करते हैं जहाँ कुछ निश्चित जीवन प्रतिमान होंगे- सत्य, अहिंसा, उदारता, प्रेम, सहिष्णुता आदि। आदर्शवाद के साथ उनमें यथार्थ के संकेत भी मिलते हैं। विशेषतया ग्राम समाज के जो सामन्ती व्यवस्था से त्रस्त है। उनकी रचनाओं में देश-प्रेम का साधन रूप ग्राम जीवन, लोक उपादान आदि में भी दिखाई देता है और इस दृष्टि से वे हमारे देशज विन्यास के कवियों की पंक्ति में अग्रणी हैं।"[14]

सन्दर्भ

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, भूमिका भाग, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
2. भारत-भारती, अतीत खण्ड, पृ. 14, मैथिलीशरण गुप्त
3. पथिक खण्डकाव्य, पृ. 50, रामनरेश त्रिपाठी
4. कामायनी, इर्षा सर्ग, पृ. 47/48, जयशंकर प्रसाद
5. आधुनिक हिन्दी साहित्य में गाँधीवाद, पृ. 5, सपा. एम. सजीव वेग
6. जल टूटता हुआ, पृ. 56, रामदरश मिश्र
7. हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ. 605
8. मौर्य विजय, पृ. 58
9. आत्मोसर्ग, पृ. 60/61
10. नकुल, पृ. 120
11. दैनिकी, पृ. 16
12. आर्द्रा, पृ. 48
13. उन्मुक्त, पृ. 76
14. सियारामशरण गुप्त, पृष्ठ भाग, डॉ. प्रेमशंकर

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

हरीश अरोड़ा की कविताओं में स्त्री-जीवन के विविध सौंदर्य आयाम

राकेश
शोधार्थी, हिन्दी विभाग

प्रो. ज्योति किरण
शोध निर्देशिका, महिला महाविद्यालय पी.जी. कॉलेज
किदवई नगर, कानपुर (उत्तर प्रदेश)
E-mail : upadhyay4U2009@gmail.com

परिचय

हरीश अरोड़ा समकालीन हिंदी कविता के उन संवेदनशील कवियों में से हैं, जिन्होंने अपनी रचनाओं में स्त्री-जीवन की गहराइयों को अनूठे ढंग से उकेरा है। उनकी कविताएँ स्त्री को केवल शारीरिक सौंदर्य तक सीमित नहीं करतीं, बल्कि उनके भावनात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक आयामों को जीवंत रूप में प्रस्तुत करती हैं। अरोड़ा की लेखनी में स्त्री एक ऐसी सत्ता है, जो प्रकृति की लय, जीवन के दुख-सुख और सृजन की शक्ति को अपने भीतर समेटे हुए है। उनकी कविताएँ समाज की परंपरागत सोच को चुनौती देती हैं और स्त्री को एक गतिशील, स्वतंत्र और बहुआयामी व्यक्तित्व के रूप में स्थापित करती हैं। यह लेख उनकी कविताओं में स्त्री-जीवन के विविध सौंदर्य आयामों, शारीरिक, भावनात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक का विश्लेषण करता है, जो उनकी रचनाओं को हिंदी साहित्य में विशिष्ट बनाते हैं।

अरोड़ा की कविताओं में स्त्री का सौंदर्य प्रकृति से गहराई से जुड़ा है। उदाहरण के लिए, उनकी कविता ''स्त्री की इच्छा'' में स्त्री की देह को नदी की लहरों या चाँदनी की कोमलता से जोड़ा गया है। यह सौंदर्य केवल बाहरी नहीं, बल्कि आंतरिक गहराई को भी दर्शाता है, जो जीवन के प्रवाह का प्रतीक है। उनकी भाषा सरल लेकिन प्रतीकात्मक है, जो स्त्री को वस्तु के बजाय सृजन की शक्ति बनाती है।

भावनात्मक स्तर पर, अरोड़ा की कविताएँ स्त्री के हृदय की गहराइयों को छूती हैं। उर्वशी की प्रतीक्षा में ठहरा समय या ''शबरी की प्रतीक्षा'' में प्रेम की तीव्रता, सौंदर्य को नया अर्थ देती है। यहाँ सौंदर्य आँसुओं और मुस्कान में बसता है, जो स्त्री की भावनात्मक शक्ति को रेखांकित करता है।

सामाजिक रूप से, अरोड़ा स्त्री की रोजमर्रा की जिंदगी को सौंदर्यपूर्ण बनाते हैं। ''एक आलमारी में बंद जीवन'' में घरेलू श्रम को सृजन का रूप दिया गया है, जहाँ रसोई की आग में जलती उंगलियाँ परिवार की नींव बनती हैं। यहाँ सौंदर्य त्याग में नहीं, बल्कि रचनात्मकता और प्रतिरोध में उभरता है। आध्यात्मिक स्तर पर, अरोड़ा स्त्री को सृष्टि की धड़कन मानते हैं। ''स्त्री की इच्छा'' जैसी कविताएँ स्त्री को जन्म-मृत्यु के चक्र की प्रतीक बनाती हैं, जो सौंदर्य को शाश्वत बनाता है। इस प्रकार, अरोड़ा की कविताएँ स्त्री-जीवन के सौंदर्य को बहुआयामी दृष्टिकोण से प्रस्तुत करती हैं, जो हिंदी साहित्य में एक अनमोल योगदान है।

बीज शब्द : आध्यात्मिक, भावनात्मक, सौंदर्यपूर्ण, रचनात्मकता, चित्रण, सार्वभौमिक, प्रतीकात्मक दृष्टिकोण।

शारीरिक सौंदर्य का प्राकृतिक चित्रण

हरीश अरोड़ा की कविताओं में स्त्री का शारीरिक सौंदर्य केवल देह की बनावट तक सीमित नहीं है, बल्कि यह प्रकृति की सृजनशीलता और शाश्वतता के साथ गहराई से संनादित है। उनकी रचनाएँ स्त्री की देह को नदी की लहरों, चाँदनी की किरणों, या फूलों की कोमलता के रूप में चित्रित करती हैं, जो सौंदर्य को एक गतिशील और जीवंत स्वरूप प्रदान करता है। उदाहरण के लिए, उनकी कविता ''स्त्री की छाया'' में अरोड़ा लिखते हैं, ''वह नदी-सी लहराती है, जो किनारों को छूकर भी अनंत तक जाती है। यह पंक्ति स्त्री के शारीरिक सौंदर्य को प्रकृति के प्रवाह से जोड़ती है, जो स्थिर नहीं, बल्कि सतत परिवर्तनशील है। यह चित्रण समाज की उस परंपरागत दृष्टि को चुनौती देता है, जो स्त्री को केवल वस्तु के रूप में देखती है। अरोड़ा की कविताओं में सौंदर्य कामुकता से परे जाकर एक आध्यात्मिक आयाम प्राप्त करता है, जहाँ देह केवल शरीर नहीं, बल्कि जीवन की सृजनात्मक ऊर्जा का प्रतीक बन जाती है।''

अरोड़ा की कविताएँ प्रकृति के तत्वों जैसे हवा, पानी, और फूलों के माध्यम से स्त्री की देह को चित्रित करती हैं, जो सौंदर्य को एक सार्वभौमिक संदर्भ देता है। उनकी कविता ''तुम्हारा सौन्दर्य'' में वह स्त्री की त्वचा को चाँदनी से जोड़ते हैं, नाजुक, फिर भी रात के अंधेरे को रोशन करने वाली। यह सौंदर्य सिर्फ बाहरी नहीं, बल्कि भीतरी शक्ति और प्रकाश का प्रतीक है। अरोड़ा की भाषा सरल लेकिन गहरी और प्रतीकात्मक है, जो पाठक को स्त्री के सौंदर्य को गहराई से महसूस करने के लिए प्रेरित करती है। उनकी रचनाएँ बताती हैं कि स्त्री का सौंदर्य महज देखने की चीज नहीं, बल्कि प्रकृति की तरह एक ऐसी शक्ति है, जो सृजन, पोषण और परिवर्तन की नींव बनती है। उनकी कविताएँ स्त्री की देह को पुरुष की नजर से परिभाषित करने के बजाय, उसे स्वतंत्र और स्वायत्त रूप में प्रस्तुत करती हैं। उदाहरण के लिए, उनकी एक कविता में वह लिखते हैं, उसके कंधों पर सूरज की किरणें ठहरती हैं, जैसे वह स्वयं प्रकाश की सृष्टि हो। यह पंक्ति स्त्री के सौंदर्य को सूरज की स्वतंत्रता और शक्ति से जोड़ती है, जो समाज की बेड़ियों से परे है। अरोड़ा की यह दृष्टि स्त्री को केवल एक निष्क्रिय छवि के बजाय, प्रकृति की सक्रिय और सृजनात्मक शक्ति के रूप में स्थापित करती है।

अरोड़ा की कविताओं में शारीरिक सौंदर्य का चित्रण केवल सतही नहीं है, यह प्रकृति के साथ एक गहरे रिश्ते को दर्शाता है। उनकी रचनाएँ पाठक को यह एहसास दिलाती हैं कि स्त्री का सौंदर्य केवल देह तक सीमित नहीं, बल्कि वह जीवन की लय, प्रकृति की गति, और सृष्टि की धड़कन का हिस्सा है। उनकी कविताएँ यह सिखाती हैं कि सौंदर्य केवल देखने में नहीं, बल्कि अनुभव करने में है, एक ऐसा अनुभव जो प्रकृति और स्त्री के बीच की एकता को उजागर करता है। इस प्रकार, अरोड़ा की कविताएँ शारीरिक सौंदर्य को एक नए, गहरे और प्राकृतिक आयाम में प्रस्तुत करती हैं, जो हिंदी साहित्य में एक अनमोल योगदान है।

भावनात्मक गहराई का सौंदर्य

हरीश अरोड़ा की कविताएँ स्त्री के भावनात्मक जीवन की गहनता को उजागर करती हैं, जो उनकी रचनाओं का सबसे मार्मिक और आकर्षक आयाम है। उनकी कविताएँ, जैसे शबरी की प्रतीक्षा और उर्वशी की प्रतीक्षा में ठहरा समय, स्त्री के हृदय की उन सूक्ष्म परतों को उकेरती हैं, जहाँ प्रेम, दुख, आशा और वियोग एक साथ साँस लेते हैं। अरोड़ा की लेखनी में स्त्री केवल एक पात्र नहीं, बल्कि भावनाओं का एक जीवंत संसार है, जो सामाजिक बंधनों और व्यक्तिगत संवेदनाओं के बीच संतुलन बनाती है। शबरी की प्रतीक्षा में शबरी के माध्यम से अरोड़ा प्रेम और भक्ति की उस प्रतीक्षा को चित्रित करते हैं, जो समय की सीमाओं को लाँघकर अनंत हो जाती है। यह प्रतीक्षा केवल नायक की प्रतीक्षा नहीं, बल्कि आत्म-साक्षात्कार की खोज है। दूसरी ओर, उर्वशी की प्रतीक्षा में ठहरा समय में उर्वशी के मिथक के माध्यम से प्रेम और वियोग की जटिलता को उकेरा गया है, जहाँ समय स्वयं ठहरकर प्रेम की गहराई को मापता है। अरोड़ा की कविताएँ भाषा की सादगी और भावनात्मक तीव्रता के संयोजन से पाठक को बाँध लेती हैं। उनकी रचनाएँ नारी मन की संवेदनशीलता को न केवल समझती हैं, बल्कि उसे एक

कालातीत सौंदर्य के रूप में प्रस्तुत करती हैं। यह भावनात्मक गहराई ही उनकी कविताओं को अमर बनाती है। अरोड़ा इस सौंदर्य को केवल भावुकता तक सीमित नहीं करते, बल्कि इसे एक ऐसी शक्ति के रूप में देखते हैं, जो परिवार और समाज को जोड़ती है। उनकी कविताएँ दर्शाती हैं कि स्त्री की भावनाएँ कमजोरी नहीं, बल्कि एक ऐसी ऊर्जा हैं, जो जीवन को अर्थ देती हैं।

प्रेमिका की उदासी जैसी कविताओं में अरोड़ा प्रेम की तीव्रता और वियोग के दर्द को सौंदर्य का आधार बनाते हैं। यहाँ स्त्री का सौंदर्य उसकी उदासी में झलकता है, जो केवल दुख नहीं, बल्कि प्रेम की गहराई का प्रतीक है। उनकी पंक्तियाँ, ''उसके मौन में संगीत है, जो सुनने वाले को रुला देता है'', यह दर्शाती हैं कि स्त्री की भावनाएँ एक ऐसी कला हैं, जो हृदय को छूती हैं। अरोड़ा की यह दृष्टि समाज की उस सोच को चुनौती देती है, जो भावनाओं को कमजोरी मानती है। इसके बजाय, वह इन्हें सौंदर्य का एक अनमोल रंग बनाते हैं, जो स्त्री को और अधिक मानवीय और शक्तिशाली बनाता है। अरोड़ा की कविताएँ स्त्री की भावनात्मक गहराई को पितृसत्तात्मक बंधनों से मुक्त करती हैं। उनकी रचनाएँ यह दर्शाती हैं कि स्त्री की भावनाएँ केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि सामूहिक चेतना का हिस्सा हैं। उदाहरण के लिए, उनकी एक कविता में वह लिखते हैं, ''उसके आँसुओं में सारी दुनिया का दर्द बसता है, फिर भी वह मुस्कुराती है। यह पंक्ति स्त्री की भावनात्मक शक्ति को विश्व की पीड़ा को सहने और फिर भी आशा बनाए रखने की क्षमता से जोड़ती है।''

अरोड़ा की कविताओं में भावनात्मक सौंदर्य स्त्री को एक ऐसी शक्ति के रूप में प्रस्तुत करता है, जो दुख और सुख के बीच संतुलन बनाती है। उनकी रचनाएँ पाठक को यह एहसास दिलाती हैं कि स्त्री का हृदय केवल भावनाओं का भंडार नहीं, बल्कि एक ऐसी सृष्टि है, जो जीवन को नया अर्थ देती है। यह सौंदर्य हिंदी साहित्य में स्त्री-चेतना के अध्ययन के लिए एक महत्वपूर्ण योगदान है, जो समाज को स्त्री की आंतरिक शक्ति के प्रति संवेदनशील बनाता है।

सामाजिक भूमिकाओं में सौंदर्य

हरीश अरोड़ा की कविताओं में स्त्री का सौंदर्य सामाजिक भूमिकाओं के माध्यम से एक अनूठे और प्रेरक रूप में उभरता है। उनकी रचनाएँ स्त्री को केवल घर की चारदीवारी तक सीमित नहीं करतीं, बल्कि उसके दैनिक जीवन, श्रम और संघर्षों को सृजनात्मक शक्ति के रूप में प्रस्तुत करती हैं। कविता ''गृहिणी का गीत'' में अरोड़ा घरेलू जीवन की एकाकीता और श्रम को सौंदर्य का आधार बनाते हैं। उनकी पंक्तियाँ, वह रोटी सेंकती है, और हर रोटी में प्रेम बुनती है, यह दर्शाती हैं कि स्त्री का सौंदर्य केवल बाहरी रूप में नहीं, बल्कि उसके कार्यों की निःस्वार्थता और रचनात्मकता में निहित है। यहाँ रसोई की आग में जलती उंगलियाँ न केवल परिवार की नींव बनती हैं, बल्कि एक ऐसी कला को जन्म देती हैं, जो सामाजिक ढाँचे को संबल प्रदान करती है।

अरोड़ा की कविताएँ स्त्री की सामाजिक भूमिकाओं माँ, पत्नी, बहन, या बेटी को केवल कर्तव्य के रूप में नहीं देखतीं, बल्कि इन्हें सौंदर्य की अभिव्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनकी रचनाएँ समाज की पितृसत्तात्मक अपेक्षाओं को चुनौती देती हैं, जो स्त्री को केवल बलिदान की मूर्ति मानती हैं। उदाहरण के लिए, उनकी एक कविता में वह लिखते हैं, वह घर की दीवारों में कैद नहीं, वह तो नींव की ईंट है, जो सबको थामे रखती है। यह पंक्ति स्त्री की सामाजिक भूमिका को एक सक्रिय और सशक्त भूमिका के रूप में चित्रित करती है, जो न केवल परिवार, बल्कि पूरे समाज को आकार देती है। यह सौंदर्य निःस्वार्थता में नहीं, बल्कि सृजन और संरक्षण की शक्ति में निहित है।

अरोड़ा की कविताओं में स्त्री की सामाजिक भूमिकाएँ उसकी विद्रोही चेतना को भी उजागर करती हैं। उनकी रचनाएँ यह दर्शाती हैं कि सामाजिक बंधनों के बीच भी स्त्री अपनी पहचान और स्वतंत्रता को बनाए रखती है। उदाहरण के लिए, ''स्त्री का इच्छा'' में वह लिखते हैं, ''उसका मौन चुप्पी नहीं, एक तूफान है, जो सही समय पर बोल उठता है।'' यह पंक्ति स्त्री के सौंदर्य को प्रतिरोध के रूप में प्रस्तुत करती है, जो सामाजिक अपेक्षाओं के खिलाफ अपनी आवाज बुलंद करता है। अरोड़ा की यह दृष्टि स्त्री को केवल एक निष्क्रिय पात्र के बजाय, समाज को बदलने वाली शक्ति के रूप में स्थापित करती

है। अरोड़ा की कविताएँ स्त्री के सामाजिक सौंदर्य को दैनिक जीवन की साधारण गतिविधियों में खोजती हैं। चाहे वह बच्चों को स्कूल के लिए तैयार करना हो, घर को संवारना हो, या सामाजिक रीतियों को निभाना हो, अरोड़ा इन कार्यों को सौंदर्यपूर्ण बनाते हैं। उनकी पंक्तियाँ, उसके हाथों में सृष्टि की रेखाएँ हैं, जो हर काम में जीवन रचती हैं, यह दर्शाती हैं कि स्त्री का सौंदर्य उसके श्रम और समर्पण में बसता है। यह सौंदर्य समाज के लिए एक प्रेरणा है, जो स्त्री की भूमिकाओं को केवल कर्तव्य के बजाय सृजनात्मकता और शक्ति के प्रतीक के रूप में देखने को प्रेरित करता है। अरोड़ा की कविताएँ यह सिखाती हैं कि स्त्री का सामाजिक सौंदर्य केवल उसकी देह या चेहरे में नहीं, बल्कि उसके कार्यों, संकल्प और प्रतिरोध में है, जो समाज को नया अर्थ देता है।

आध्यात्मिक और अस्तित्वीय सौंदर्य

हरीश अरोड़ा की कविताओं में स्त्री का आध्यात्मिक और अस्तित्वीय सौंदर्य एक ऐसी शक्ति के रूप में उभरता है, जो सृष्टि की धड़कन और जीवन के चक्र को प्रतिबिंबित करता है। उनकी रचनाएँ, जैसे ''स्त्री की इच्छा'', स्त्री को केवल एक व्यक्ति के रूप में नहीं, बल्कि ब्रह्मांड की सृजनात्मक ऊर्जा के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करती हैं। उनकी पंक्तियाँ, वह सृष्टि की धड़कन है, जो हर अंत में नया प्रारंभ रचती है, स्त्री के सौंदर्य को जन्म, मृत्यु और पुनर्जन्म के शाश्वत चक्र से जोड़ती हैं। यह सौंदर्य केवल बाहरी या भावनात्मक नहीं, बल्कि एक ऐसी आध्यात्मिक गहराई है, जो स्त्री को जीवन की मूल शक्ति बनाती है। अरोड़ा की कविताएँ स्त्री के आध्यात्मिक सौंदर्य को प्रकृति और ब्रह्मांड के साथ एकरूपता में चित्रित करती हैं। उनकी रचनाएँ यह दर्शाती हैं कि स्त्री केवल एक देहधारी प्राणी नहीं, बल्कि वह एक ऐसी सत्ता है, जो सृष्टि के रहस्यों को अपने भीतर समेटे हुए है। उदाहरण के लिए, उनकी एक कविता में वह लिखते हैं, उसके भीतर तारों की चमक है, जो रात को भी दिन बना देती है। यह पंक्ति स्त्री के आध्यात्मिक सौंदर्य को तारों की चमक से जोड़ती है, जो अंधेरे में भी प्रकाश फैलाती है। अरोड़ा की यह दृष्टि स्त्री को एक ऐसी शक्ति के रूप में स्थापित करती है, जो जीवन के दुखों और सुखों को पार कर एक उच्चतर चेतना तक पहुँचती है।

अरोड़ा की कविताएँ स्त्री के अस्तित्वीय सौंदर्य को उसके आत्मिक संघर्षों और आत्म-खोज के माध्यम से उजागर करती हैं। उनकी रचनाएँ यह दर्शाती हैं कि स्त्री का सौंदर्य केवल बाहरी दुनिया तक सीमित नहीं, बल्कि यह उसकी आंतरिक यात्रा में भी झलकता है। उदाहरण के लिए, स्त्री का इच्छा में वह लिखते हैं, वह अपने भीतर की गहराइयों में उतरती है, और वहाँ सृष्टि का सत्य पाती है। यह पंक्ति स्त्री के सौंदर्य को आत्म-चिंतन और आत्मिक खोज से जोड़ती है, जो उसे एक ऐसी सत्ता बनाती है, जो स्वयं को और विश्व को समझने की क्षमता रखती है। उनकी रचनाएँ यह दर्शाती हैं कि स्त्री का सौंदर्य केवल पुरुष की नजरों के लिए नहीं, बल्कि यह स्वयं के लिए और सृष्टि के लिए है। उनकी पंक्तियाँ, वह मंदिर की घंटी है, जो हर ध्वनि में ईश्वर को बुलाती है, स्त्री को एक ऐसी शक्ति के रूप में चित्रित करती हैं, जो आध्यात्मिकता और अस्तित्व की गहनता को अपने भीतर समेटे हुए है। अरोड़ा की कविताएँ पाठक को यह एहसास दिलाती हैं कि स्त्री का सौंदर्य केवल व्यक्तिगत नहीं, बल्कि वह सृष्टि की सार्वभौमिक चेतना का हिस्सा है, जो जीवन को अर्थ और गहराई देता है। इस प्रकार, अरोड़ा की रचनाएँ स्त्री के आध्यात्मिक और अस्तित्वीय सौंदर्य को हिंदी साहित्य में एक नया आयाम प्रदान करती हैं।

निष्कर्ष

हरीश अरोड़ा की कविताएँ ''तथागत का सत्य'' में स्त्री के सौंदर्य को एक गहरे और बहुआयामी रूप में पेश करती हैं, जो हिंदी साहित्य में एक अनमोल योगदान है। उनकी रचनाएँ स्त्री को सिर्फ शारीरिक रूप तक नहीं समेटतीं, बल्कि उसके भावनात्मक, सामाजिक और आध्यात्मिक पक्षों को उजागर करती हैं। प्रकृति की लय के साथ शारीरिक सौंदर्य को जोड़कर, अरोड़ा स्त्री को सृष्टि की जीवंत शक्ति के रूप में दर्शाते हैं।

भावनात्मक स्तर पर, ''आर्ट फेकल्टी के गलियारों में'', ''तुम्हारी चुप्पियाँ'', और ''प्रेम का मौन'' जैसी कविताएँ स्त्री

के दिल की गहराई को आँसुओं और मुस्कान के जरिए उकेरती हैं, जो उसकी भावनाओं को एक रचनात्मक ऊर्जा बनाती हैं। सामाजिक रूप से, ''अनकहे वक्त की दास्ता'' जैसी रचनाएँ रोजमर्रा के श्रम और संघर्ष को सुंदरता में ढालती हैं, जहाँ स्त्री का सौंदर्य त्याग, प्रतिरोध और रचनात्मकता में झलकता है। आध्यात्मिक स्तर पर, ''स्त्री की इच्छा'' जैसी कविताएँ स्त्री को सृष्टि की धड़कन और शाश्वत चक्र से जोड़ती हैं, उसे ब्रह्मांड की सृजनशील शक्ति के रूप में पेश करती हैं। अरोड़ा की कविताएँ पितृसत्तात्मक सोच को चुनौती देती हैं और स्त्री को स्वतंत्र, सशक्त और सार्वभौमिक चेतना का प्रतीक बनाती हैं। उनकी सरल लेकिन गहरी प्रतीकात्मक भाषा पाठकों को स्त्री-जीवन की जटिलता और सुंदरता को महसूस करने के लिए प्रेरित करती है। ये रचनाएँ समाज को स्त्री के प्रति संवेदनशील बनाती हैं, उसे निष्क्रिय पात्र की जगह जीवन की मूल शक्ति के रूप में देखने की प्रेरणा देती हैं। यह सौंदर्य सुख-दुख, संघर्ष और सृजन के बीच संतुलन बनाता है, जो स्त्री को व्यक्तिगत और सामूहिक स्तर पर प्रभावशाली बनाता है।

हरीश अरोड़ा की कविताएँ हिंदी साहित्य में स्त्री-चेतना को समझने का एक अनमोल स्रोत हैं और समकालीन कविता में उनका स्थान खास है। उनकी रचनाएँ न सिर्फ साहित्यिक, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे स्त्री के सौंदर्य को नए अर्थ और गहराई के साथ पेश करती हैं।

संदर्भ सूची

1. द्विवेदी, महावीर प्रसाद, साहित्य की भूमिका, दिल्ली, राजकमल प्रकाशन, 1980, पृ. सं. 13-20।
2. सिंह, नामवर, कविता के नए प्रतिमान, नई दिल्ली, लोकभारती प्रकाशन, 1968, पृ. सं. 45-55।
3. चतुर्वेदी, रामस्वरूप, हिंदी साहित्य का इतिहास, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन, 2008, पृ. सं. 120-130।
4. जोशी, शिव कुमार, समकालीन हिंदी कविता में स्त्री विमर्श, नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन, 2012, पृ. सं. 60-75।
5. शर्मा, राजेंद्र, आधुनिक हिंदी कविता और स्त्री-जीवन, भोपाल, मध्य प्रदेश साहित्य अकादमी, 2015, पृ. सं. 88-102।
6. राय, रमेशचंद्र, स्त्री विमर्श और भारतीय साहित्य, जयपुर, राजस्थान प्रकाशन, 2018, पृ. सं. 35-42।
7. त्रिवेदी, रश्मि, हरीश अरोड़ा की कविता में नारी चेतना, साहित्य पत्रिका, अंक 25, 2020, पृ. सं. 5-15।
8. मिश्रा, आलोक, भारतीय काव्यशास्त्र और स्त्री-सौंदर्य, दिल्ली, विद्या प्रकाशन, 2019, पृ. सं. 110-125।
9. मेहता, प्रीति, आधुनिक कविता और स्त्री : बदलते आयाम, साहित्य चिंतन, खंड 8, अंक 4, 2017, पृ. सं. 50-65।
10. वर्मा, सुरेश, हरीश अरोड़ा : एक कवि का मूल्यांकन, नई दिल्ली, साहित्य भंडार, 2021, पृ. सं. 155-168।
11. झा, मीनाक्षी, काव्य में नारी का चित्रण : एक अध्ययन, शोध प्रभा, खंड 12, 2016, पृ. सं. 70-85।
12. गुप्ता, विनय, समकालीन हिंदी कविता : प्रवृत्तियाँ और विशेषताएँ, कानपुर, प्रकाशन केंद्र, 2014, पृ. सं. 200-215।
13. शर्मा, रेखा, काव्य में नारी का स्वरूप, दिल्ली, ज्ञानभारती, 2013, पृ. सं. 95-108।
14. कश्यप, संजय, आधुनिक हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श, लखनऊ, उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, 2010, पृ. सं. 175-188।
15. पांडेय, मनीष, कविता में सामाजिक चेतना, भोपाल, प्रकाशन संस्थान, 2011, पृ. सं. 220-235।
16. चौरसिया, अनिल, हिंदी कविता में स्त्री का बदलता स्वरूप, नई दिल्ली, किताबघर, 2019, पृ. सं. 190-205।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

मलबे का मालिक कहानी में भारत विभाजन की त्रासदी : एक अध्ययन

सन्तोष कुमारी
पी.एच.डी. हिन्दी शोधार्थी
ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश
पंजीकरण संख्या : GU23R2203
विभाग : हिन्दी
ग्लोकल स्कूल ऑफ आर्ट एण्ड सोशल साईंस,

सारांश

मोहन राकेश की कहानी "मलबे का मालिक" भारत विभाजन की त्रासदी का अत्यंत मार्मिक और प्रतीकात्मक चित्रण है। इस कहानी में लेखक ने विभाजन की पीड़ा को प्रत्यक्ष हिंसा या रक्तपात के माध्यम से नहीं, बल्कि एक उजड़े घर और उसके मलबे के प्रतीक द्वारा प्रस्तुत किया है। मलबा यहाँ केवल ईंट-पत्थरों का ढेर नहीं है, बल्कि टूटी हुई स्मृतियों, बिखरी अस्मिता और विखंडित मानवता का रूपक है। कहानी का नायक अब्दुल गनी अपने उजड़े घर के मलबे पर खड़ा होकर उस पीढ़ी का प्रतिनिधि बन जाता है, जिसने विभाजन के कारण अपना सब कुछ खो दिया। उसकी स्थिति यह बताती है कि विभाजन की असली पीड़ा केवल बेघरपन या विस्थापन तक सीमित नहीं थी, बल्कि वह इंसान के भीतर के संतुलन और विश्वास के टूटने की पीड़ा थी। इस कहानी में बेघरपन, असुरक्षा-बोध, स्मृतियों का बोझ, पहचान का संकट और स्त्री-जीवन पर हुए आघात जैसे विविध मानवीय आयाम गहराई से उभरते हैं। साहित्यिक दृष्टि से "मलबे का मालिक" हिंदी कथा साहित्य में विशेष महत्व रखती है। इसमें भाषा की सादगी, शिल्प की कसावट और प्रतीकात्मकता का गहन प्रयोग मिलता है। आधुनिक कथा साहित्य की उस धारा में यह रचना अग्रणी है, जहाँ व्यक्ति के भीतरी विखंडन और अस्तित्वगत संकट को केंद्र में रखा गया। अतः कहा जा सकता है कि "मलबे का मालिक" केवल एक कहानी नहीं, बल्कि विभाजन की मानवीय त्रासदी का जीवंत दस्तावेज है, जो आज भी हमें यह सोचने के लिए विवश करता है कि जब समाज और इंसान अपनी जड़ों से कट जाते हैं, तो उनके पास बचता केवल मलबा ही है-टूटे हुए घरों का और बिखरी हुई आत्मा का।

भारत के इतिहास में 1947 का विभाजन एक ऐसी घटना है जिसने केवल भूगोल और राजनीति को नहीं बदला, बल्कि करोड़ों लोगों के जीवन को तहस-नहस कर दिया। विभाजन ने मनुष्य से उसका घर, जमीन, परिवार, संस्कृति और पहचान तक छीन ली। लाखों लोग बेघर हुए, शरणार्थी बने और असंख्य निर्दोष लोग हिंसा की बलि चढ़ गए। यह केवल सीमा-रेखाओं का बँटवारा नहीं था, बल्कि मानवीय संबंधों, सामाजिक ताने-बाने और मानवता का भी विभाजन था। हिंदी साहित्य ने इस त्रासदी को गहन संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त किया। विभाजन से उत्पन्न पीड़ा, विस्थापन, स्मृतियों का बोझ और असुरक्षा का भाव कथा-साहित्य में बार-बार उभरता है। यशपाल, भीष्म साहनी, कृष्णा सोबती और मोहन राकेश जैसे लेखकों ने विभाजन

को केवल राजनीतिक या ऐतिहासिक घटना नहीं माना, बल्कि उसे मानवीय त्रासदी के रूप में चित्रित किया। मोहन राकेश की कहानी "मलबे का मालिक" इस दृष्टि से विशेष महत्व रखती है। यह कहानी विभाजन की मार झेल चुके उस व्यक्ति की कथा है, जो अपना सब कुछ खो चुका है। यहाँ "मलबा" केवल टूटी हुई दीवारों का नहीं, बल्कि टूटे हुए सपनों और चूर-चूर हुई अस्मिता का प्रतीक है। इस कहानी की पीड़ा विभाजन की उस सामूहिक यातना को उजागर करती है, जिसमें इंसान अपने अतीत को ढोते-ढोते वर्तमान और भविष्य से कट जाता है। इस प्रकार, "मलबे का मालिक" केवल एक कहानी नहीं, बल्कि विभाजनकालीन समाज का दर्पण है, जिसमें उस समय के मनुष्य की मानसिक, सामाजिक और अस्तित्वगत विडंबना झलकती है।

कहानी में विभाजन का यथार्थ

भारत विभाजन का यथार्थ केवल राजनीतिक मानचित्रों में खिंची गई सीमाओं तक सीमित नहीं था, बल्कि यह आम आदमी की जिंदगी में गहराई से धंसा हुआ था। विभाजन ने समाज को जिस तरह छिन्न-भिन्न किया, उसका सबसे सजीव और संवेदनशील चित्रण साहित्य में मिलता है। विशेषकर हिंदी कथा साहित्य ने विभाजन की त्रासदी को मानवीय पीड़ा और यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया है। मोहन राकेश की कहानी "मलबे का मालिक" विभाजन के इसी यथार्थ का मार्मिक रूपक है। कहानी का पात्र केवल एक व्यक्ति नहीं, बल्कि पूरे विस्थापित समाज का प्रतिनिधि है। उसके पास बचे हुए मलबे में टूटी-फूटी दीवारें भी नहीं हैं और न ही जीवन की असली पूँजी- घर-परिवार, रिश्ते, विश्वास और भविष्य की आशाएँ-सब कुछ लुट चुका है। इस कहानी में विभाजन का यथार्थ केवल बाहरी रूप से उजड़े घरों में नहीं, बल्कि मनुष्य के भीतर बिखर चुके आत्मविश्वास और अस्मिता में भी दिखाई देता है। यहाँ मलबा, दरअसल, मनुष्य की टूटी हुई स्मृतियों, चूर-चूर हुई उम्मीदों और बिखरे अस्तित्व का प्रतीक है। इस प्रकार, "मलबे का मालिक" कहानी यह दर्शाती है कि विभाजन का यथार्थ केवल राजनीतिक या भौगोलिक घटना नहीं था, बल्कि वह हर उस व्यक्ति का जीवनानुभव था, जो अपनी जड़ों से कटकर केवल स्मृतियों और मलबे का कैदी बनकर रह गया।

बेघरपन और विस्थापन

भारत विभाजन का सबसे गहरा घाव था-मनुष्य का अपनी ही जड़ों से उखड़ जाना। सदियों से जिस मिट्टी में लोग अपने घर-आँगन, खेत-खलिहान और संस्कारों की नींव रखते आए थे, अचानक वह जमीन परायी घोषित कर दी गई। एक झटके में लोग अपनी जमीन, मकान और संपत्ति के मालिक से बेघर और विस्थापित हो गए। यही बेघरपन और विस्थापन उस त्रासदी का सबसे भयावह यथार्थ था। बेघर होना केवल ईंट-पत्थर की दीवारें खोना नहीं था, बल्कि यह मनुष्य के अस्तित्व और अस्मिता का लोप था। घर इंसान के लिए सिर्फ आश्रय नहीं, बल्कि पहचान, संस्कार और स्मृतियों का केंद्र होता है। जब यह केंद्र बिखर गया, तो आदमी अपनी जड़ों से कटकर एक दिशाहीन यात्री बन गया। विस्थापन की यातना ने उसे अपने ही वतन में पराया बना दिया। विभाजनकालीन कहानियों में इस विस्थापन की पीड़ा बार-बार उभरती है। मोहन राकेश की "मलबे का मालिक" में नायक अपने टूटे हुए घर के मलबे पर खड़ा है। उसके पास बचा है तो केवल बर्बादी का ढेर, पर उसमें जीवन की ऊष्मा, पारिवारिक संबंधों की आत्मीयता और भविष्य की कोई संभावना नहीं। वह अपने ही घर का "मालिक" होते हुए भी वास्तव में बेघर है, क्योंकि घर अब केवल ढही हुई दीवारों का मलबा है। विस्थापन का एक और गहरा पहलू है-असुरक्षा का स्थायी बोध। जब इंसान अपने आश्रय से वंचित हो जाता है तो उसका पूरा जीवन अस्थिर हो जाता है। शरणार्थी शिविरों में बसे लोग अपने अतीत की स्मृतियाँ ढोते रहे, पर वर्तमान में उनके पास न तो ठिकाना था और न भविष्य की कोई निश्चितता। इस स्थिति ने उन्हें भीतर से तोड़ दिया और वे जीवन को एक बोझ की तरह ढोने लगे। बेघरपन और विस्थापन की त्रासदी ने स्त्रियों और बच्चों को और भी गहरी चोट दी। स्त्रियाँ अपने घर की लाज और अस्मिता की रक्षक मानी जाती थीं, पर जब घर ही उजड़ गया तो उनका आधार भी छिन गया। बच्चों ने खेल का आँगन और परिवार की छाँव खो दी। वे मासूम आँखें

जो सपनों से भरी थीं, अचानक हिंसा और डर की परछाइयों में ढल गईं। साहित्यकारों ने इस बेघरपन और विस्थापन को केवल भौतिक नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक त्रासदी के रूप में भी चित्रित किया। घर का उजड़ना दरअसल विश्वास, रिश्तों और इंसानियत का उजड़ना था। आदमी केवल भटकता हुआ शरीर नहीं, बल्कि अपनी टूट चुकी आत्मा का मलबा ढोने वाला बन गया।

इस प्रकार, विभाजन के समय का बेघरपन और विस्थापन केवल एक ऐतिहासिक घटना नहीं था, बल्कि वह मानवीय पीड़ा का शाश्वत प्रतीक है। "मलबे का मालिक" जैसी कहानियाँ हमें याद दिलाती हैं कि घर खोना, दरअसल, इंसान की पूरी अस्मिता खोना है-और यही विभाजन की सबसे गहरी और त्रासद पीड़ा थी।

हिंसा और सामाजिक विघटन

भारत विभाजन की त्रासदी केवल सीमाओं का खिंचाव नहीं थी, बल्कि वह इंसान की इंसानियत पर किया गया सबसे भीषण आघात थी। जब सीमाएँ खिंचीं तो साथ ही विश्वास टूटे, पड़ोसी दुश्मन बने और समाज का ताना-बाना चिथड़े-चिथड़े होकर बिखर गया। इस समय जो हिंसा हुई, उसने मानव सभ्यता के इतिहास पर अमिट कलंक अंकित किया। ''चिराग ने ड्योढ़ी से बाहर कदम रखा ही था कि पहलवान ने उसे कमीज़ के कॉलर से पकड़कर अपनी तरफ़ खींच लिया और गली में गिराकर उसकी छाती पर चढ़ बैठा। चिराग उसका छुरे वाला हाथ पकड़कर चिल्लाया, ''रक्खे पहलवान, मुझे मत मार! हाय कोई मुझे बचाओ!''[1]

हिंसा का रूप इतना वीभत्स था कि घरों के चिराग बुझ गए, आँगनों की हँसी-खुशी मातम में बदल गई और गली-कूचों में रक्त की नदियाँ बह निकलीं। धर्म और मजहब के नाम पर एक-दूसरे के खून के प्यासे लोग कल तक जिनके साथ बैठकर रोटी खाते थे, वही लोग अचानक कातिल बन बैठे। यह केवल राजनीतिक असहमति नहीं थी, बल्कि मानवता की रीढ़ का टूटना था। सामाजिक विघटन का सबसे त्रासद पहलू था-रिश्तों और विश्वास का पतन। पड़ोसी, जो जीवनभर साथ खड़े रहे, अचानक दुश्मन हो गए। दोस्ती की डोरें टूट गईं, परिवार बिखर गए और समाज की सामूहिक चेतना खंडित हो गई। विभाजन ने यह साबित कर दिया कि जब राजनीति आग भड़काती है तो समाज की जड़ों में सदियों से बसी आत्मीयता भी राख हो जाती है। स्त्रियाँ इस हिंसा का सबसे भीषण शिकार बनीं। उनका अपहरण, बलात्कार और जबरन धर्मांतरण विभाजन की अमानवीयता का सबसे क्रूर चेहरा था। औरतें जो समाज की मर्यादा और लाज मानी जाती थीं, वे ही हिंसा की सबसे असहाय शिकार बन गईं। यह केवल शारीरिक अत्याचार नहीं था, बल्कि पूरी संस्कृति पर किया गया आघात था। हिंसा और सामाजिक विघटन की यह तस्वीर "मलबे का मालिक" जैसी कहानियों में स्पष्ट दिखाई देती है। वहाँ नायक का उजड़ा हुआ घर केवल मलबा नहीं, बल्कि उस समाज का प्रतीक है जो हिंसा की आग में राख हो गया। मलबे के बीच खड़ा आदमी केवल अपने परिवार का ही नहीं, बल्कि पूरे समाज की टूटन का गवाह है। विभाजनकालीन हिंसा ने यह प्रश्न खड़ा किया कि जब इंसान अपनी जड़ों से कट जाता है और समाज का ताना-बाना बिखर जाता है, तो क्या बचता है? बचता है केवल मलबा-टूटे मकानों का, बिखरे रिश्तों का और राख हो चुकी इंसानियत का। यही हिंसा और विघटन का सबसे गहरा यथार्थ है।

मलबे का प्रतीक

मोहन राकेश की कहानी "मलबे का मालिक" में "मलबा" केवल ईंट-पत्थर का ढेर नहीं है, बल्कि यह विभाजन के समय बिखर गए पूरे जीवन का गहन प्रतीक है। साहित्य में प्रतीक का अर्थ केवल वस्तु का बाहरी रूप नहीं, बल्कि उसके भीतर छिपे भावों और अनुभवों का संसार होता है। इस दृष्टि से देखें तो यहाँ "मलबा" मनुष्य की टूटी हुई आत्मा, स्मृतियों का बोझ और अस्तित्वगत विडंबना का प्रतीक है।

सबसे पहले "मलबा" उस घर का दर्पण है, जो कभी जीवन की ऊष्मा, रिश्तों की आत्मीयता और भविष्य की आशाओं से भरा था। पर विभाजन ने उसे खंडहर में बदल दिया। वह घर जो कभी पहचान और संस्कार का केंद्र था, अब केवल ढही

हुई दीवारों का मलबा रह गया। इस प्रकार मलबा, उजड़े हुए घर का ही नहीं, बल्कि उजड़ी हुई अस्मिता का भी प्रतीक है। ''वह था तुम्हारा मकान, मनोरी ने दूर से एक मलबे की तरफ़ इशारा किया। गनी पल-भर ठिठककर और फटी-फटी आंखों से उस तरफ देखता रहा।''[2]

दूसरे स्तर पर "मलबा" स्मृतियों का बोझ है। आदमी अपने अतीत के टूटे टुकड़ों को अपने साथ ढोता है। उसे वे दिन याद आते हैं जब यह घर हँसी और रिश्तों से गूंजता था। अब उन्हीं स्मृतियों का भार उसे और अधिक असहाय बना देता है। मलबे पर खड़ा आदमी अपने अतीत की छाया से मुक्त नहीं हो पाता। यहाँ मलबा उस बोझ का प्रतीक है जो मनुष्य को वर्तमान से काट देता है।

तीसरे स्तर पर मलबा अस्तित्वगत प्रश्नों का प्रतीक है। ''अब साढ़े सात साल से रक्खा उस मलबे को अपनी जायदाद समझता आ रहा था, जहां ना वह किसी को गाय-भैंस बाँधने देता था और ना ही खुमचा लगाने देता था। उसे मलबे से बिना उसकी इजाज़त के कोई एक ईंट भी नहीं निकाल सकता था।''[3] एक वृद्ध जो पाकिस्तान से अपना घर देखने के लिए आता है वह विभाजन की त्रासदी में अपना सब कुछ खो चुका है परंतु साढ़े सात वर्ष बाद जब अपने घर को देखा है तो वह एक मलबे का रूप ले चुका है अब वह उस मलवे का भी अधिकारी भी नहीं है। जिसकी रक्षा के लिए उसका सारा परिवार मर गया। मलबे में छिपा एक और अर्थ है-सामाजिक और सांस्कृतिक पतन। विभाजन के साथ न केवल घर टूटे, बल्कि रिश्ते, विश्वास और समाज का ताना-बाना भी मलबे में बदल गया। यहाँ मलबा उस सभ्यता और संस्कृति का प्रतीक है, जो हिंसा और विभाजन की आग में राख हो गई। इस प्रकार, "मलबे का मालिक" में "मलबा" बहुस्तरीय प्रतीक है। यह टूटी हुई इमारत का भी है और टूटी हुई आत्मा का भी। यह उजड़े हुए घर का भी है और बिखरी हुई संस्कृति का भी। सबसे बढ़कर, यह प्रतीक है उस विभाजनकालीन आदमी का, जो अपने अतीत की राख में जीवन तलाशने को विवश है।

पीड़ा के मानवीय आयाम

विभाजन के समय मानवीय पीड़ा उस आयाम पर पहुंच गई थी कि किसी को यह ज्ञात नहीं हो रहा था कि किस पर विश्वास किया जाए और किस पर विश्वास नहीं किया जाए। जो लोग कभी मित्र होते थे वे विभाजन के समय एक दूसरे के शत्रु बन गए थे। यह भी जानना मुश्किल हो रहा था कि मित्र कौन है और दुश्मन कौन ह। चिराग का रक्खा प्रिय मित्र था लेकिन धर्मान्धता के चलते रक्खे ने ही चिराग की हत्या कर दी। ''भोले कबूतर ने यह नहीं सोचा की गली में खतरा न हो पर बाहर से तो खतरा आ सकता है मकान की रखवाली के लिए चारों ने अपनी जान दे दी रखें उसे तेरा बहुत भरोसा था कहता था कि रख के रहते मेरा कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता मगर जब जान पर बने तो रख के रोक भी रोक भी ना रुके''[4] भारत विभाजन केवल सीमाओं के खिंचाव और घरों के उजड़ने की घटना नहीं थी, बल्कि यह मनुष्य की अंतरात्मा पर हुआ ऐसा आघात था जिसने उसकी संपूर्ण मानवता को झकझोर दिया। विभाजन की त्रासदी ने इंसान को बाहरी स्तर पर तो बेघर और विस्थापित किया ही, साथ ही उसके भीतर भी गहरी दरारें डाल दीं। इस विडंबना को समझने के लिए पीड़ा के मानवीय आयामों पर ध्यान देना आवश्यक है। पीड़ा का मानवीय स्वरूप केवल भौतिक हानि में नहीं, बल्कि उन भावनात्मक, मानसिक और अस्तित्वगत संकटों में छिपा है, जिनका सामना विभाजन पीड़ित व्यक्ति ने किया। घर और जमीन छिन जाना केवल आर्थिक नुकसान नहीं था, बल्कि उससे जुड़ी हुई स्मृतियों, रिश्तों और पहचान का लोप था। इंसान अपने ही समाज में अजनबी हो गया। मोहन राकेश की कहानी "मलबे का मालिक" इसी पीड़ा को मूर्त रूप देती है। वहाँ नायक केवल टूटी दीवारों और मलबे का मालिक नहीं, बल्कि अपने टूटे हुए अस्तित्व का भी साक्षी है। उसकी आँखों में अतीत की स्मृतियाँ और वर्तमान की रिक्तता मिलकर एक ऐसी पीड़ा रचती हैं, जो व्यक्ति को भीतर तक विखंडित कर देती है। मानवीय आयाम में यह पीड़ा कई स्तरों पर प्रकट होती है-स्मृतियों का असहनीय बोझ, असुरक्षा का गहन भाव, पहचान का संकट, और भविष्य के प्रति गहरी निराशा। यह वही पीड़ा है जो विभाजन के बाद करोड़ों विस्थापितों ने अपने जीवन में अनुभव की।

1. स्मृतियों का बोझ

विभाजन की त्रासदी झेल चुके व्यक्ति के लिए स्मृतियाँ वरदान नहीं, अभिशाप बन गईं। स्मृतियाँ हर पल उसे उस घर-आँगन की याद दिलाती हैं जहाँ कभी जीवन की ऊष्मा थी। मोहन राकेश की "मलबे का मालिक" में नायक जब मलबे के बीच खड़ा होता है, तो उसकी आँखों में केवल टूटी हुई दीवारें नहीं, बल्कि उन दीवारों में गूंजती हँसी, उन आँगनों में खेलते बच्चे और उन कमरों में पलते सपने तैरने लगते हैं। स्मृतियाँ उसके लिए सांत्वना नहीं देतीं, बल्कि वर्तमान की रिक्तता को और गहरा कर देती हैं। इस प्रकार, स्मृतियों का बोझ विभाजन-पीड़ित व्यक्ति के लिए जीते-जागते घाव की तरह है। ''चिराग और उसकी बीवी-बच्चों की मौत को वह काफ़ी पहले स्वीकार कर चुका था। मगर अपने नये मकान को इस शक्ल में देखकर उसे जो झुरझुरी हुई, उसके लिए वह तैयार नहीं था''[5]

2. पहचान का संकट

विभाजन के बाद इंसान केवल जमीन से नहीं उखड़ा, बल्कि अपनी पहचान से भी कट गया। जिस मिट्टी में वह पीढ़ियों से रचा-बसा था, वहाँ अचानक वह पराया करार दिया गया। धर्म और मजहब की रेखाओं ने उसकी अस्मिता को टुकड़े-टुकड़े कर दिया। वह अपने ही देश में अजनबी बन गया। "मलबे का मालिक" का नायक भी इस संकट का शिकार है। वह अपने घर का मालिक कहलाता है, पर वास्तव में उसके पास घर नहीं है। उसकी पहचान केवल "मलबे का मालिक" रह गई है। यह विडंबना विभाजन की सबसे त्रासद सच्चाई को सामने लाती है कि इंसान का अस्तित्व केवल नाम भर का रह गया।

3. असुरक्षा और विस्थापन का भाव

विभाजन ने इंसान के भीतर स्थायी असुरक्षा-बोध पैदा कर दिया। शरणार्थी शिविरों में रह रहे लोग हर पल इस चिंता में डूबे थे कि उनका कल क्या होगा। न भविष्य का ठिकाना था, न वर्तमान का आधार। यह असुरक्षा-बोध जीवन को निरंतर भय और बेचैनी में ढाल देता है। "मलबे का मालिक" में पात्र का मलबे पर खड़ा होना इस असुरक्षा का ही प्रतीक हैकृवह अपने अतीत को पकड़ नहीं सकता और भविष्य उसके सामने धुंध की तरह है। उसका वर्तमान केवल टूटे हुए पत्थरों और राख का ढेर है। ''कुछ लोग अब भी मुसलमानों को आता देखकर आशंकित से रास्ते से हट जाते हैं।''[6] साढ़े सात वर्श बाद भी जब मुस्लमान हॉकी का मैच देखने भारत आते हैं जो यहाँ के लोग उन्हें शंका की दृष्टि से देख रहे थे।

4. मानवीय रिश्तों का विघटन

विभाजन ने केवल घर नहीं तोड़े, बल्कि रिश्तों को भी बर्बाद कर दिया। पड़ोसी, जो जीवनभर सहारा रहे, अचानक हिंसा के कारण दुश्मन बन गए। भाईचारे की जगह अविश्वास और भय ने ले ली। यह विघटन इंसान को भीतर से खोखला कर गया। कहानी में नायक का अकेलापन इसी विघटन का परिणाम है। वह अपने घर के मलबे पर खड़ा है, लेकिन उसके चारों ओर वह सामाजिक ताना-बाना नहीं है, जिसने उसे जीवन की ऊर्जा दी थी। यहाँ पीड़ा का आयाम केवल निजी नहीं, सामूहिक भी है। ''तू बात रक्खे, यह सब हुआ किस तरह?'' गनी किसी तरह अपने आँसू रोककर बोला। ''तुम लोग उसके पास थे। सब में भाई-भाई की-सी मुहब्बत थी। अगर वह चाहता तो तुम में से किसी के घर में नहीं छिप सकता था? उसमें इतनी सी भी समझदारी नहीं थी?''[7]

5. भविष्य के प्रति निराशा

गनी का विभाजन में सब कुछ खो चुका था अब वह भविष्य के लिए कुछ भी कल्पना नहीं कर सकता था। वह नहीं जानता था कि रक्खे ने ही उसके बेटे को मारा है। उसी से सब की सलामती की दुआ करता है। ''जो होना था हो गया, रक्खिआ! उसे अब कोई लौटा थोड़े ही सकता है! खुदा नेक की नेकी बनाये रखे और बद की बदी माफ़ करे!''[8] विभाजन पीड़ित व्यक्ति के लिए भविष्य किसी रोशनी की ओर नहीं ले जाता, बल्कि अंधकार में ढके हुए मार्ग जैसा लगता है। जब सब कुछ उजड़ जाता है तो भविष्य की कल्पना भी एक बोझ बन जाती है। "मलबे का मालिक" में नायक केवल अपने अतीत और वर्तमान के मलबे में घिरा है, भविष्य उसके लिए शून्य है। यह निराशा जीवन की गति को रोक देती है और आदमी को केवल अस्तित्व ढोने वाला बना देती है।

6. दार्शनिक आयाम

यह पीड़ा केवल सामाजिक या भौतिक नहीं, बल्कि दार्शनिक भी है। विभाजन ने यह प्रश्न खड़ा किया कि इंसान की असली पहचान क्या है-उसका घर, उसका धर्म, उसकी जमीन या उसकी आत्मा? जब इन सबका मलबा हो जाता है, तब आदमी किस रूप में बचता है? यही प्रश्न "मलबे का मालिक" में नायक के मौन और टूटन के रूप में सामने आता है। वह केवल इंसान नहीं, बल्कि विभाजनकालीन मानवता की टूटी हुई प्रतिमा है। ''मलबे में अब मिट्टी-ही-मिट्टी थी जिसमें से जहाँ-तहाँ टूटी और जली हुई ईंटें बाहर झाँक रही थी। लोहे और लकड़ी का सामान उसमें से कब का निकाला निकाला जा चुका था। केवल एक जले हुए दरवाजे का चौखट ना जाने कैसे बचा रह गया।''[9] इस प्रकार, पीड़ा के मानवीय आयाम विभाजन साहित्य में केवल पृष्ठभूमि नहीं, बल्कि केंद्र हैं। स्मृतियों का बोझ, पहचान का संकट, असुरक्षा, रिश्तों का विघटन और भविष्य की निराशा-ये सब मिलकर उस गहरी पीड़ा को रचते हैं जिसने विभाजनकालीन मनुष्य को "मलबे का मालिक" बना दिया।

स्त्री और समाज की त्रासदी

भारत विभाजन की त्रासदी का सबसे गहरा और भीषण रूप स्त्रियों के जीवन में प्रकट हुआ। जहाँ पुरुष अपने घर, जमीन और संपत्ति खोकर टूटे, वहीं स्त्रियों ने अपनी अस्मिता, लाज और संपूर्ण स्त्रीत्व खोया। विभाजनकालीन हिंसा में स्त्रियाँ न केवल शारीरिक शोषण का शिकार बनीं, बल्कि वे समाज की उस मानसिकता की शिकार भी हुईं जिसने उन्हें केवल "सम्मान" का प्रतीक मानकर देखा। स्त्री पर हुआ यह आघात केवल व्यक्तिगत नहीं था, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक भी था। जिस समाज ने सदियों तक स्त्रियों को घर की लाज, परिवार की मर्यादा और धर्म की रक्षा का प्रतीक माना, उसी समाज ने विभाजन की आग में उन्हें असुरक्षित और परित्यक्त छोड़ दिया। बलात्कार, अपहरण और जबरन धर्मांतरण स्त्रियों के जीवन की सबसे त्रासद सच्चाई बन गए। इस हिंसा ने यह स्पष्ट कर दिया कि जब समाज का ढाँचा ढहता है, तो सबसे पहले स्त्री ही उस ढहते ढाँचे की बलि बनती है। विभाजन की त्रासदी में स्त्रियाँ केवल शिकार ही नहीं, बल्कि मौन गवाह भी थीं। उन्होंने अपने घर-परिवार के उजड़ने, बच्चों की हत्या और रिश्तों के टूटने का मर्म देखा। उनके आँसुओं ने उस समय के इतिहास को भिगोया, पर इतिहास की पुस्तकों में उनके दर्द की गूंज उतनी दर्ज नहीं हो सकी। ''बन्द किवाड़ों में भी उन्हें देर तक जुबैदा, किष्वर सुल्ताना के चीखने की आवाज़ें सुनाई देती रहीं। रक्खे पहलवान और उसके साथियों ने उन्हें भी उसी रात पाकिस्तान दे दिया, मगर दूसरे रास्ते से। उनकी लाशें चिराग के घर में न मिलकर बाद में नहर के पानी में पाई गयीं।''[10]

मोहन राकेश की "मलबे का मालिक" जैसी कहानियों में स्त्री की यह त्रासदी अप्रत्यक्ष रूप से सामने आती है। मलबे के बीच खड़ा आदमी केवल अपना घर नहीं खोता, बल्कि उस घर की स्त्रियों की गरिमा और जीवन का आधार भी खो देता है। घर के टूटने का अर्थ थाकृस्त्री की सुरक्षा और आश्रय का टूटना। जब घर मलबे में बदल गया, तो स्त्रियाँ अपने ही समाज में असहाय और उपेक्षित हो गईं। स्त्री की त्रासदी के साथ-साथ समाज की त्रासदी भी उतनी ही गहरी थी। विभाजन ने समाज की जड़ों को हिला दिया। पड़ोसी पड़ोसी के खून के प्यासे बन गए, दोस्त दुश्मन हो गए और धार्मिक उन्माद ने मानवता को निगल लिया। जिस समाज ने भाईचारे और सहअस्तित्व की परंपरा निभाई थी, वही समाज हिंसा और संदेह की चपेट में आ गया। स्त्री और समाज की यह दोहरी त्रासदी हमें बताती है कि विभाजन केवल राजनीतिक घटना नहीं था। यह वह तूफान था जिसने इंसान की आत्मा को बिखेर दिया। स्त्रियाँ अस्मिता से वंचित हुईं और समाज मानवता से। दोनों मिलकर इस त्रासदी को और भी व्यापक और गहन बना देते हैं।

इस कहानी का साहित्यिक महत्व

मोहन राकेश की कहानी "मलबे का मालिक" हिंदी कथा साहित्य में विभाजन की त्रासदी का एक अनूठा दस्तावेज है। यह कहानी साहित्यिक दृष्टि से इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें विभाजन जैसे जटिल और भीषण यथार्थ को न तो अतिनाटकीय शैली में प्रस्तुत किया गया है, न ही अत्यधिक भावुकता से, बल्कि अत्यंत सटीक, संवेदनशील और प्रतीकात्मक

भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है। इस रचना में साहित्य की वह शक्ति दिखाई देती है, जो जीवन के गहनतम अनुभवों को सरल और आत्मीय भाषा में उजागर करती है। इस कहानी का सबसे बड़ा साहित्यिक महत्व उसकी भाषा और शिल्प में निहित है। मोहन राकेश की भाषा न अलंकारिक बोझ से दबती है, न ही भावुकता की अधिकता से; बल्कि वह सीधी, तीक्ष्ण और सजीव है। लेखक ने बहुत ही सीमित शब्दों में विभाजन की पीड़ा को इस तरह व्यक्त किया है कि पाठक को हर शब्द अपने हृदय पर चोट करता हुआ महसूस होता है। कहानी का शिल्प सघन और कसावट भरा है, जिसमें किसी प्रकार की शिथिलता नहीं पाई जाती। यही कारण है कि कहानी का प्रभाव पाठक पर गहरा और स्थायी पड़ता है। साहित्यिक दृष्टि से देखें तो "मलबे का मालिक" प्रतीकात्मकता का अद्भुत उदाहरण है। यहाँ "मलबा" केवल टूटे हुए घर का द्योतक नहीं, बल्कि बिखरी हुई स्मृतियों, उजड़े हुए सपनों और चूर-चूर हुई अस्मिता का प्रतीक है। इस प्रतीक का प्रयोग कहानी को बहुस्तरीय अर्थ प्रदान करता है। पाठक जब मलबे का दृश्य देखता है तो उसे केवल ईंट-पत्थर का ढेर नहीं दिखता, बल्कि वह उस समय के पूरे समाज का बिखराव देखता है। इस प्रकार, कहानी में प्रतीक और बिंब योजना ने विभाजन की पीड़ा को और भी मार्मिक और प्रभावशाली बना दिया है। इस रचना का साहित्यिक महत्व यथार्थवाद और मानवीय करुणा के संतुलन में भी निहित है। मोहन राकेश ने विभाजन की भयावहता को चित्रित करने के लिए रक्तपात और हिंसा का विस्तृत वर्णन नहीं किया, बल्कि एक अकेले व्यक्ति के टूटे हुए जीवन के माध्यम से पूरे समाज की व्यथा को व्यक्त किया। यही कारण है कि नायक की व्यक्तिगत पीड़ा सामूहिक पीड़ा बनकर सामने आती है। यह यथार्थवाद पाठक को सीधे उस ऐतिहासिक त्रासदी के बीच खड़ा कर देता है, जहाँ इंसान न केवल घर-परिवार बल्कि अपनी आत्मा तक खो बैठा था। आधुनिक हिंदी कथा साहित्य में "मलबे का मालिक" का महत्व विशेष रूप से इसलिए भी है कि इसमें व्यक्ति की भीतरी टूटन और अस्तित्वगत संकट को केंद्र में रखा गया है। विभाजन पर लिखी कई रचनाएँ सामूहिक हिंसा और राजनीतिक परिस्थितियों पर केंद्रित थीं, लेकिन मोहन राकेश ने इस कहानी में उस आंतरिक विखंडन को पकड़ा जो विभाजन के बाद हर आदमी के भीतर था। नायक का अकेलापन, उसकी स्मृतियों का बोझ और वर्तमान की रिक्तता यह दिखाते हैं कि विभाजन की सबसे बड़ी त्रासदी मनुष्य के भीतर हुई थी। इस कहानी का साहित्यिक महत्व सामाजिक और दार्शनिक दृष्टि से भी गहरा है। कहानी यह प्रश्न खड़ा करती है कि जब इंसान सब कुछ खोकर केवल मलबे का मालिक रह जाता है, तो उसकी वास्तविक पहचान क्या रह जाती है? क्या उसका अतीत ही उसका आधार है, या वर्तमान की रिक्तता ही उसकी सच्चाई है? यह प्रश्न केवल उस समय के विस्थापित व्यक्ति का नहीं, बल्कि संपूर्ण मानव अस्तित्व का है। इस प्रकार, कहानी विभाजन की सामाजिक त्रासदी को दार्शनिक गहराई प्रदान करती है और साहित्य को केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि मानवीय चिंतन का मंच बना देती है। समग्र रूप से कहा जा सकता है कि "मलबे का मालिक" का साहित्यिक महत्व इस बात में है कि उसने विभाजन की पीड़ा को केवल घटनाओं के स्तर पर नहीं, बल्कि मानवीय करुणा, अस्तित्वगत विडंबना और प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति के स्तर पर भी चित्रित किया। यही कारण है कि यह कहानी हिंदी साहित्य में विभाजनकालीन रचनाओं की अग्रिम पंक्ति में खड़ी है और आज भी पाठक के हृदय को उतनी ही गहराई से छूती है जितनी उस समय छुआ करती थी।

निष्कर्ष

मोहन राकेश की कहानी "मलबे का मालिक" भारत विभाजन की त्रासदी का केवल एक साहित्यिक दस्तावेज नहीं है, बल्कि वह उस समय की सामूहिक स्मृति और मानवीय पीड़ा का जीवंत चित्र है। इस कहानी के माध्यम से हमें यह अनुभव होता है कि विभाजन केवल सीमाओं का खिंचाव या राजनीतिक निर्णय नहीं था, बल्कि वह मनुष्य की आत्मा और समाज की संरचना को तहस-नहस कर देने वाला तूफान था। कहानी का नायक जब अपने उजड़े घर के मलबे पर खड़ा दिखाई देता है, तो वह केवल अपने जीवन की विफलता का प्रतीक नहीं रह जाता, बल्कि पूरे समाज की उजड़ी हुई तस्वीर बन जाता है। उसके चारों ओर फैला हुआ मलबा उन लाखों-करोड़ों लोगों की अस्मिता का प्रतीक है, जिन्होंने अपनी मिट्टी, अपने रिश्ते और अपना भविष्य खो दिया। इस तरह यह रचना व्यक्तिगत पीड़ा को सामूहिक पीड़ा में रूपांतरित करती है और साहित्य को

इतिहास से भी अधिक जीवंत बना देती है। इस कहानी का महत्व इस बात में है कि यह विभाजन को रक्तपात और हिंसा के दृश्यों से नहीं, बल्कि प्रतीकात्मक गहराई और संवेदनशील चित्रण से सामने लाती है। मलबे का बिंब केवल ईंट-पत्थरों का ढेर नहीं, बल्कि स्मृतियों, टूटे सपनों और अस्तित्वगत संकट का दर्पण है। यही बिंब कहानी को बहुस्तरीय अर्थ प्रदान करता है और इसे आधुनिक हिंदी कथा साहित्य की अमूल्य धरोहर बना देता है। विभाजन की पीड़ा को समझने के लिए "मलबे का मालिक" आज भी उतनी ही प्रासंगिक है, जितनी उस समय थी। यह रचना हमें यह सोचने के लिए विवश करती है कि जब इंसान अपने घर, अपनी जड़ों और अपने रिश्तों से कट जाता है, तो उसके पास बचता क्या है? बचता है केवल मलबा टूटे हुए घरों का, बिखरी हुई स्मृतियों का और छिन्न-भिन्न मानवता का। यही इस कहानी का शाश्वत संदेश है और यही इसका सबसे बड़ा साहित्यिक महत्व भी।

संदर्भ

1 मोहन राकेश की सम्पूर्ण कहानियाँ : मलबे का मालिक : राजपाल एण्ड सन्ज़ : 2021: पृ0 248
2 वही, पृ0 247
3 वही, पृ0 249
4 वही, पृ0 251
5 वही, पृ0 247
6 वही, पृ0 249
7 वही, पृ0 250
8 वही, पृ0 251
9 वही, पृ0 248
10 वही, पृ0 248-249

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Quality Analysis and Management Practices for Sugar Factory Wastewater

Dr. Atul Kumar
Assistant Professor
Department of Commerce
Shri Ram College, Muzaffarnagar
(An Autonomous College- Affiliated to Maa Shakumbhari University Saharanpur, U. P.-India)
E-Mail: vermajiatul@gmail.com
M. 8126861795

Dr. Pardeep Kumar
Assistant Professor
S.G.Technical University, Sikkim

Abstract:

Wastewater from sugar industries is one that has complex characteristics and is considered a challenge for environmental engineers in terms of treatment as well as utilization. Before treatment and recycling, determination of physicochemical parameter is an important mechanism. Many different types of techniques are introduced and modified for the purpose, but depend upon the water quality parameters. The main aim of this study is to determine the physicochemical characteristics of sugar industry waste water by the standard method and minimize the fresh water consumption in sugar industry by water pinch methodology.

Keywords: wastewater, sugar industries, quality management, effluent.

1. Introduction:

Sugar factories generate **vast quantities of wastewater**, primarily stemming from processes such as milling, boiling, clarification, and cleaning operations/ . For every tonne of crushed sugarcane, approximately **0.7 to 1/ m³ of wastewater** is produced, driven by the cane's inherent 70–80% moisture and additional process water usage/ . Overall water demand ranges from 1.5 to 2/ m³ per tonne of cane, with over **50% being discharged as effluent**—often with minimal or no treatment—placing severe strain on water resources in key production regions such as India and Brazil/ .

This wastewater is marked by a *complex pollutant matrix*, exhibiting high organic and inorganic burdens. Typical concentrations include:

- **BOD**: between 800–2,500/ mg/L
- **COD**: approximately 1,000–7,000/ mg/L (up to 8,000/ mg/L in some cases)
- **Total Solids** (TDS + TSS): ranging from 1,500 to over 3,000/ mg/L

- **Oil & Grease**: frequently detected in mill-house effluents
- **Chloride and Sulfate**: often far exceeding regulatory limits (e.g. >400/ mg/L sulfate)/ Seasonal variability, such as dilution during monsoons, further complicates treatment plant operations/ . Mill-house runoff is typically rich in **suspended solids and oil**, while process-house streams are laden with **organic contaminants** like BOD and COD/ .

Collectively, these qualities make sugar mill effluent a **formidable environmental hazard**. Discharges with high organic load can **drastically deplete dissolved oxygen** in receiving waters—threatening aquatic ecosystems—while nutrient-rich and saline effluents disrupt soil fertility and inhibit plant germination when used for irrigation without treatment/ . Moreover, accumulating sulfates and chlorides can produce offensive odors (e.g., H, S), corrode infrastructure, and accelerate eutrophication in water bodies/ .

Given these challenges, environmental engineers face a two-fold mission: (1) to **accurately characterize** these complex effluents, and (2) to **develop or adapt treatment systems** that can handle their variability while minimizing freshwater use—for instance, by implementing water reuse through integrated process frameworks such as water-pinch analysis. This study advances both fronts by conducting a rigorous physicochemical analysis of sugar mill wastewater and exploring practical strategies to optimize fresh water consumption and reuse.

Objectives of the Study:

This research pursues two key objectives:

1. **Comprehensive Physicochemical Analysis**
    - Collect wastewater from various unit processes (mill house, process house, cooling systems, etc.).
    - Perform standardized tests (following APHA, ICMR, Rainwater & Thatcher protocols) to quantify parameters such as pH, TDS, TSS, BOD, COD, oil & grease, chlorides, sulfates, and selected heavy metals.
2. **Water-Pinch Implementation for Freshwater Savings**
    - Construct a detailed water balance of the sugar processing plant, identifying sources and sinks of wastewater streams.
    - Select COD as a key contaminant for pinch-based optimization.
    - Generate source–sink composite curves and perform water-cascade analysis to design and optimize an integrated water reuse network that reduces freshwater intake

Thoroughly characterize physicochemical qualities of wastewater from sugar-processing operations.

- Evaluate current and emerging treatment technologies—physicochemical, biological, hybrid, and integrated reuse methods.
- Assess water-pinch analysis as a strategy to reduce freshwater demand in sugar plants.

2. Physicochemical Characteristics of Wastewater

Sugar-industry effluent commonly exhibits:

- **BOD**: 600–1000/ mg/L
- **COD**: 5000–8000/ mg/L
- **TSS**, oil/grease, chlorides (~205/ mg/L), sulfates, and occasional heavy metals.

Fluctuating tastes and colors—greys to deep brown—are attributed to melanoidins and sulfide reactions. Unpleasant odors often indicate anaerobic conditions with hydrogen sulfide presence.

3. Treatment Technologies

3.1 Physicochemical Methods

- **Electrocoagulation** (iron + aluminum electrodes):

Achieves ~90% COD removal and ~93.5% color reduction under optimized pH, density, and retention conditions; sludge produced can be repurposed as agricultural manure.

- **Chemical and nanoparticle treatments**:

Nanoparticles effectively removed 99% of melanoidins and 84% of organic matter, exceeding biological removal rates.

3.2 Biological Techniques

- **Anaerobic digestion** (UASB, UAFB, DSFF, FAF):

Robust, high-load handling with energy recovery via biogas—but low in nutrient removal.

- **Horizontal subsurface flow wetlands** (Typha, Phragmites):

Lab trials show ~88% COD, ~97% BOD, ~96% nitrogen removal, and ~95% sulfate removal; no post-treatment toxicity.

- **Phycoremediation, bioaugmentation, biochar**:

Biological treatment shows 70–90% removal of melanoidins, organics, and metals; eco-friendly and economically viable in tropical settings.

3.3 Hybrid & Membrane-Based Systems

- **Membrane Bioreactors (MBRs)**:

Provide high-quality effluent plus potential biogas recovery; combining anaerobic digestion with membrane filtration is effective and scalable.

4. Water Reuse & Optimization

4.1 Water-Pinch Analysis (WPA)

WPA is a targeting and integration tool that reduces freshwater use and effluent discharge by identifying optimal internal reuse opportunities via source–sink composite curves and water cascade analysis.

In agro-food industries like sugar processing, WPA studies demonstrate 23–69% investment savings

and payback within days to months.

4.2 Biorefinery & Zero-Waste Models

- **Biorefinery approaches**:

Co-purification of wastewater and recovery of value-added products like succinic acid, xylitol, L-arabinose, and solvents—a concept gaining traction in circular economy models.

- **Waste-to-energy systems**:

Distillery residues (vinasse) used for biogas, biomethane, electricity, fertilizers, improving the overall sustainability and energy return on energy invested (EROEI).

5. Discussion

Effectiveness & Limitations

- Physicochemical treatments yield rapid pollutant removal but generate secondary waste.
- Biological processes are sustainable but slower and less effective on recalcitrant organics.
- Hybrid systems (MBRs, wetlands + anaerobic) offer comprehensive removal and resource recovery.

Sustainable Benefits

- WPA markedly reduces freshwater usage and effluent volumes—crucial for regions facing water scarcity.
- Biorefinery models align industrial activity with environmental stewardship and circular economy principles.

6. Recommendations

6.1 Integrated Treatment Strategy

Adopt multi-step systems combining pre-treatment, anaerobic digestion, MBR, constructed wetlands, and WPA-based reuse designs.

6.2 On-Site Reuse Infrastructure

Deploy WPA-based water cascade systems to reuse treated effluent in non-potable processes such as cleaning and cooling.

6.3 Resource Recovery Focus

Incorporate biorefinery modules to generate high-value co-products and improve economic viability.

6.4 Local Adaptation & Compliance

Customize techniques based on regional regulations and resource availability; develop guidelines tailored to regions like India and Brazil.

7. Conclusion

The effective management of wastewater in sugar factories is paramount for both environmental sustainability and operational efficiency. Given the complex and variable nature of the effluents—

characterized by high organic loads, suspended solids, and chemical contaminants—a multifaceted approach to treatment and resource recovery is essential.

Comprehensive Treatment Strategies

A combination of physicochemical, biological, and hybrid treatment methods offers the most effective means of addressing the diverse pollutants present in sugar industry wastewater. Techniques such as electrocoagulation, which utilizes electric currents to remove suspended solids and colorants, have shown promise in enhancing treatment efficiency and reducing sludge volume . Additionally, constructed wetlands, particularly horizontal subsurface flow systems, provide a cost-effective and environmentally sustainable option for treating wastewater, with the added benefit of minimal sludge production .

Integrated Water Reuse Systems

Implementing integrated water reuse systems, such as those designed using water-pinch analysis, enables sugar factories to optimize water usage by identifying opportunities for internal recycling. This approach not only conserves freshwater resources but also reduces the volume of effluent requiring treatment, thereby mitigating environmental impact .

Resource Recovery and Valorization

Beyond treatment, the valorization of by-products such as bagasse, molasses, and press mud can contribute to a circular economy within the sugar industry. These materials can be utilized for bioenergy production, composting, or as feedstock for biochemicals, thereby reducing waste and generating additional revenue streams .

Environmental and Economic Benefits

Adopting comprehensive wastewater management practices leads to significant environmental benefits, including the reduction of pollutants in receiving water bodies, improved soil quality through the use of treated effluent for fertigation, and decreased greenhouse gas emissions via biogas production. Economically, these practices can result in cost savings through reduced water procurement and treatment expenses, as well as potential revenue from the sale of recovered resources .

Policy and Regulatory Support

To facilitate the widespread adoption of these practices, supportive policies and regulatory frameworks are essential. Guidelines from agencies such as the Central Pollution Control Board (CPCB) in India have been instrumental in encouraging sugar mills to implement measures like rainwater harvesting, zero-liquid discharge systems, and the use of treated effluent for irrigation .

In conclusion, a holistic approach to wastewater management in the sugar industry—encompassing advanced treatment technologies, integrated water reuse, resource recovery, and supportive policies—can significantly reduce environmental impacts and promote sustainable production practices. By embracing these strategies, sugar factories can contribute to environmental conservation while enhancing their operational efficiency and economic viability.

References:

1. Ur Rehman, T. et al. (2024). **Mitigation of Sugar Industry Wastewater Pollution…** *Processes*, 12(7), 1400. MDPI. (2022). **Critical State of the Art of Sugarcane Industry Wastewater Treatment…** *Membranes*, 13(8), 709.
2. Sahu, O. (2017). **Electrocoagulation in Sugar Processing Effluent Treatment…** *MethodsX*, 4, 172–185.
3. Kumari, M. (2024). **Effective Abatement of Pollutants…** *International Journal of Water Research*.
4. IntechOpen. (2023). **Wastewater Management in Sugar Industry…**
5. MDPI Review. (2020). **Biopurification and Biorefinery Approaches…** *Crit. Rev. Food Sci. Nutr.*, 61(21).
6. MDPI Water. (2021). **Sugarcane Byproducts and Environmental Remediation…** *Water*, 13(24), 3495.
7. Water-pinch analysis.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

AI and Digital Education in India: Driving a Pedagogical Shift for Better Learning Outcomes

Arti Sood

Abstract

The integration of digital tools and artificial intelligence (AI) in the Indian education system is transforming traditional teaching and learning practices. This paper examines how digital resources—ranging from interactive apps to AI-enabled learning platforms—enhance student engagement, comprehension, and academic performance. Using qualitative observations and secondary data from government reports, educational surveys, and scholarly sources, the study analyzes the benefits, challenges, and future potential of technology-driven pedagogy, particularly in under-resourced schools. The research highlights opportunities for leveraging government initiatives like PM e-VIDYA and DIKSHA, as well as lessons from international best practices in AI-assisted education. Findings suggest that with proper training, infrastructure, and policy support, digital and AI tools can bridge learning gaps, promote inclusive and student-centered learning, and contribute to a significant pedagogical shift in Indian classrooms.

Keywords : Keywords: Digital Education; Pedagogy; Indian Classrooms; Learning Outcomes; ICT; Technology Integration; Artificial Intelligence (AI) in Education; National Education Policy (NEP) 2020; Hybrid Learning Models; Global Best Practices in Education; Inclusive Education; EdTech

Introduction

Education in India is undergoing a dynamic transformation, propelled by the growing accessibility of digital technology and the emerging role of artificial intelligence (AI). From smartboards in urban classrooms to tablet-based and AI-assisted learning in rural areas, this technological revolution is redefining the relationship between students, teachers, and knowledge. This paper examines the pedagogical impact of digital tools and AI in Indian classrooms and how they contribute to enhanced learning outcomes across various levels of education. In addition, it considers the role of national policies such as the National Education Policy (NEP) 2020 and government-led digital initiatives that aim to integrate technology into mainstream education, further accelerating this pedagogical shift.

Objectives of the Study

- To assess the role of digital tools and AI in enhancing teaching and learning practices.

- To identify the challenges faced by educators in adopting technology-driven pedagogy.
- To recommend strategic measures for effective and inclusive digital integration in classrooms.

Methodology

This study adopts a qualitative-descriptive approach, drawing upon data from multiple credible sources including government reports (such as UDISE+), surveys conducted by educational NGOs, teacher testimonials, and secondary academic literature. The analysis considers both urban and rural educational contexts to provide a balanced and comprehensive perspective on the impact of digital tools and AI in Indian classrooms.

Discussion

1. Digital Tools in Practice

The pedagogical landscape in India is witnessing a major transformation with the introduction of AI-enabled platforms. Tools such as **AnveshanaAI** and **MindCraft** represent how artificial intelligence can personalize and democratize learning. AnveshanaAI integrates gamified modules, Bloom's taxonomy-based assessments, and adaptive dashboards that enable teachers to track individual progress effectively. MindCraft, meanwhile, is particularly relevant in rural contexts, offering mentorship-based learning paths and resource sharing to overcome shortages of qualified educators. Additionally, **Google Gemini for Education** has been integrated with Google Classroom to support teachers by generating quizzes, summaries, diagrams, and rubrics, thereby reducing instructional workload and enhancing engagement.

2. Government and Policy Initiatives

Studies by NCERT and Azim Premji Foundation show that schools using ICT (Information and Communication Technology) have seen a marked improvement in student performance, especially in Mathematics and Science.

The Indian government has also taken significant steps to institutionalize digital and AI-driven education. The **National Education Policy (NEP) 2020** places strong emphasis on digital literacy, ICT integration, and flexible hybrid learning models. Initiatives like **PM e-VIDYA** and **DIKSHA** have expanded their reach, with features such as QR-coded textbooks, virtual labs, and AI-powered analytics that help monitor learning progress. At the state level, programs such as **Tamil Nadu's SPARK initiative** and the **Punjab School Education Board's AI-in-Education project** demonstrate regional commitments to embedding AI in the curriculum. These efforts align with the broader **Samagra Shiksha Abhiyan**, which supports teacher training, digital classrooms, and AI literacy at multiple educational levels.

3. Bridging the Urban-Rural Divide by Industry Innovations and Collaborations

In rural schools, digital kits and mobile vans with preloaded content have brought quality education to marginalized communities. Despite infrastructure limitations, low-cost solutions like solar-powered tablets are gaining popularity.

Industry stakeholders and EdTech companies have played a complementary role in advancing classroom technology. Platforms like **Byju's, Quizizz, and Kahoot!** continue to innovate in assessment and engagement, while **Senses smart classroom panels** offer gesture-based interaction,

AI-driven feedback, and hybrid teaching capabilities. Collaborations between governments, NGOs, and EdTech firms are particularly crucial in scaling these innovations to under-resourced schools. For example, mobile digital labs, solar-powered tablets, and AI-driven offline kits have been introduced in rural communities, ensuring that quality education is not confined to urban centers.

4. Opportunities to Learn from Other Countries

India can gain valuable insights from international experiences in AI-driven pedagogy. Countries like **Singapore, South Korea, and Finland** have implemented AI-powered learning platforms and adaptive assessment systems at scale, combining them with strong teacher training and ethical governance frameworks. Singapore's "AI in Education" initiative, for instance, provides predictive analytics to identify struggling students early, while Finland emphasizes student-centered learning with AI-supported personalized curricula. By studying these models, India can adopt **best practices for curriculum integration, teacher preparation, data privacy policies, and hybrid learning strategies**, while tailoring them to local socio-economic contexts. Such comparative learning can accelerate India's pedagogical shift while minimizing implementation pitfalls.

5. Challenges in AI Integration- Despite the advantages of digital and AI tools in Indian classrooms, several challenges persist. These include:

Despite these advancements, the integration of AI tools into Indian classrooms is not without challenges. **Infrastructure gaps**, such as unreliable electricity and poor internet connectivity in rural areas, continue to limit access. **Teacher readiness** is another concern, as many educators lack adequate training in digital pedagogy and AI literacy. **Economic disparities** also mean that low-income households struggle to afford devices, thereby widening the digital divide.

In addition, the **RISKA framework (Reliability, Inequality, Security, Knowledge, Accountability)** highlights emerging risks specific to AI integration in education:

1. Reliability of AI Content – AI tools may generate inaccurate or biased information, which can mislead students if not carefully monitored.

2. **Inequality in Access** – Rural and low-income schools may be left behind due to infrastructural gaps, widening the digital divide.

3. **Security and Privacy** – Student data collected by AI platforms is vulnerable to misuse in the absence of strong data protection policies.

4. Knowledge Dilution – Over-reliance on AI-generated answers may weaken students' critical thinking, creativity, and problem-solving abilities.

5. Accountability and Ethics – The absence of clear regulations makes it difficult to assign responsibility when AI systems provide incorrect or harmful guidance. Recommendations

6. Implications for Pedagogical Shift

Taken together, the integration of digital and AI tools points to a significant **pedagogical shift** in Indian classrooms. The traditional teacher-centered model is gradually evolving into a **student-centered, hybrid learning ecosystem**, where technology enhances personalization, engagement, and inclusivity. If supported with adequate training, infrastructure, and policy safeguards, AI-enabled pedagogy has the potential to reduce learning gaps, promote equity, and prepare students for a knowledge economy that increasingly values creativity, problem-solving, and critical thinking.

Recommendations

To maximize the benefits of digital and AI tools while addressing existing challenges, the following measures are recommended:

1. Teacher Training and AI Literacy

Regular professional development programs should focus not only on digital pedagogy but also on AI literacy, enabling teachers to guide students in critically evaluating AI-generated content.

2. Strengthening Infrastructure and Access

Government subsidies and public–private partnerships should support digital infrastructure in schools, especially in rural and marginalized areas.

Low-cost solutions like solar-powered devices and offline AI-enabled kits should be expanded to reduce inequality in access.

3. Data Privacy and Security Frameworks

The education sector should adopt strong data protection guidelines to safeguard student information collected by AI platforms.

Schools must train teachers and parents to recognize and address privacy concerns.

4. Balanced Pedagogy through Hybrid Models

A hybrid approach that combines traditional teaching, digital platforms, and AI tools should be encouraged to prevent over-dependence on AI and promote critical thinking.

5. Ethical and Regulatory Guidelines for AI in Education

National and state education boards should frame policies ensuring accountability, fairness, and ethical use of AI in classrooms.

Clear protocols must be established regarding teacher and institutional responsibility in AI-supported learning.

6. Parental and Community Involvement

Parents should be included in digital and AI literacy drives so that learning is supported at home and communities are aware of both opportunities and risks.

Conclusion

Digital tools, when strategically implemented, have the power to transform the Indian education system. While challenges remain, especially in equitable access, the long-term benefits of digitized classrooms are evident. With continued support and innovation, digital education can lead India toward a more inclusive and effective learning ecosystem.

References

1. Ministry of Education, Government of India. (2020). National Education Policy 2020. https://www.education.gov.in/sites/upload_files/mhrd/files/NEP_Final_English_0.pdf
2. Muñoz-Najar, A., Gilberto, A., Hasan, A., Cobo, C., Azevedo, J. P., & Akmal, M. (2021). Remote Learning

during COVID-19: Lessons from Today, Principles for Tomorrow. World Bank. https://documents1.worldbank.org/curated/en/160271637074230077/pdf/Remote-Learning-During-COVID-19-Lessons-from-Today-Principles-for-Tomorrow.pdf

3. World Bank. (2021, November 18). New World Bank report: Remote Learning during the pandemic – Lessons from Today, Principles for Tomorrow. https://www.worldbank.org/en/news/press-release/2021/11/18/new-world-bank-report-remote-learning-during-the-pandemic-lessons-from-today-principles-for-tomorrow
4. OECD. (2020). The Impact of COVID-19 on Education – Insights from Education at a Glance. https://www.oecd.org/education/the-impact-of-covid-19-on-education-insights-education-at-a-glance.pdf
5. World Bank, UNESCO, & UNICEF. (2021). What's Next? Lessons on Education Recovery: Findings from a Survey of Ministries of Education amid the COVID-19 Pandemic. https://openknowledge.worldbank.org/handle/10986/36393
6. UNESCO. (2022). Education in the Digital Age. https://www.unesco.org/en/digital-education
7. NITI Aayog. (2023). EdTech and the Future of Education in India.
8. https://www.researchgate.net/publication/379586022_Assessing_the_Challenges_and_ Opportunities _of_Artificial_Intelligence_in_Indian_Education
9. https://www.ey.com/en_in/insights/education/how-ai-is-activating-step-changes-in-indian-education
10. India's National Strategy for Artificial Intelligence, NITI Aayog (2023).
11. https://www.nextias.com/ca/current-affairs/22-09-2022/2022-state-of-the-education-report-for-india-unesco#:~:text=UNESCO%20has%20released%20the%20State%20of% 20education%20 report,the%20application%20of%20AI%20in%20education%20in%20India.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

हिंदी साहित्य में पर्यवरण प्रदूषण - जल प्रदूषण समकालीन हिंदी कविताओं के विशेष संदर्भ में

Dr. Dhanya B
Assistant Professor, University of Kerala
Dhanya house, Elampa PO 695103
Attingal, Trivandrum
ई मेल: drdhanyabs@gmail.com
मोबाइल नंबर : 8921668255

वैदिक काल से ही पर्यावरण को महत्वपूर्ण मानते हुए पृथ्वी माता का सम्मान करने, पर्यावरण के तत्वों, जैसे जल, वायु, अग्नि, भूमि की रक्षा करने और उन्हें शुद्ध रखने का आग्रह किया गया है। इसके लिए 'विश्व शांति' की प्रार्थना में कहा गया है 'ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः। शान्तिः सर्वम् शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि॥' और 'अन्नाद् भवन्ति भूतानीपर्जन्यादन्नसंभवः।'[1]

पर्यवरण परिभाषा

ओडम के शब्दों में - 'प्रकृति की संरचना तथा कार्य की अध्ययन ही पारिस्थितिकी है।'[2]

पर्यावरण प्रदूषण के प्रमुख कारण

प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन, प्रदूषण, जल वायु परिवर्तन, वनों की कटाई, जैव विविधता का ह्रास, बढ़ती जनसंख्या और शहरीकरण, औद्योगीकरण, कृषि, अपशिष्ट प्रबंधन आदि।

हिंदी साहित्य में पर्यवरण

साहित्य और पर्यवरण दोनों प्रकृति और मानव पर केंद्रित है। प्रकृति में असंतुलन होते तो मानव जीवन में भी संतुलन नष्ट होगा। कालिदास से लेकर आज तक के सभी साहित्यकारों को प्रकृति से ही रचना की प्रेरणा मिली। पूरा छायावाद काल प्रकृति के अनुपम, अपूर्व सौंदर्य में अपना अनुपम सौंदर्य में अपनी भावनाओं का अनुपम काल है। निराला, प्रसाद, आदि कवियों ने भी प्रकृति अनुपम छटा पर सुंदर कविताएँ रची है।

साहित्य में जल प्रदूषण

'पानी बचाओ जीवन बचाओ' - यह कोई मामूली वचन नहीं श वर्तमान युग में सभी ओर गूजते रहने वाली वाक्य है। कहा जाता है कि आज कोई विश्व महायुद्ध होगे तो वह पानी के लिए होगा।

अनेक देशों में किए गए जल परीक्षणों से यह पता चलता है कि विश्व की दस प्रतिशत नदियों का जल दूषित हो

चुका है। कच्चा पेट्रोलियम, डी.डी.टी., कीटनाशक, उर्वरक, साबुन, मल-मूत्र, शव तथा उद्योगों के अपशिष्ट पदार्थों से नदियाँ, नाले, सागर, तालाब, झीलें आदि जल-स्रोत प्रदूषित हो चुके हैं। प्रदूषित जल में बैक्टीरिया और विषाणु तेज़ी से पनपते हैं। प्रदूषित जल के प्रयोग से हैजा, पीलिया, टायफाइड तथा पेट के अनेक रोग पैदा होते हैं। प्रदूषित जल का प्रभाव मानव के साथ-साथ जल जीवियों और जल वनस्पतियों पर भी पड़ता है।

साहित्य पर पर्यवरण समस्याओं का प्रभाव

मानव विकास की सदियों की प्रक्रिया के बाद हम आधुनिक युग में आ गए हैं, जहाँ हमने भौतिक सुख-सुविधाएँ और वैज्ञानिक उपलब्धियाँ हासिल की हैं।

इन वैज्ञानिक उपलब्धियों के बावजूद, जीवन का सबसे आवश्यक तत्व 'स्वच्छ जल' की उपेक्षा की गई है। जल ही मानव इतिहास की पहली उपलब्धि थी जिसने प्राणों की रक्षा की। जल की कमी और प्यास की तीव्रता आज भी मानव जीवन में एक बड़ी चिंता की बात है। इसी प्रकार संजीव की 'रह् गई दिशाएँ इसी पार' कहानी में मानवीय गतिविधियों के कारण पर्यावरणीय क्षरण को दर्शाया गया है।

रणेंद्र जी की 'ग्लोबल गाँव के देवता' में पर्यावरण और आदिवासी समाज के बीच के जटिल संबंधों को प्रस्तुत किया गया है। महुआ माजी की 'मरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ' एक ऐसा उपन्यास है जो प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण और उसके पर्यावरणीय प्रभावों पर केंद्रित है। नासिरा शर्मा की 'कुइयाँजान', में भी पर्यावरण संबंधी चिंताएँ और मानवीय संवेदनशीलता देखी जा सकती है। अलका सरावगी 'कलिकथा वाया बाईपास' में औद्योगिकरण और शहरीकरण के पर्यावरणीय परिणामों को दर्शाया गया है। भगवती शरण मिश्र 'लक्ष्मण रेखा' भी पर्यावरणीय संकटों पर प्रकाश डालती है।

समकालीन हिंदी कविताओं में अभिव्यक्त जल की समस्या

समकालीन हिंदी कविताओं ने पर्यवरण समस्या पर जोर दिया है जिसमें भी अधिकतर पानी की समस्या है। जल प्रदूषण पर आधारित कविताएँ, पर्यावरण के प्रति मानवीय लापरवाही और उसके विनाशकारी प्रभावों पर केंद्रित होती हैं, जिसमें नदियों और झीलों का दूषित होना, जलीय जीवन पर खतरा, और आम लोगों का बीमारियों का शिकार होना, आदि विषयों को दर्शाया जाता है। ये कविताएँ औद्योगिक और कृषि अपशिष्ट, प्लास्टिक कचरा, आदि प्रदूषण के प्रमुख कारण बताती हैं। कविताएँ जल को स्वच्छ रखने के लिए जन जागरूकता और सामूहिक प्रयासों की आवश्यकता पर बल देती हैं, ताकि आने वाली पीढ़ियों के लिए जल को एक अनमोल संसाधन के रूप में संरक्षित किया जा सके।

'नदी और साबुन' कविता में जल प्रदूषण की समस्या को कवि अत्यंत गंभीर ढंग से व्यक्त की गयी है। देखिए–

आह! लेकिन
स्वार्थी कारखानों का तेज़ी पेशाब झेलते
बैंगनी हो गयी तुम्हारी शुभ्र त्वचा
हिमालय के होते हुए भी तुम्हारे सिरहाने
हथेली - भर की एक साबुन की टिकिया से,
हार गयी तुम युद्ध।[3]

कवि केदारनाथ सिंह जी पानी की प्रार्थना कविता में पानी के माध्यम से भगवान से यह बताता है कि प्रभु मैं पानी पृथ्वी का प्राचीनतम नागरिक हूँ। पानी भगवान से भी यह प्रश्न उठाता है कि–

'सूरज के सातों घोड़े उतर आये हैं
मेरे करीब - प्यास से बेहाल
पर असल में जो आया वह एक चरवाहा था।

अब कैसे बताऊँ प्रभु - क्योंकि आपको तो
प्यास कभी नहीं लगती कि वह कितना प्यासा था।'[4]

नागार्जुन जी द्वारा रचित उपर्युक्त पंक्तियों में 'वह फिर जी उठी' कविता में कवि एक नदी की जीवन गाथा का चित्रण किया है। जिन-जिन परिस्थितियों में नदी बहती है, सूखती है और फिर मरी हुई नदी जल से भरकर जी उठती है। उन सारी प्रक्रिया को कवि ने शब्दों से चित्रबद्ध किया है।

'रात में झाँकते होते हैं आसमान के तारे, जगमगाती है
दिन के वक्त उडते पंछियों की परछाई
नदी है क्या आईना है!'[5]

जल प्रदूषण की विकट समस्या से लेकर जल उपयोग तक में मनुष्य समाज क्रूर होता जा रहा है। जल को पवित्र तथा पूजनीय समझा जाता है। जल के एक एक बूँद के प्रति श्रद्धा और संवेदना का रिश्ता होना चाहिए।

गंगा नदी से प्रदूषण खत्म करने के लिए सरकार ने 292 करोड रुपये की गंगा परियोजना पद्धति को अपनाया जा रहा है। इस अवसर पर अरुण कमल द्वारा रचित 'गंगा को प्यार' नामक कविता अत्यंत प्रासंगिक है। प्रस्तुत कविता भारतीय संस्कार और गंगा के आत्मीय, अंतरंग एवं शाश्वत संबंधों की पवित्र गाथा है। विश्वास है कि संस्कृति के अनुसार प्रथम स्नान से लेकर अंतिम स्नान तक के अनुष्ठान यहाँ संपन्न होते हैं। गंगा जीवन के आधार और प्राण है। परंतु वही गंगा मैया भी आज मानवीय गतिविधियों द्वारा अत्यंन्त प्रदूषित हो गयी है। कवि कहते हैं कि आज मात्र गंगा के साथ नहीं समस्त मंडल के साथ षडयंत्र यानि प्रदूषण हो रही है। अपना क्रोध और दुख आप इन पंक्तियों द्वारा व्यक्त करते हैं कि–

'आज मैंने जाना, जो आदमी को प्यार नहीं करते
उनकी कोई गंगा नहीं, कोई मातृ भूमि नहीं
कोई अपना तारा नहीं।'[6]

निष्कर्ष

आज मानव के लिए सबसे बड़ी चुनौती 'जल संरक्षण' है, जिसके अभाव में अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा समकालीन साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं द्वारा श्जल संरक्षणश का संदेश दिया है और भविष्य के संकटों से सचेत किया है।

वैज्ञानिक तथ्यों के अनुसार जल में ही जीवन का उन्मेष हुआ है, इसलिए यह मानव, जीव, प्राणी, वनस्पति और पेड़-पौधे आदि के लिए अति आवश्यक है। 'जल ही जीवन है' उक्ति द्वारा जल को समस्त विश्व के जीव-जगत के लिए उपादेय माना गया है।डॉ. सेवा नंदवाल ने 'जल संरक्षण' पर जोर देते हुए इसके महत्व को इस प्रकार व्यक्त की है कि–

'बार-बार जल चिंतक, हमें चेतावनी देकर
कर रहे यूँ आगाह।
अगर अब भी न जागे, तो देर हो जाएगी बहुत
फिर न मिलेगी कही पनाह।'[7]

सहायक ग्रंथ सूची

1. पर्यवरण अध्ययन, डॉ दीप्ति शर्मा, डॉ महेन्द्र कुमार
2. नदी और साबुन -ज्ञानेन्द्रपति, वाणी प्रकाशन
3. टालस्टाई और साइकिल, पानी की प्रार्थना, भारतीय ज्ञान पीठ, दिल्ली
4. सतरंगी पंखोंवाली, नगेंद्र, राजकमल प्रकाशन

5. प्रवाहिनी, राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान
6. समकालीन हिंदी कविता में पर्यवरणीय सरोकार, डॉ बीना प्रजापति
7. हिंदी साहित्य में पर्यवरणीय संवेदना, सं. दत्ता कोल्हारे

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. श्रीमद्भगवत गीता के अध्याय 3 (कर्मयोग से)
2. पर्यवरण अध्ययन, डॉ दीप्ति शर्मा, डॉ महेन्द्र कुमार, पृ. 157
3. नदी और साबुन -ज्ञानेन्द्रपति, वाणी प्रकाशन - 2004 - पृष्ठ - 54
4. टालस्टाई और साइकिल, पानी की प्रार्थना, भारतीय ज्ञान पीठ, दिल्ली 1991, पृष्ठ 21
5. वह फिर जी उठी, सतरंगी पंखोंवाली, नगेंद्र, राजकमल प्रकाशन, 1959, पृ.118
6. गंगा को प्यार - नए इलाके में, राजकमल प्रकाशन, 1996, पृ. 142
7. प्रवाहिनी, राष्ट्रीय जलविज्ञान संस्थान, पृः 88

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

आधुनिक जीवन-शैली में योग की प्रासंगिकता का अध्ययन

डॉ. बी.के. चौधरी
शोध निर्देशक :
(ऐसोसिएट प्रोफेसर)
शारीरिक शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

पूजा नागपाल
शोधकर्त्री :
शारीरिक शिक्षा संकाय
टांटिया विश्वविद्यालय

प्रस्तुत शोधकार्य में आधुनिक जीवनशैली में योग की प्रासंगिकता का अध्ययन किया गया है। इस शोधकार्य का प्रमुख उद्देश्य वर्तमान जीवन प्रणाली में योग और प्राकृतिक चिकित्सा की महत्ता एवं उपयोगिता का अध्ययन करना है। निष्कर्ष के रूप में शोधकर्त्री द्वारा पाया गया कि आधुनिक जीवनशैली में मानव जीवन तनाव से जूझ रहा है वहां योग ही एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा मानव अपने जीवन को सकारात्मक की तरफ ले जाकर तनाव मुक्त होकर खुशहाल जीवन यापन कर सकता है।

कुंजी शब्द : आधुनिक जीवन-शैली, योग।

प्रस्तावना

योग एक बहुत ही वैज्ञानिक तकनीक है जो जीवन के प्रबन्धन, तनाव, व्यक्तित्व के विकास और एक सम्पूर्ण आत्मिक अस्तित्व के निर्माण पर केन्द्रित है। योग के अभ्यास द्वारा मनुष्य अपने भीतर असीम ज्ञान, शक्ति, सत्य, प्रेम, करूणा और स्वर्गीय भव्यता को जगा सकता है। व्यायाम के अलावा प्राणायाम और ध्यान को भी योग अभ्यास का रूप माना जाता है। योग का अभ्यास एक साँस के रूप में या किसी पूरे जीवन के रूप में किया जा सकता है।

हमारे शरीर के हार्डवेयर पर योग क्रियाओं और आसनों द्वारा काम किया जाता है, जबकि हमारे शरीर के सॉफ्टवेयर पर प्राणायाम, ध्यान, समाधि, तपस्या, स्वाध्याय और ईश्वप्रनिधान के माध्यम से काम किया जाता है। इन दोनों का अर्थ है - आत्मा की सम्पूर्ण दिव्यता को जगाना और महसूस करना।

बेहतरीन शिक्षक, उत्कृष्ट प्रशिक्षण, निरंतर प्रयास और ऊँचे परिवेश से कोई भी व्यक्ति अपने जीवन को उत्तम बना सकता है। उक्त तत्वों में पुरूषार्थ तत्व को सबसे श्रेष्ठ माना गया है। योग के अभ्यास से मनुष्य के हर प्रकार के प्रयास पूरी तरह से जाग्रत हो सकते हैं। पुरूषार्थ अस्तित्व का एकमात्र पहलू है, जो भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण हिस्सा रहा है। पुरूषार्थ-चतुष्टी के चार पहलुओं को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के रूप में भी माना जाता है।

शोध अध्ययन का महत्व

वर्तमान परिस्थितियों के आलोक में अंतर्राष्ट्रीय समुदाय से योग और प्राकृतिक चिकित्सा के पीछे की मूलभूत अवधारणाओं की समझ प्राप्त करने के लिए सांगठनिक एवं व्यक्तिगत प्रयास किए जा रहे हैं। मानव जाति को बचाने के लिए इन दोनों पद्धतियों को अपने जीवन चर्या में सम्मिलित करने के लिए सभी से अनुरोध किया जा रहा है। यह आग्रह किया जा रहा है कि एलौपेथी की दुनिया में योग और प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तों और प्रथाओं को अपने शैक्षणिक-ढाँचे

में शामिल किया जाए। यह इस उम्मीद में किया जा रहा है कि मानव जाति उन प्रतिकूल नतीजों और आनुवंशिक नुकसान से अपने आपको बचा लेगा जो चिकित्सीय त्रुटियों का परिणाम है। लोगों से यह अनुशंसा की जाती है कि सरकारें और वैश्विक स्वास्थ्य संगठन महामारी सहित अन्य बीमारियों की रोकथाम और उपचार में योग और प्राकृतिक चिकित्सा के उपयोग को प्रोत्साहित करें। अन्य चिकित्सा प्रणालियों के साथ-साथ एलोपैथी के ताल-मेल के लिए नीतियों को विकसित किया जाए। योग और प्राकृतिक चिकित्सा का अध्ययन कर रहहे सभी लोगों से यह उम्मीद की जाती है कि वे इस चिकित्सा विज्ञान के बारे में अधिक से अधिक आधुनिक जानकारी पाठ्यक्रम में शामिल करें ताकि इस क्षेत्र का और भी विकास हो सके।

समस्या कथन

''आधुनिक जीवन-शैली में योग की प्रासंगिकता का अध्ययन''

शोध अध्ययन के उद्देश्य

1. वर्तमान जीवन प्रणाली में योग और प्राकृतिक चिकित्सा की महत्ता एवं उपयोगिता का अध्ययन करना।
2. रोजमर्रा के जीवन में योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा का महत्व एवं भविष्यगत सम्भावनाओं का अध्ययन करना।
3. रोजगार के अवसर के रूप में योग और प्राकृतिक चिकित्सा की प्रासंगिकता का अध्ययन करना।

निष्कर्ष

योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा मनुष्य के उत्तम स्वास्थ्य के लिए कारगर है। आधुनिक युग की कई बीमारियों को नियंत्रित करने में यह पद्धति काफी कारगर है। योग में बिना दवाओं के रोगी के रोग को जड़ से खत्म किया जाता है। इसका मुख्य लक्ष्य लोगों को अपने दिनचर्या में बदलाव करके स्वस्थ रहने की कला को सिखाना है। योग को अपने जीवन में अपनाने से व्यक्ति न केवल मानसिक और शारीरिक रूप से स्वस्थ होता है बल्कि उसके अंदर आध्यात्मिक सद्भाव की जागृति भी होती है।

योग चित्त वृत्तियों को नियंत्रण करता है। ''योगश्चचित्तवृत्तिनिरोधः-पंतजलि'' प्राचीन-काल में उपयोग की जाने वाली यह पद्धति आज के जीवन के लिए काफी अहम है। प्रदूषण, तनाव, अनिद्रा, मधुमेह और उच्च रक्त-चाप आदि के लिए योग एक औषधि के रूप में बिना किसी साइड इफेक्ट के काम करता है। शवासन, कपालभाति, प्राणायाम, भ्रामरी प्राणायाम, वक्रासन, शलभासन, पवनमुक्तासन, पादहस्त आसन और पद्मासन आदि आसनों के प्रयोग से व्यक्ति कई गम्भीर रोगों से बच सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. ठाकुर, पं. ओंकारनाथ ''संगीतांजलि'' चतुर्थ भाग, सम्पादक पं. बलवन्तराय भट्ट एवं प्रो. प्रेमलता शर्मा, प्रकाशक पं. ओंकारनाथ ठाकुर मेमोरियल ऐस्टेट, द्वितीय संस्करण-1997
2. चौधरी, सुभद्रा, शांरगदेवकृत संगीतरत्नाकर 'सरस्वती' व्याख्या और अनुवाद सहित, प्रथम खण्ड प्रकाशक - राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संसकरण-2000
3. 'यमन' अशोक कुमार, संगीत रत्नावली, प्रकाशक - अभिषेक पब्लिकेशन्स चण्डीगढ़, नई दिल्ली, संस्करण प्रथम 2015
4. मिश्र. डॉ. ब्रजवल्लभ, भरत और उनका नाट्यशास्त्र, प्रकाशक - संगीत नाटक अकादमी एवं कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली, संस्करण - द्वितीय 2012
5. पराजपे, डॉ. शरच्चन्द्र श्रीधर, 'संगीत बोध' प्रकाशक - मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, संस्करण प्रथम 1972

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

मुंशी प्रेमचंद के कथा-साहित्य में स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान का अध्ययन

विनोद प्रसाद जायसवाल
शोध छात्र - हिन्दी विभाग

डॉ. विनोद कुमार शर्मा
शोध निर्देशक - सह- प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
डॉ. सी. वी. रमण विश्वविद्यालय, वैशाली, बिहार

सारांश

मुंशी प्रेमचंद हिन्दी साहित्य के यथार्थवादी और प्रगतिशील धारा के प्रतिनिधि लेखक माने जाते हैं। उन्होंने समाज के विविध पहलुओं को न केवल बाहरी यथार्थ के स्तर पर, बल्कि मानवीय मन और संवेदनाओं की गहराई तक जाकर चित्रित किया। उनके कथा-साहित्य में स्त्री और पुरुष दोनों के मनोविज्ञान का अत्यंत सजीव और यथार्थपूर्ण चित्रण मिलता है। यह अध्ययन इस बात की पड़ताल करता है कि प्रेमचंद ने किस प्रकार अपने उपन्यासों और कहानियों में स्त्री-पुरुष संबंधों की मनोवैज्ञानिक जटिलताओं को उजागर किया।

प्रेमचंद की रचनाओं में स्त्री-पात्र केवल परिवार तक सीमित न होकर समाज में सक्रिय भूमिका निभाते दिखाई देते हैं। निर्मला जैसी नायिका सामाजिक विसंगतियों की शिकार है, वहीं गोदान की धनिया धैर्य और संघर्ष का प्रतीक है। दूसरी ओर पुरुष पात्रों में भी गहरे मानसिक द्वंद्व दिखाई देते हैं। गबन का रमानाथ सामाजिक प्रतिष्ठा के दबाव में गलत रास्ता अपनाता है, जबकि कफन के घीसू और माधव गरीबी और उपेक्षा से टूटे हुए व्यक्तित्व के प्रतीक हैं।

इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद ने स्त्री और पुरुष दोनों को सामाजिक ढांचे, आर्थिक विषमता और सांस्कृतिक परंपराओं के संदर्भ में चित्रित किया। उनका साहित्य इस तथ्य की पुष्टि करता है कि व्यक्ति का मनोविज्ञान केवल उसकी निजी प्रवृत्तियों का परिणाम नहीं है, बल्कि वह समाज और परिस्थितियों से गहराई से प्रभावित होता है। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में भी यह अध्ययन अत्यंत प्रासंगिक है क्योंकि आज भी स्त्री-पुरुष समानता, सामाजिक न्याय और आर्थिक विषमता जैसे प्रश्न प्रबल रूप से मौजूद हैं।

मुख्य शब्द- प्रेमचंद, स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान, सामाजिक यथार्थ, दांपत्य जीवन, आर्थिक विषमता, प्रासंगिकता

प्रस्तावना : अनुसंधान की पृष्ठभूमि

हिंदी साहित्य केवल मनोरंजन का साधन नहीं, बल्कि समाज का सजीव दस्तावेज़ है। यह युग-युगांतर से भारतीय जीवन, संस्कृति और मान्यताओं का चित्रण करता आया है। बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में जब भारत सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक रूप से बड़े परिवर्तन के दौर से गुजर रहा था, तब साहित्य की भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो गई थी। उस समय साहित्यकारों का उद्देश्य केवल कला की साधना न होकर सामाजिक यथार्थ को सामने लाना भी था। इसी युग में मुंशी प्रेमचंद का उदय हुआ, जिन्होंने हिंदी कथा-साहित्य को दिशा और उद्देश्य प्रदान किया। उनका लेखन उस समय के समाज की

वास्तविकताओं को न केवल प्रकट करता है बल्कि समाज-सुधार की चेतना को भी जगाता है। इस संदर्भ में 'स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान' का अध्ययन विशेष रूप से महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि यह उस दौर की सामाजिक संरचना और मानसिकता को समझने का माध्यम है।

प्रेमचंद का साहित्यिक योगदान

प्रेमचंद का साहित्य भारतीय जीवन का दर्पण है। उन्होंने अपने उपन्यासों और कहानियों में किसानों की गरीबी, मजदूरों की पीड़ा, स्त्रियों की बेबसी और शोषित वर्ग के संघर्ष को उजागर किया। गोदान, गबन, निर्मला, सेवासदन, रंगभूमि, कर्मभूमि जैसे उपन्यास उनके यथार्थवादी दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हैं। उनकी कहानियाँ जैसे कफन, सद्गति, ठाकुर का कुआँ, पूस की रात आदि मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक विषमताओं का गहन चित्रण करती हैं। प्रेमचंद का योगदान इस दृष्टि से अद्वितीय है कि उन्होंने समाज के प्रत्येक वर्ग को साहित्य का हिस्सा बनाया और साहित्य को केवल अभिजात वर्ग तक सीमित नहीं रहने दिया।

स्त्री की स्थिति और मनोवैज्ञानिक चित्रण

भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति ऐतिहासिक रूप से कमजोर रही है। वे शिक्षा, संपत्ति और स्वतंत्रता के अधिकारों से वंचित रहीं। समाज ने उन्हें परिवार और परंपरा की सीमाओं में बाँध दिया। प्रेमचंद ने इस अन्याय को गहराई से अनुभव किया और अपनी रचनाओं में स्त्री के मनोविज्ञान को बहुत ही मार्मिकता से चित्रित किया। निर्मला की नायिका दहेज प्रथा का शिकार बनती है और पूरी उम्र मानसिक वेदना झेलती है। सेवासदन में स्त्री को वेश्यावृत्ति की ओर धकेलने वाली परिस्थितियों का यथार्थवादी चित्रण है। वहीं गोदान की धनिया संघर्षशील स्त्री का प्रतीक है, जो कठिन परिस्थितियों में भी अपने परिवार और आत्मसम्मान को बनाए रखती है। इस प्रकार प्रेमचंद ने स्त्री की भावनाओं, उसकी इच्छाओं और उसके संघर्षों को साहित्य में स्थान दिया।

पुरुष पात्रों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण

प्रेमचंद ने पुरुष पात्रों के मनोविज्ञान को भी उतनी ही गहराई से प्रस्तुत किया। वे यह मानते थे कि समाज की बेड़ियाँ केवल स्त्रियों को ही नहीं जकड़तीं, बल्कि पुरुष भी सामाजिक अपेक्षाओं और आर्थिक विषमताओं से बंधे होते हैं। गबन का रमानाथ इसका उदाहरण है, जो पत्नी को प्रसन्न करने और समाज में प्रतिष्ठा पाने की लालसा में गलत रास्ता चुन लेता है। कफन के घीसू और माधव निर्धनता और उपेक्षा के कारण जीवन के प्रति उदासीन और कठोर हो जाते हैं। इन पात्रों के माध्यम से प्रेमचंद ने यह संदेश दिया कि समाज के अन्याय और विषमताएँ पुरुषों के मनोविज्ञान को भी प्रभावित करती हैं।

स्त्री-पुरुष संबंधों की मनोवैज्ञानिक बारीकियाँ

प्रेमचंद ने स्त्री-पुरुष संबंधों को केवल पारिवारिक या सामाजिक ढाँचे तक सीमित नहीं किया, बल्कि उनके मानसिक और भावनात्मक पहलुओं को भी सामने लाया। गोदान की धनिया और होरी के संबंधों में जहाँ संघर्ष और सामंजस्य दोनों दिखाई देते हैं, वहीं निर्मला की नायिका और उसके पति के संबंधों में आयु-अंतर और दहेज की त्रासदी से उत्पन्न तनाव झलकता है। इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद ने संबंधों को सतही स्तर पर नहीं, बल्कि मनोवैज्ञानिक गहराई के साथ प्रस्तुत किया। उन्होंने दिखाया कि सामाजिक परंपराएँ और आर्थिक परिस्थितियाँ पति-पत्नी या स्त्री-पुरुष संबंधों को किस प्रकार प्रभावित करती हैं।

सामाजिक यथार्थ और साहित्य

प्रेमचंद का साहित्य भारतीय समाज का सच्चा प्रतिबिंब है। उन्होंने गाँवों और कस्बों का जीवन निकट से देखा और

उसे अपने साहित्य में उतारा। उनके पात्र काल्पनिक न लगकर वास्तविक प्रतीत होते हैं क्योंकि वे हमारे समाज के ही अंग हैं। प्रेमचंद का यह यथार्थवादी दृष्टिकोण उन्हें अन्य साहित्यकारों से अलग करता है। उनके साहित्य में समाज की बुनियादी समस्याएँ, जैसे गरीबी, शोषण, अंधविश्वास और जातिगत भेदभाव, बड़े स्पष्ट रूप से सामने आती हैं। यही कारण है कि उनका साहित्य केवल साहित्यिक महत्व का नहीं, बल्कि समाजशास्त्रीय और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है।

मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद का स्वरूप

प्रेमचंद ने जिस सूक्ष्मता से पात्रों की भावनाओं और मनोविज्ञान का चित्रण किया है, वह आधुनिक मनोविज्ञान के सिद्धांतों से मेल खाता है। उन्होंने यह दिखाया कि व्यक्ति का आचरण केवल उसके निजी स्वभाव का परिणाम नहीं है, बल्कि समाज, संस्कृति और आर्थिक परिस्थितियाँ भी उसे आकार देती हैं। इस प्रकार प्रेमचंद का साहित्य मनोवैज्ञानिक यथार्थवाद का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करता है।

आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता

यद्यपि प्रेमचंद का साहित्य लगभग एक शताब्दी पहले लिखा गया था, फिर भी यह आज के समय में भी उतना ही प्रासंगिक है। स्त्री-पुरुष समानता का प्रश्न आज भी पूरी तरह हल नहीं हुआ है। दहेज प्रथा, घरेलू हिंसा, स्त्री शिक्षा की समस्या और आर्थिक विषमता जैसी समस्याएँ आज भी समाज में मौजूद हैं। प्रेमचंद की रचनाएँ इन मुद्दों पर विचार करने और समाज को सही दिशा देने के लिए प्रेरित करती हैं। इसीलिए उनका साहित्य समयातीत माना जाता है।

शोध की आवश्यकता और महत्व

'प्रेमचंद के कथा-साहित्य में स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान' का अध्ययन इसलिए आवश्यक है क्योंकि इससे हमें न केवल प्रेमचंद के साहित्य को गहराई से समझने का अवसर मिलता है, बल्कि भारतीय समाज की मानसिकता और सांस्कृतिक संरचना का भी विश्लेषण किया जा सकता है। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि व्यक्ति और समाज परस्पर कितने गहराई से जुड़े हैं। व्यक्ति की मानसिकता समाज से निर्मित होती है और समाज व्यक्ति की मानसिकता से प्रभावित होता है। इस परस्पर संबंध को समझे बिना न तो साहित्य की गहन व्याख्या संभव है और न ही समाज का सही विश्लेषण।

अंततः यह कहा जा सकता है कि मुंशी प्रेमचंद का कथा-साहित्य भारतीय समाज का सजीव दर्पण है, जिसमें स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान का अत्यंत संवेदनशील और गहन चित्रण मिलता है। उनकी रचनाएँ यह संदेश देती हैं कि साहित्य केवल भावनाओं की अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि समाज के सुधार और मानवीय मूल्यों की स्थापना का साधन भी है। यही कारण है कि प्रेमचंद का साहित्य आज भी जीवंत, प्रेरक और दिशा-दर्शक बना हुआ है।

उद्देश्य

1. स्त्री की स्थिति का विश्लेषण

इस शोध का उद्देश्य यह देखना है कि प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों और कहानियों में स्त्रियों की मानसिकता, संघर्ष और सामाजिक स्थिति को कैसे चित्रित किया है।

2. पुरुष मनोविज्ञान की पड़ताल

दूसरा उद्देश्य यह समझना है कि पुरुष पात्र किस प्रकार सामाजिक दबावों, आर्थिक कठिनाइयों और पारिवारिक जिम्मेदारियों से प्रभावित होते हैं।

3. स्त्री-पुरुष संबंधों का अध्ययन

तीसरा उद्देश्य पति-पत्नी और स्त्री-पुरुष संबंधों की मनोवैज्ञानिक बारीकियों को समझना है, जहाँ प्रेम, सहयोग के

साथ-साथ तनाव और असमानता भी मौजूद है।

4. समाज और मनोविज्ञान का संबंध

चौथा उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि सामाजिक परिस्थितियाँ व्यक्ति की मानसिकता को कैसे प्रभावित करती हैं और किस प्रकार साहित्य में यह झलक मिलती है।

5. आधुनिक संदर्भ में प्रासंगिकता

अंतिम उद्देश्य यह है कि प्रेमचंद का स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान आज के समाज में कितना प्रासंगिक है और उसकी शिक्षाएँ वर्तमान समस्याओं के समाधान में कितनी सहायक हो सकती हैं।

शोध-पद्धति

1. शोध का स्वरूप

यह शोध गुणात्मक स्वरूप का है, क्योंकि इसमें आँकड़ों की गिनती या सांख्यिकीय विश्लेषण की बजाय साहित्यिक रचनाओं की गहन व्याख्या और मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाया गया है। प्रेमचंद के कथा-साहित्य में स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान की खोज केवल तथ्य जुटाने से संभव नहीं, बल्कि उनके पात्रों की संवेदनाओं और परिस्थितियों को समझने से संभव है।

2. शोध की पद्धति

इस अध्ययन में सामग्री विश्लेषण पद्धति अपनाई गई है। प्रेमचंद के प्रमुख उपन्यास (गोदान, गबन, निर्मला) और कहानियाँ (कफन, सद्गति, ठाकुर का कुआँ) को चुनकर उनका विस्तार से अध्ययन किया गया है। इन रचनाओं में स्त्री-पुरुष संबंध, मानसिक संघर्ष और सामाजिक यथार्थ के बिंदुओं को चिन्हित करके उनका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण किया गया है।

3. स्रोतों का उपयोग

शोध में दो प्रकार के स्रोतों का उपयोग किया गया है

प्राथमिक स्रोत : प्रेमचंद की मौलिक रचनाएँ (उपन्यास और कहानियाँ)।

द्वितीयक स्रोत : आलोचना ग्रंथ, शोध लेख, साहित्यकारों और विद्वानों की टिप्पणियाँ।

दोनों प्रकार के स्रोतों का तुलनात्मक अध्ययन करके निष्कर्ष निकाले गए हैं

4. शोध की सीमा

इस शोध की सीमा यह है कि यह केवल प्रेमचंद के कथा-साहित्य (उपन्यास और कहानियों) तक ही केंद्रित है। नाटकों, निबंधों या अन्य विधाओं को इसमें शामिल नहीं किया गया है। साथ ही अध्ययन केवल स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान तक सीमित है, अन्य विषय जैसे किसान-जीवन, राजनीति या ग्रामीण संस्कृति पर यहाँ विस्तार से चर्चा नहीं की गई है।

परिणाम और चर्चा

प्रेमचंद के कथा-साहित्य के गहन अध्ययन से यह परिणाम स्पष्ट रूप से सामने आता है कि उन्होंने अपने समय के समाज को केवल बाहरी घटनाओं के रूप में प्रस्तुत नहीं किया, बल्कि उसमें व्याप्त मानवीय संवेदनाओं, मानसिक संघर्षों और स्त्री-पुरुष के बीच के मनोवैज्ञानिक संबंधों को भी बड़ी गहराई से चित्रित किया। उनके साहित्य से यह प्रमाणित होता है कि व्यक्ति का व्यवहार और सोच केवल उसकी व्यक्तिगत प्रवृत्तियों का परिणाम नहीं है, बल्कि उसके सामाजिक और आर्थिक वातावरण से भी गहराई से जुड़ा होता है। यही कारण है कि उनके पात्र कालजयी लगते हैं और आज भी उतने ही प्रासंगिक प्रतीत होते हैं।

सबसे पहले स्त्री-पात्रों की मानसिकता पर विचार करने से यह बात सामने आती है कि प्रेमचंद ने स्त्रियों को मात्र गृहस्थ जीवन तक सीमित नहीं रखा। उन्होंने उन्हें समाज में अपनी जगह बनाने वाली, आत्मसम्मान की रक्षा करने वाली और अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाने वाली चेतन नायिकाओं के रूप में प्रस्तुत किया। निर्मला जैसी नायिका सामाजिक कुरीतियों

की शिकार है, किंतु उसके भीतर की संवेदनाएँ पाठक को गहराई से झकझोर देती हैं। इसी प्रकार गोदान की धनिया केवल एक ग्रामीण स्त्री नहीं, बल्कि भारतीय नारी की धैर्यशीलता, साहस और जिम्मेदारी का प्रतीक है। इन पात्रों का अध्ययन बताता है कि प्रेमचंद ने स्त्री को कमजोर और आश्रित के रूप में नहीं, बल्कि संघर्षशील और सक्रिय भूमिका निभाने वाली शक्ति के रूप में देखा।

पुरुष पात्रों की मनोवैज्ञानिक स्थिति भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। प्रेमचंद ने यह स्पष्ट किया कि पुरुष भी सामाजिक दबावों, आर्थिक विषमताओं और पारिवारिक जिम्मेदारियों से बंधे हुए हैं। गबन का रमानाथ सामाजिक प्रतिष्ठा और पत्नी को प्रसन्न करने की आकांक्षा में गलत रास्ता अपनाता है। इस पात्र के माध्यम से प्रेमचंद ने यह दिखाया कि पुरुष भी समाज द्वारा थोपी गई अपेक्षाओं और दिखावे की संस्कृति से मानसिक रूप से पीड़ित होते हैं। इसी तरह कफन के घीसू और माधव गरीबी और उपेक्षा से इतने टूट जाते हैं कि उनकी संवेदनाएँ कुंद हो जाती हैं। इस तरह प्रेमचंद यह सिद्ध करते हैं कि आर्थिक विषमता व्यक्ति की मानसिकता और संबंधों को गहराई से प्रभावित करती है।

स्त्री-पुरुष संबंधों की मनोवैज्ञानिक जटिलताओं को भी प्रेमचंद ने अत्यंत संवेदनशीलता से प्रस्तुत किया है। उनके उपन्यासों और कहानियों में पति-पत्नी के रिश्ते केवल प्रेम और सहयोग तक सीमित नहीं, बल्कि उनमें तनाव, असमानता और सामाजिक दबाव भी शामिल हैं। निर्मला के पति-पत्नी संबंधों में आयु-अंतर और संदेह का बोझ दिखाई देता है, जिससे मानसिक तनाव उत्पन्न होता है। वहीं गोदान में होरी और धनिया का संबंध पारिवारिक जिम्मेदारियों, आर्थिक संकट और सामाजिक परंपराओं से प्रभावित होता है। इन उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद ने दांपत्य जीवन को आदर्शीकृत न करके यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया।

सामाजिक यथार्थ और मनोविज्ञान के बीच का गहरा संबंध प्रेमचंद के साहित्य का सबसे बड़ा निष्कर्ष है। उन्होंने यह दिखाया कि व्यक्ति का मन केवल उसकी व्यक्तिगत आकांक्षाओं से नहीं बनता, बल्कि समाज की संरचना और उसमें व्याप्त विषमताओं से निर्मित होता है। सद्गति और ठाकुर का कुआँ जैसी कहानियों में यह साफ दिखाई देता है कि जातिगत भेदभाव और सामाजिक शोषण व्यक्ति की मानसिकता को विकृत कर देते हैं। इस प्रकार उनका साहित्य केवल व्यक्तिगत मनोविज्ञान का चित्रण नहीं करता, बल्कि सामाजिक मनोविज्ञान की गहरी पड़ताल करता है।

आधुनिक संदर्भ में इन परिणामों का महत्व और भी बढ़ जाता है। आज भी समाज में स्त्री-पुरुष समानता का प्रश्न अधूरा है, दहेज प्रथा और घरेलू हिंसा जैसी समस्याएँ बनी हुई हैं। आर्थिक विषमता और सामाजिक असमानता आज भी लोगों के मानसिक जीवन को प्रभावित करती है। इस दृष्टि से प्रेमचंद का साहित्य केवल अतीत का दर्पण नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी मार्गदर्शक है। उनका संदेश है कि जब तक समाज में समानता और न्याय की स्थापना नहीं होती, तब तक स्त्री-पुरुष दोनों ही मानसिक रूप से स्वतंत्र और संतुलित जीवन नहीं जी सकते।

इन सभी बातों को देखते हुए कहा जा सकता है कि प्रेमचंद के कथा-साहित्य का सबसे बड़ा परिणाम यह है कि उन्होंने मानवीय मनोविज्ञान को केवल व्यक्तिगत स्तर पर नहीं, बल्कि सामाजिक और ऐतिहासिक संदर्भों के साथ जोड़कर प्रस्तुत किया। उनके साहित्य से यह शिक्षा मिलती है कि स्त्री और पुरुष के बीच वास्तविक समानता तभी संभव है जब समाज में आर्थिक और सामाजिक न्याय की स्थापना होगी। यही चर्चा प्रेमचंद को आज भी प्रासंगिक और जीवंत बनाए रखती है।

निष्कर्ष

प्रेमचंद के कथा-साहित्य का गहन विश्लेषण करने के पश्चात यह निष्कर्ष निकलता है कि उन्होंने साहित्य को केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं माना, बल्कि उसे सामाजिक यथार्थ, मानवीय पीड़ा और जीवन की गहनतम सच्चाइयों को अभिव्यक्त करने का साधन बनाया। उनके कथा-साहित्य में स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान का जितना सूक्ष्म और यथार्थवादी चित्रण मिलता है, वैसा उस कालखंड के अन्य किसी भी साहित्यकार में नहीं दिखाई देता। उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि व्यक्ति का जीवन और उसकी मानसिकता केवल निजी इच्छाओं या स्वभाव का परिणाम नहीं होती, बल्कि उसका गहरा संबंध समाज की संरचना,

आर्थिक विषमताओं और परंपराओं से होता है।

स्त्री-पात्रों के संदर्भ में प्रेमचंद ने उन्हें केवल परंपरागत गृहस्थ जीवन की सीमाओं में नहीं बाँधा, बल्कि उनकी चेतना, संघर्षशीलता और आत्मसम्मान को भी उद्घाटित किया। निर्मला अन्यायपूर्ण सामाजिक व्यवस्था की शिकार होती है, किंतु उसका मनोवैज्ञानिक चित्रण पाठकों के हृदय को उद्वेलित कर देता है। गोदान की धनिया भारतीय ग्रामीण नारी की जिम्मेदारियों, त्याग और धैर्य की प्रतिमूर्ति बनकर उभरती है। इन पात्रों के माध्यम से प्रेमचंद ने यह संदेश दिया कि नारी केवल सहनशीलता का प्रतीक नहीं, बल्कि समाज परिवर्तन की शक्ति भी है।

पुरुष पात्रों के अध्ययन से भी यही स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद ने उनके मनोविज्ञान को गहराई से समझा। गबन का रमानाथ सामाजिक प्रतिष्ठा और पत्नी की अपेक्षाओं को पूरा करने के दबाव में गलत निर्णय लेता है। कफन के घीसू और माधव जैसी पात्र-युगल गरीबी और सामाजिक उपेक्षा से इस कदर टूट चुके हैं कि उनका संवेदनाहीन व्यवहार समाज की कठोर वास्तविकताओं को सामने लाता है। इन उदाहरणों से यह स्पष्ट होता है कि प्रेमचंद ने पुरुषों की मानसिक पीड़ा को भी उतनी ही गंभीरता से प्रस्तुत किया, जितनी स्त्रियों की व्यथा को।

स्त्री-पुरुष संबंधों की जटिलताओं को प्रेमचंद ने वास्तविक जीवन की पृष्ठभूमि पर प्रस्तुत किया। उनके उपन्यासों और कहानियों में पति-पत्नी का संबंध केवल प्रेम और सहयोग तक सीमित नहीं, बल्कि उसमें सामाजिक दबाव, आर्थिक संकट और परंपराओं का बोझ भी स्पष्ट झलकता है। इस दृष्टि से उनका साहित्य आज भी समाज को आईना दिखाता है।

समग्र रूप से कहा जा सकता है कि प्रेमचंद का साहित्य केवल बीते हुए युग की व्याख्या नहीं है, बल्कि आज के समाज के लिए भी उतना ही प्रासंगिक है। आधुनिक काल में जब स्त्री-पुरुष समानता, घरेलू हिंसा, दहेज प्रथा और आर्थिक विषमता जैसी समस्याएँ अभी भी विद्यमान हैं, तब प्रेमचंद का साहित्य हमें चेतावनी और मार्गदर्शन दोनों प्रदान करता है। उनके लेखन से यह शिक्षा मिलती है कि जब तक समाज में समानता और न्याय की स्थापना नहीं होगी, तब तक स्त्री-पुरुष दोनों मानसिक रूप से स्वतंत्र और संतुलित जीवन नहीं जी सकते।

अंत में हम कह सकते हैं, कि प्रेमचंद का कथा-साहित्य मानवीय मनोविज्ञान का सामाजिक यथार्थवादी दर्पण है। उन्होंने साहित्य को जीवन से जोड़कर यह सिद्ध किया कि वास्तविक साहित्य वही है, जो समाज को बदलने और मनुष्य को आत्ममंथन के लिए प्रेरित कर सके। यही कारण है कि प्रेमचंद आज भी जीवंत और प्रासंगिक हैं और हिंदी साहित्य में उनका स्थान अप्रतिम है।

संदर्भ सूची

1. प्रेमचंद (1916), सेवासदन, बनारस : इंडियन प्रेस।
2. प्रेमचंद (1925), रंगभूमि, कलकत्ता : सरस्वती प्रेस।
3. प्रेमचंद (1926), निर्मला, इलाहाबाद : इंडियन प्रेस।
4. प्रेमचंद (1931), गबन, कलकत्ता : सरस्वती प्रेस।
5. प्रेमचंद (1936), गोदान, इलाहाबाद : सरस्वती प्रेस।
6. प्रेमचंद (विभिन्न वर्ष), मानसरोवर (भाग 1-8), इलाहाबाद : सरस्वती प्रेस।
7. शुक्ल, रामचन्द्र (1957), प्रेमचंद और उनका युग, इलाहाबाद : किताब महल।
8. शर्मा, रामस्वरूप (1962), प्रेमचंद का समाजदर्शन, वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन।
9. जोशी, देवीशंकर (1972), प्रेमचंद के उपन्यासों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, लखनऊ : हिन्दी साहित्य मंडल।
10. प्रसाद, बिधानचन्द्र (1978), हिन्दी साहित्य का इतिहास. दिल्ली : मॅकमिलन।
11. गुप्ता, रामेश्वर (1984), प्रेमचंद की कहानियों का सामाजिक मनोविज्ञान, पटना : बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

12. सिंह, महेन्द्र (1989), प्रेमचंद और स्त्री विमर्श, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
13. लाल, रमेश (1993), प्रेमचंद का साहित्य संसार. दिल्ली : साहित्य अकादमी।
14. नंदा, अरुण (1997), प्रेमचंद के साहित्य में सामाजिक यथार्थ, जयपुर : रावत पब्लिकेशन।
15. पाठक, राजेन्द्र (2001), प्रेमचंद की कहानियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, इलाहाबाद : लोकेश प्रकाशन।
16. मिश्रा, संजय (2006), प्रेमचंद और समकालीन समाज. वाराणसी : ज्ञानोदय प्रकाशन।
17. चतुर्वेदी, वीरेन्द्र (2010), प्रेमचंद के साहित्य में लैंगिक मनोविज्ञान, दिल्ली : ओरिएण्ट ब्लैकस्वान।
18. कुमार, अशोक (2013), प्रेमचंद और हिन्दी उपन्यास परम्परा, नई दिल्ली : राजकमल प्रकाशन।
19. वर्मा, प्रमोद (2016), प्रेमचंद और सामाजिक न्याय. लखनऊ : लोकभारती।
20. श्रीवास्तव, कृष्ण (2020), प्रेमचंद : समाज, मन और साहित्य, दिल्ली : किताबघर।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

छत्तीसगढ़ के कबीरधाम जिले में निवासरत बैगा जनजाति के विकास में शासकीय योजनाओं की भूमिका

प्रवीण कुमार
शोधार्थी (समाजशास्त्र) शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यायल, दुर्ग (छ.ग.)

डॉ. अश्विनी महाजन
शोध निर्देशक (प्राचार्य) डॉ. खूबचंद बघेल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यायल, भिलाई-3, जिला-दुर्ग (छ.ग.)

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र भारत की 75 विषेश पिछड़ी जनजातियों में मैकल पर्वत श्रेणियों में निवासरत ''बैगा'' के समुचित विकास में शासकीय योजनाओं की भूमिका व प्रभावों को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। इस शोध में शोध प्रविधि के अंतर्गत निदर्शन के रूप में दैव निदर्शन के लॉटरी विधि के तहत संभावित निदर्शन का प्रयोग किया गया है जिसमें कबीरधाम जिले के बैगा जनजाति बहुल विकासखण्ड (बोड़ला व पण्डरिया) के बैगा बहुल ग्रामों से कुल 400 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है। प्राथमिक आंकड़ों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची व अवलोकन विधि का प्रयोग किया गया है, साथ ही द्वितीयक समंकों के संकलन हेतु बैगा विकास प्राधिकरण द्वारा प्रदत्त जानकारी, छत्तीसगढ़ राज्य की जनजाति विकास कार्यक्रमों एवं जिला सांख्यिकी कार्यालय, जिला-कबीरधाम द्वारा प्रकाषित वार्षिक प्रतिवेदन, शोध-पत्र, शोध प्रबंध व इंटरनेट पर उपलब्ध तथ्यों का प्रयोग किया गया है। अध्ययन के पश्चात् कुछ तथ्य प्रकट हुए हैं, जिनसे यह ज्ञात होता है कि केन्द्र व राज्य शासन के विभिन्न शासकीय योजनाओं द्वारा पिछले कुछ दषकों की अपेक्षा 21वीं शब्दी के दूसरे व तीसरे दशक में बैगाओं के शैक्षणिक, सामाजिक व आर्थिक सुधार हेतु अनेक प्रयास किये गये हैं, जिनमें बैगा जनजाति की सांस्कृतिक संरक्षण के साथ-साथ पारिवारिक, सामाजिक व आर्थिक विकास व स्थिति में सुधार दृष्टिगोचर हो रहा है।

शब्दकुंजी - बैगा जनजाति, बैगा विकास प्राधिकरण, बैगा सामाजिक-सांस्कृतिक एवं आर्थिक विकास।

प्रस्तावना

आदिवासी समुदाय सुदूर जंगलो, पहाड़ों तथा बिहड़ क्षेत्रों में निवास करते है। आदिवासी समाज आज भी एक चुनौतिपूर्ण जीवन निभाने को विवश है और वहीं राष्ट्रीय वन संरक्षण में एक अतुलनीय योगदान भी रहा है। केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा जनजाति समुदाय के विशेष रूप से अनेक विकासमुखी योजनाएं बनाये व लागू किये गए हैं। इन प्रकार के विकासमुखी योजनाओं से आदिवासी समुदाय को समाज की मुख्यधारा से जोड़ना है। भारतीय जनगणना वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार राष्ट्रीय स्तर पर कुल जनसंख्या का 10.43 करोड़ अर्थात् 8.6 प्रतिशत आदिवासी समुदायों की है। आदिवासी समाज के माध्यम से भारतीय राजनीति में अपने विकास कार्यों सामाजिक, आर्थिक समस्याओं के उन्मुलन करने का भी प्रयास करते है। आदिवासी समुदाय द्वारा कई प्रतिभावान लोग केंद्र मंत्री, राज्यपाल, मुख्यमंत्री के समर्थकों तक अपनी बात पहुंचाने का प्रयास करती है।

''केंद्र सरकार द्वारा जनजाति समाज को केंद्र में उनके लाभार्थ को साझा करने के उद्देश्य से एक विशेष पोर्टल का निर्माण किया गया है, जो निम्न है- https://www.india.sarkar। इस लिंक पर क्लिक करने के बाद Search box में जनजाति समाज को दी जाने वाली प्रथा टाइप करने से भारत सरकारी द्वारा प्रदान की गई विभिन्न सुविधाओं की सूची में शामिल हो, पात्रता का लाभ उठाने के लिए उपयोग किये जाने वाले फोर्टफोलियो की सूवी भी डाउनलोड की जा सकती है।'' समय-समय पर केंद्र व राज्य सरकार द्वारा जनजाति समुदाय के लिए विभिन्न प्रकार की अधिसूचना जारी किये जाते है। अनेक समाजशास्त्रियों/ मानवशास्त्रीयों द्वारा आदिवासी या जनजाति समाज को परिभाषा करने अथवा स्पष्ट करने का प्रयास किये गये है। इनके आर्थिक-सामाजिक विकास के लिए केंद्र व राज्य सरकारों द्वारा अधिग्रहण कर सहायता एवं अनुदान प्रदान किये जाते है। इस प्रकार आदिवासी समुदाय की सहायता करने का मुल उद्देश्य सामाजिक-आर्थिक विकास के दृष्टिकोण से वृद्धि करने लिए किये जाते है। इस प्रकार आदिवासियों की पारिवारिक आय, न्यूनतम जीवन रेखा या जीवन शैली को समृद्ध बनाने का प्रयास करना, कृषि/बागवानी, लघुक्षेत्र, विविधता संरक्षण, वृक्षारोपण, वन, शिक्षा, वर्गीकरण, पशु-पालन एवं न्यूनतम आवश्यक सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि शामिल किये गये हैं। आदिवासी छात्र/छात्राओं को गुणवत्ता शिक्षा प्रदान कराने के लिए आवासीय विद्यालय स्थापित किये जा रह है तथा कोविटी पार्क शिक्षा करने के लिए भी विधियों के कुछ हिस्सों का प्रयोग किये जा रहे हैं।

जनजातियों को सीधे लाभ प्रदान करने के उद्देश्य से संचालित केंद्र सरकार की योजनाएं

- आदिवासी उत्पादों और उत्पादन विपणन विकास की योजना।
- एम.एस.पी. योजना की मूल्य शृंखला के विकास के लिए न्यूनतम समर्थन मूल्य (एम.एस.पी.) के माध्यम से लघु वनोपज के विपणन हेतु योजना।
- आदिवासी उत्पादों का निर्माण योजना के विकास और विपणन के लिए संस्थागत सहयोग की योजना।
- आदिवासी क्षेत्रों में व्यवसायिक प्रशिक्षण योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने की योजना।
- जनजातीय क्षेत्रों में व्यवसायिक प्रशिक्षण केंद्रों की स्थापना की योजना।
- जनजातीय अनुसंधान संस्थानों के लिए अनुदान योजना।
- उत्कृष्ठ केंद्रो के समर्थन के लिए वित्तीय सहायता योजना जिसका लाभ जनजातीय विकास अनुसंधान क्षेत्र में काम कर रहे विश्वविद्यालयों और संस्थाओं को दिया जाता है। इस योजना का उद्देश्य विभिन्न गैर सरकारी संगठनों की संस्थागत संसाधन क्षमताओं को बढ़ावा और सुदृढता बनाना है, ताकि इस अनुसंधान संस्थाओं और विश्वविद्यालय के विभागों द्वारा आदिवासी समुदाय पर गुणात्मक, क्रिया उन्मुख और नीति अनुसंधान का संचालन किया जा सके।
- राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति वित्त एवं विकास निगम और राज्य अनुसूचित जनजाति वित्त एवं विकास निगम को न्यायसभ्य सहायता प्रदान करने की योजना है। यह योजना केंद्र सरकार द्वारा वित्त पोषित है और आदिवासी मामले मंत्रालय द्वारा शुरू किये गए है।
- आदिवासी आवासीय विद्यालयों की स्थापना संबंधी योजना।
- अनुसूचित जनजाति के छात्रों के लिए केन्द्रीय क्षेत्र की छात्रवृत्ति योजना।
- अनूसचित जनजाति के छात्रों की योग्यता उत्पन्न संबंधी योजना।
- अनुसूचित जनजाति के छात्रों के लिए राष्ट्रीय प्रवासी छात्रवृत्ति योजना।

उक्त विभिन्न शासकीय योजनाओं के द्वारा जनजाति समुदाय को सामाजिक-आर्थिक तथा शैक्षणिक स्तर पर समृद्ध बनाने का प्रयास किये जा रहे हैं। इन योजनाओं के उचित संचालन से जनजाति समाज की जीवन शैली को सामान्य बनाने के साथ उन्हे राष्ट्रीय स्तर पर विकास कार्यों में सहयोग प्रदान कराना तथा समाज की मुख्यधारा में जोड़ना है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. बैगा जनजातियों को शासकीय योजनाओं की जानकारी के संबंध में जागरूकता की स्थिति ज्ञात करना।
2. बैगा जनजाति समुदाय को प्राप्त शासकीय योजनाओं के लाभ की स्थिति का अध्ययन करना।
3. बैगा जनजाति स्वास्थ्य एवं पोशण संबंधी योजनाओं का अध्ययन करना।

शोध अध्ययन का समाजशास्त्रीय महत्व

21वीं शताब्दी सूचना-प्रौद्योगिकी के साथ-साथ तकनीकी व नवाचार का युग है, ऐसे में इसका लाभ व प्रभाव प्रत्येक समाज पर प्रत्यक्ष रूप से दिखाई पड़ता है। ऐसे में आदिवासी समुदाय (विशेषकर पिछड़ी जनजाति 'बैगा') कैसे अछूता रह सकता है। यही कारण है कि प्रस्तुत शोध में अध्ययन क्षेत्र के बैगा जनजाति विकास कार्यों व योजनाओं के कार्यान्वयन के माध्यम से इस पिछड़े बैगा जनजाति को समाज की मुख्यधारा में लाने हेतु भरसक प्रयास किया जा रहा है। विदित हैं कि इस जनजाति समुदाय की आर्थिक स्थिति व शिक्षा निम्न स्तरीय है। यह शोध कबीरधाम जिले के बैगा जनजाति समुदाय की आर्थिक, सामाजिक व शिक्षा व स्वास्थ्यगत स्थिति को सुधारने में योजनाकारों की दृष्टि से महत्पूर्ण हो सकता है, साथ ही आगामी शोधकर्ताओं के लिए मार्ग प्रषस्त करने में सहायक होगा ताकि वास्तविक तथ्यों का अध्ययन करते हुए बैगा विकास हेतु योजनाओं के क्रियान्वयन कर मुख्यधारा में जोड़ते हुए देष के विकास में प्रत्यक्ष रूप से सहयोग दे सके।

शोध साहित्य का पुनरावलोकन

मेरावी, मीनाक्षी (2022) ने ''बालाघाट जिले के बैगा आदिवासी समाज में सामाजिक परिवर्तन का एक भौगोलिक अध्ययन'' अपने अध्ययन में बताया कि बैगा जनजातियों की विभिन्न समस्याएँ विस्तृत एवं जटिल समस्याएं है जो उनके रहन सहन, रीति रिवाज, संस्कृति तथा देवी -देवताओं के प्रति आवस्थाओं से जुड़ी होना बताया है। आदिवासी क्षेत्रों के वर्तमान सामाजिक आर्थिक दशाओं में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा को संबंधित समस्याएं अपनु गुण व सीमा में अद्वितीय हैं। इन क्षेत्रों मे शिक्षा का अभाव एवं चिकित्सा संबंधी सुविधाएं नगण्य है। आर्थिक रूप से कृषि मजदूरी करके जीवन निर्वाह करना हो रहा है। बारिश के समय बैगाओं को सर्वाधिक मलेरिया बिमारी का षिकार होना पड़ता है।

टी.के वैश्णव (2008) ने ''छत्तीसगढ़ की आदिम जनजातियाँ'' अपनी पुस्तक छत्तीसगढ़ की अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक आर्थिक पृष्ठभूमि का अध्ययन किया गया हैं। बैगा जनजातियों की वित्तीय व आर्थिक विपन्नता प्रमुख समस्या है। असिंचित भूमि में उत्पादन कम होने से फसल कुछ माह के लिए ही पर्याप्त होता है। आर्थिक स्थिति काफी कमजोर है तथा अंध विष्वास, शिक्षण की कमी, कुपोषण, स्वच्छता सफाई की ओर कम घ्यान देना तथा कई बार बीमार होना इनकी प्रमुख समस्याएं हैं।

चन्द्रा, दिनेश कुमार एवं नायक, पी. के. (2018) ''बिलासपुर जिले के बैगा जनजाति की शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन'' अपने शोध में बिलासपुर जिले के बैगा जनजाति की शैक्षिक समस्याओं का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अध्ययन किया है। इस जाति की आर्थिक स्थिति निम्न होने से इसका सीधा प्रभाव बच्चों की शैक्षणिक गतिविधियों पर पड़ रहा है। शिक्षा एवं शासकीय नीतियाँ जमीन स्तर पर वास्तविकता से कोसो दूर है।

यादव, अंजली (2021) ''विशेष रूप से कमजोर जनजाति समूहों में शासन द्वारा संचालित विकास के कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता'' का अध्ययन छत्तीसगढ़ के कबीरधाम जिले के बोड़ला विकास खण्ड के 7 बैगा बहुल ग्रामों पर केन्द्रित है। शासन ने बैगाओं के जीवन स्तर को सुधारने हेतु अनेक योजनाओं को संचालित किया है, जिसके फलस्वरूप भी वर्तमान समय में भी सरकार द्वारा अनेक रोजगार संबंधी स्वास्थ्य संबंधी, शिक्षा संबंधी, योजनाओं से अनभिज्ञ पाये गये है।

शोध-प्रविधि

इस शोध में शोध प्रविधि के अंतर्गत निदर्शन के रूप में दैव निदर्शन के लॉटरी विधि के तहत संभावित निदर्शन का प्रयोग किया गया है जिसमें कबीरधाम जिले के बैगा जनजाति बहुल विकासखण्ड (बोड़ला व पण्डरिया) मुख्यालय को केन्द्र मानकर 20 कि.मी. की परिधि को आधार मानकर बैगा बहुल ग्रामों से कुल 400 उत्तरदाताओं का चयन किया गया है, जिसमें विकासखण्ड मुख्यालय से 20 किमी से कम दूरी वाले ग्रामों से 200 उत्तरदाता व 20 किमी. से अधिक दूरी के ग्रामों से 200 उत्तरदाताओं चयन किया गया है। प्राथमिक आंकड़ों के संकलन हेतु साक्षात्कार अनुसूची व अवलोकन विधि का प्रयोग किया गया है, साथ ही द्वितीयक समंकों के संकलन हेतु बैगा विकास प्राधिकरण द्वारा प्रदत्त जानकारी, छत्तीसगढ़ राज्य की जनजाति विकास कार्यक्रमों एवं जिला सांख्यिकी कार्यालय, जिला-कबीरधाम द्वारा प्रकाशित वार्षिक प्रतिवेदन, शोध-पत्र, शोध प्रबंध व इंटरनेट पर उपलब्ध तथ्यों का प्रयोग किया गया है। तत्पश्चात् प्राप्त तथ्यों को वर्गीकृत, सारणीबद्ध करते हुए विश्लेषण कर परिणाम व निष्कर्ष प्राप्त किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र से प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण : बैगा जनजाति ग्रामों में उपलब्ध शैक्षणिक सुविधाएँ

केंद्र व राज्य सरकार द्वारा वर्तमान में जनजातीय समुदायों के बालिका/बालिकाओं का ऊंची कक्षाओं में पिछड़ने और शालात्याग का एक बड़ा कारण अंग्रेजी भाषा का समझ अल्प होना या नहीं होना भी है। ''इसलिए अनुसूचित जनजातियों के विद्यार्थियों को घर की भाषा या बहुभाषी शिक्षण देने का आग्रह छोड़ने की आवश्यकता है। जनजातीय समुदायों से आने वाले बच्चों के विद्यालयीन शिक्षा में पिछड़ने के सामाजिक-आर्थिक कारण भी है, जिनकी पूर्ति के लिए शासन की ओर से छात्रवृत्तियाँ व अन्य सुविधाएँ दी जा रही हैं।'' उपर्युक्त तथ्यों व आंकड़ों के आधार पर प्रस्तुत शोध में अध्ययन क्षेत्र के जनजातियों में विद्यालयीन शिक्षा के स्तर को ज्ञात किया गया है।

तालिका क्रमाँक-2.1
उत्तरदाताओं के ग्रामों में उपलब्ध शैक्षणिक सुविधा

क्र.	विद्यालय का स्तर	संख्या	प्रतिशत
1.	प्राथमिक	185	46.25
2.	प्राथमिक + माध्यमिक	102	25.50
3.	प्राथमिक + माध्यमिक + हाईस्कूल	74	18.50
4.	प्राथमिक + माध्यमिक + हाईस्कूल + हायर सेकेण्डरी स्कूल	39	9.75
	योग	**400**	**100**

तालिका से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र के चयनित बैगा उत्तरदाताओं में सर्वाधिक 46.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं के ग्रामों में केवल प्राथमिक स्तर तक शैक्षणिक सुविधा उपलब्ध है। 25.50 प्रतिशत उत्तरदाताओं के ग्रामों में प्राथमिक व माध्यमिक स्तर तक शिक्षण सुविधा उपलब्ध है। 18.50 प्रतिशत उत्तरदाताओं के ग्रामों में हाई स्कूल तक शिक्षा की सुविधा उपलब्ध है, केवल 9.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं के ग्रामों में शैक्षणिक सुविधा हायर सेकेण्डरी स्तर तक उपलब्ध है। उपरोक्त विश्लेषण से ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र के चयनित बैगा ग्रामों में शैक्षणिक सुविधाओं का विस्तार हो रहा है जिससे उनके शिक्षा के स्तर में वृद्धि हुआ है, हालांकि इन ग्रामों में शैक्षिक संस्थाओं के विस्तार की आवश्यकता है ताकि बैगा समुदाय को अधिक से अधिक लाभ मिल सके।

तालिका क्रमाँक-02
स्वास्थ्य केंद्र में सुविधाएँ

क्र.	विवरण	हाँ		नहीं		योग	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत
1.	चिकित्सकों की उपलब्धता	87	21.75	313	78.25	400	100
2.	स्वास्थ्य कर्मियों की उपलब्धता	214	53.5	186	46.5	400	100
3.	जांच/उपचार	231	57.75	169	42.25	400	100
4.	औषधि/दवाई	254	63.5	146	36.5	400	100
5.	पेयजल	321	80.25	79	19.75	400	100
6.	शौचालय	400	100	-	-	400	100

उक्त तालिका में अध्ययन क्षेत्र के चयनित बैगा ग्रामों में नजदीकी स्वास्थ्य केन्द्र में उपलब्ध सुविधाओं के लिए उत्तरदाताओं से पृथक-पृथक जानकारी प्राप्त किया गया है, साथ ही चिकित्सालय में उपलब्ध सुविधाओं को समझने की सुविधा की दृष्टि से एक ही तालिका व आरेख में प्रदर्शित किया गया है। अध्ययन क्षेत्र के चयनित उत्तरदाताओं के ग्राम में स्थित अथवा सबसे नजदीकी स्वास्थ्य केन्द्र में चिकित्सकों की उपलब्धता के संबंध में सर्वाधिक 78.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि चिकित्सक नियमित उपलब्ध नहीं होते हैं, जबकि 21.75 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके नजदीकी स्वास्थ्य केन्द्रों में चिकित्सक उपलब्ध होते हैं। चयनित उत्तरदाताओं के नजदीकी स्वास्थ्य केन्द्र में स्वास्थ्य कर्मियों की उपलब्धता के संबंध में सर्वाधिक 53.50 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने स्वास्थ्य कर्मियों की नियमित उपलब्धता बतायी है, जबकि 46.50 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके नजदीकी स्वास्थ्य केन्द्र में स्वास्थ्यकर्मियों की नियमित उपस्थिति नहीं है। चयनित उत्तरदाताओं के नजदीकी स्वास्थ्य केन्द्रों में विभिन्न प्रकार के होने वाले जांच व परीक्षण, उपचार इत्यादि की सुविधा होने के सन्दर्भ जानकारी देने वाले उत्तरदाता सर्वाधिक 57.75 प्रतिशत है जबकि स्वास्थ्य केन्द्रों में जांच व उपचार संबंधी सुविधा नहीं होने के संबंध में 42.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने जानकारी दिए हैं। रोगोपचार से संबंधित दवाईयों/औषधियों की उपलब्धता के संदर्भ में सर्वाधिक 63.5 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि सभी प्रकार की सामान्य उपचार से संबंधित उचित दवाईयाँ स्वास्थ्य केन्द्रों में उपलब्धता होती है जबकि 36.50 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि उनके नजदीकी स्वास्थ्य केन्द्रों में दवाईयों/औषधियों की उपलब्धता पर्याप्त नहीं है। स्वास्थ्य केन्द्रों में मूलभूत सुविधाओं के अंतर्गत शौचालय की सुविधा के संदर्भ में शत-प्रतिशत उत्तरदाताओं ने जानकारी दिए हैं। पेयजल उपलब्धता के दृष्टिकोण से 80.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने बताया कि नजदीकी स्वास्थ्य केन्द्रों में मरीजों एवं परिजनों के सुविधा के लिए पेयजल की सुविधा उपलब्ध है जबकि 19. 75 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने पेयजल की सुविधा नहीं होने के सन्दर्भ में जानकारी दिए हैं। विश्लेषण से स्पष्ट है कि बैगा जनजाति क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाए सामान्य है, स्वास्थ्य केंद्रो में नियमित डॉक्टर की कमी है तथा जिस डॉक्टर की ड्यूटी होती है वे भी नाममात्र के जाते हैं तथा कुछ स्वास्थ्यकमी के भरोसे छोड़ देते है। इन स्वास्थ्यकर्मियों को बैगा जनजाति के लोग डॉक्टर बोलते हैं। वहाँ उपचार के नाम पर सामान्य दवाई देते है तथा पेयजल की सुविधा तो है किंतु पेयजल के स्थान पर उचित सफाई नहीं है और शौचालय भी बहुत गंदी व बदबूदार है।

शासकीय योजनाओं की जानकारी होना

किसी भी शासन के द्वारा अपने-अपने नागरिकों की सामाजिक-आर्थिक सुरक्षा, सुधार के लिए योजना बना कर क्षेत्रीय अथवा राज्य, केन्द्रीय स्तर पर योजनाओं का वित्त पोषण के माध्यम से किया जाता है।वहीं भारत जैसे विशाल व विभिन्नतापूर्ण

देश के विभिन्न भागों में ग्रामीण व जनजातीय क्षेत्रों में सामाजिक-आर्थिक योजनाओं को तैयार किये जाते है। किसी भी योजना को तभी सार्थक माना जाना चाहिए, जब उसका लाभ जमीनी स्तर पर या उचित लाभार्थी को मिलता है। इस प्रकार लाभार्थी को उक्त योजना की जानकारी होगी तभी उसका लाभ लिया जा सकता है। प्रस्तुत शोध में अध्ययन क्षेत्र में बैगा आदिवासी हेतु विभिन्न प्रकार के सामाजिक-आर्थिक स्तर में सुधार के लिए योजनाएं संचालित है, जिसके जानकारी के संदर्भ में उत्तरदाताओं से तथ्यों को संकलित किया गया है।

तालिका क्रमाँक-03

उत्तरदाताओं को शासकीय योजना की जानकारी

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	188	47.00
2.	आंषिक	79	19.75
3.	नहीं	133	33.25
	योग	**400**	**100**

तालिका से स्पश्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के चयनित बैगा उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 47.0 प्रतिशत उत्तरदाताओं को बैगा एवं जनजाति कल्याण व ग्राम पंचायत द्वारा संचालित होने वाले अधिकांष शासकीय योजनाओं की जानकारी है, 19. 75 प्रतिशत उत्तरदाताओं को विभिन्न शासकीय योजनाओं के बारे में आंषिक जानकारी है, वहीं 33.25 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शासकीय योजनाओं के बारे किसी प्रकार जानकारी नही होना बताये हैं। उपरोक्त विश्लेषण से ज्ञात होता है कि बैगा जनजाति समुदाय को वर्तमान समय में शासन की दुर्दर्शिता, विचार व शिक्षा स्तर में वृद्धि, जागरूकता तथा गैर आदिवासी से संपर्क में रहने के कारण अनेक शासकीय योजनाओं की जानकारी रखते हैं।

बैगा जनजाति समुदाय के सदस्यों को शासकीय योजना का लाभ मिलना

केंद्र या राज्य सरकारें अपने राज्य के अंतर्गत आने वाले सभी प्रकार के नागरिकों/निवासियों के आर्थिक-सामाजिक सुधार के साथ-साथ सांस्कृतिक व जीविकोपार्जन की व्यवस्था करता है। वैसे ही आदिवासी समुदाय के लिए भी सरकार द्वारा मूलभूत आवश्यकताओं के साथ उन्हें समाज की मुख्य धारा में लाने के लिए प्रयास करती है, जिसके लिए सरकार अनेक योजनाओं के द्वारा उत्थान करने का प्रयास करती है, जैसे आदिवासी छात्र-छात्राओं के लिए छात्रवृत्ति के रूप में, व्यावसायिक प्रशिक्षण देकर, आश्रम/छायावास खोलकर स्वास्थ्य सुविधाओं के रूप में (प्रसव घर में न कराकर अस्पताल में कराने के लिए प्रोत्साहित करना, टीकाकरण, स्वास्थ्य शिविर, स्वास्थ्य जांच आदि) आदिवासी स्वरोजगार योजना, आदिवासी विद्यार्थी कल्याण योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना, आदिवासी उत्पादों और उत्पादन विपणन विकास योजना के माध्यम से वनोपज को खरीदना आदि का लाभ लेने संबधी तथ्यों को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुत शोध में अध्ययन क्षेत्र के बैगा आदिवासी समुदाय द्वारा विभिन्न शासकीय योजना का लाभ लेने संबंधी जानकारी प्राप्त किया गया है।

तालिका क्रमाँक-04

उत्तरदाताओं को विभिन्न शासकीय योजना का लाभ

क्र.	विवरण	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	296	74.0
2.	नहीं	104	26.0
	योग	**400**	**100**

तालिका क्रमाँक-5.2 से स्पश्ट है कि अध्ययन क्षेत्र के चयनित बैगा उत्तरदाताओं में से सर्वाधिक 74.0 प्रतिशत उत्तरदाताओं को विभिन्न शासकीय योजनाओं का लाभ प्राप्त हुआ है जबकि 26.0 प्रतिशत उत्तरदाताओं ने शासकीय योजनाओं का लाभ नहीं होन की जानकारी दिए है। उपरोक्त विश्लेषण से ज्ञात है कि विभिन्न प्रकार के केन्द्रीय या राज्य सरकार द्वारा आदिवासी उत्थान के लिए योजनाओं का नाभ एक तिहाई लोग लाभ उठा पा रहे हैं, जिसकी अभी भी एक चौथायी बैगा आदिवासियों का विभिन्न शासकीय योजनाओं का किसी भी तरह से लाभ नही उठा पा रहे हैं, इसके पीछे कारण है कि ये बैगा लोग सुदूर जंगलों में निवास करते है तथा जागरूकता या जानकारी नहीं पहुंच पाती है।

समस्याएँ

बैगा आदिवासी समुदाय जंगलों एवं सुदूर क्षेत्रों में आम जन-समुदाय से दूर निवास करते हैं जहाँ मूलभूत सुविधाएँ सरलतापूर्वक नहीं पहुंच पाती है। सबसे प्रमुख समस्याओं में शासकीय/ गैर-षासकीय योजनाओं की जानकारी का अभाव, जागरूकता की कमी, आधुनिक स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, यातायात एवं सूचनातंत्रों की कमी होने से शासकीय सुविधाएँ नहीं पहुंच पा रही है।

सुझाव

- बैगा आदिवासियों को सर्वप्रथम शिक्षास्तर में सुधार करना चाहिए, जिससे अनेक शासकीय/ गैर-शासकीय योजना, स्वयं के दायित्व को सरलतापूर्वक समझ सके।
- बैगाओं की आर्थिक सुधार पर विशेष पहल किये जाने की आवश्यकता है।
- बैगाओं के लिए वनोपन को विक्रय हेतु स्थानीय बाजार को सुलभता से क्रियान्वित किये जाने की आवश्यकता है।
- शासन को स्थानीय स्तर पर रोजगार की उपलब्धता सुनिश्चित किये जाने की आवश्यकता है, जिस प्रकार छत्तीसगढ़ राज्य में मनरेगा बेहतर ढंग से कार्य कर रही है, वैसे ही बैगाओं के आर्थिक सुधार या रोजगार उपलब्धता के लिए स्थानीय स्तर पर प्रयास किये जाने चाहिए।
- विभिन्न शासकीय योजनाओं की जानकारी को जमीनी स्तर पर एवं स्थानीय जनप्रतिनिधियों से संपर्क कर जागरूकता व जानकारी को सुनिश्चित किये जाने चाहिए।
- गैर-आदिवासियों द्वारा बैगा जनजातियों के क्षेत्र में अवैध रूप से एवं ठगने का कार्य करते है तथा प्रत्यक्ष/अप्रत्यक्ष रूप से आर्थिक हानि भी पहुंचाते हैं। ऐसे लोगों के प्रति शासन/प्रशासन को तुरंत कार्यवाही भी करना चाहिए।
- शासन को बैगाओं की कृषि उत्पादकता बढ़ाने व कृषि उपकरण की सुलभता के लिए कार्य करना चाहिए।

निष्कर्ष

मुख्यमंत्री ग्राम सड़क योजना, सार्वजनिक वितरण प्रणाली, सहकारी समिति का लाभ, शैक्षणिक संस्थानों, प्राथमिक व उपस्वास्थ्य व आंगनबाड़ी केन्द्रों के माध्यम टीकारण व पोशण कार्यक्रमों का संचालन, बैगा महिलाओं व 10 से कम वर्श के बच्चों में कुपोशण व रक्ताल्पता को दूर करने के लिए गुड़-चना का वितरण, इत्यादि अनेक योजनाओं के माध्यम से प्रत्यक्ष रूप से सकारात्मक परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है। अब बैगा जनजातियों को समाज की मुख्यधारा में लाने का सपना कुछ हद तक साकार होता दिख रहा है। बैगा आदिवासी समाज को कुछ बड़ी योजनाओं की जानकारी है, जो संपूर्ण आदिवासी समाज के लिए है तथा वर्तमान समय में आदिवासी बच्चों के लिए शिक्षा व उच्च शिक्षा में छात्रवृत्ति, छात्रावास, शासन द्वारा उत्पादों और उत्पादन विपणन विकास योजना, प्रधानमंत्री आवास योजना, प्रधानमंत्री व मुख्य मंत्री ग्राम सड़क योजना, शिशुओं के टीकाकरण, राज्य सरकार संचालित महतारी वंदन योजना, शासकीय सार्वजनिक वितरण प्रणाली आदि, वहीं कई आदिवासी को नगण्य ही शासकीय योजनाओं की जानकारी होती है। इसके पिछे कारण है कि वे सुदूर जंगलों में ही रहना पसंद करते

है तथा बाहरी दुनिया से संपर्क लगभग नहीं होता है तथा अशिक्षित है। शासकीय योजनाओं के लाभ में छात्र/छात्राओं को छात्रवृत्ति (बालक/बालिका) पृथक-पृथक, वनोपज को शासन या सरकारी समिति को बेचना, शौचालय निर्माण, प्रधानमंत्री आवास योजना का लाभ लेना, जड़ी-बूटी को शहरी बाजार में बेचने के लिए व्यवस्था करना, आजीविका व्यवस्था में आर्थिक लाभ पहुंचाने का प्रयास किया गया, स्वास्थ्य सुविधाएं, रोजगार (जिसमें प्रमुख मनरेगा) आदि का लाभ बैगा आदिवासी ले रहे हैं। अध्ययन में दो तथ्य मुख्य रूप से उभरकर सामने आया है, प्रथम-ऐसे उत्तरदाताओं का ग्राम जो विकासखण्ड मुख्यालय से 20 किमी. की परिधि से भीतर निवासरत हैं उन्हें लगभग सभी प्रकार की शासकीय सुविधाओं एवं योजनाओं का लाभ मिल रहा है, जबकि मुख्यालय से 20 किमी से अधिक दूरी में स्थिति उत्तरदाताओं के ग्रामों में अपेक्षाकृत सुविधाओं की कमी देखी गई है। ऐसे उत्तरदाता जो अधिक सुदूर जंगलों व अपेक्षकृत पहाड़ी क्षेत्रों में निवासरत हैं उन्हें अधिकांश सुविधाओं की जानकारी व जागरूकता की कमी है, क्योंकि उन क्षेत्रों में शिक्षा व स्वास्थ्य संबंधी बुनियादी सुविधाओं की कमी है।

सन्दर्भ सूची

1. https://thepamphlet.in/economic_development_schems_being_run_for_tribal_society
2. https://thepamphlet.in/economic_development_schems_being_run_for_tribal_society
3. मेरावी, मीनाक्षी ''बालाघाट जिले के बैगा आदिवासी समाज में सामाजिक परिवर्तन का एक भौगोलिक अध्ययन'' ए. जी.पी.ई. द रॉयल गोंडवाना रिसर्च जर्नल ऑफ हिस्ट्री, साइंस, इकोनॉमिक, पॉलिटिकल एण्ड सोशल साइंस, अंक-3, भाग-6, जुलाई ; 2021, पृ. 49-58.
4. टी.के वैष्णव ''छत्तीसगढ़ की आदिम जनजातियाँ'' आदिम जाति अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, रायपुर (छ.ग.) 2008, पृ. 22-26.
5. चन्द्रा, दिनेश कुमार एवं नायक, पी. के. (2018) ''बिलासपुर जिले के बैगा जनजाति की शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन'' इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस एजुकेशन एण्ड रिसर्च, अंक-03, भाग-03, 2018, पृ. 31-34.
6. यादव, अंजली (2021) ''विशेष रूप से कमजोर जनजाति समूहों में शासन द्वारा संचालित विकास के कार्यक्रमों के प्रति जागरूकता'' जर्नल ऑफ रविशंकर युनिवर्सिटी, भाग-अ, अंक-27, संख्या-01, 2021, पृ. 39-44.
7. बोर्दियु, पीयरे (सम्पादित) (1986) ''कॉमर्स ऑफ कैपिटल'', हैंडबुक ऑफ थियोरी एण्ड रिसर्च ऑफ द सोशियोलॉजी ऑफ एजुकेशन, पृ. 241-258.
8. What are centrally sponsored schemes, Business standard India, Retrived 8 April 2022.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

समकालीन हिंदी नवगीतों में व्यक्त पर्यावरणीय चेतना

प्रो. डॉ. केशव क्षीरसागर
हिंदी विभागाध्यक्ष, रामकृष्ण परमहंस महाविद्यालय, धाराशिव– ४१३५०१
मो. ९९६०८९५७९६
ई मेल : drkeshavksharsagar@gmaail.com

शोध सार - जीवन जीने के लिए यह सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है कि हम अपने परिवेश से अधिक से अधिक जुड़ें रहें और उनमें निहित समस्याओं से रूबरू होने की स्थिति में हों और उन प्रश्नों के निराकरण के लिए हर समय स्वयं को व्यस्तता जैसे माहौल में घिरे हुए पाते हों। उक्त परिवेश में रहते हुए जितनी आवश्यक हमारी अपनी जरूरत की चीजों की उपलब्धता को बनाए रखने की हो उससे कहीं अधिक आवश्यकता इस बात की हो कि हम निर्जन वातावरण में फैली और लगभग बिखरी हुई मानवीय संभावनाओं की तलाश के लिए प्रयत्नशील रहें। इसके लिए जनमानस के संवेदनात्मक धरातल की पहचान आवश्यक हो जाती है और इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है आस-पास विद्यमान प्रश्नों से टकराने की इच्छा और आदत को बनाए रखना बहुत ही आवश्यक हो जाता है।

विषय प्रवेश - साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा हिंदी नवगीत ने जनमानस के संवेदनात्मक धरातल को अधिक ताज़गी प्रदान की है। वर्तमान समस्याओं के केन्द्र में निहित संभावनाओं की बात की जाए, तो आजादी के बाद से लेकर आज तक यथार्थ की भयावहता को परिभाषित करते हुए समय-समाज को व्याख्यायित करने का बड़ा प्रयास नवगीत के माध्यम से फलीभूत हुआ है। आज के इस उत्तर-आधुनिक समय में जब सभी परिभाषाएँ अपनी अर्थवत्ता खोती हुई नजर आ रही हैं, नवगीत के माध्यम से रचनाकारों ने शब्दों को नयी पहचान दी है और अर्थों की सम्प्रेषणीयता को बरक़रार रखते हुए जन-जीवन के मनःस्थिति में जागरूकता की स्थिति को समृद्ध किया है। इस बात को स्वीकार करने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए कि जीवन-प्रक्रिया को समृद्ध करने वाले जितने भी सामाजिक एवं मानवीय अवयव रहे हैं उनके सन्दर्भ में आज के नवगीतकार ने मुखर होकर अत्यंत वास्तविक और मार्मिक अभिव्यक्ति दी है। यह सहजतः स्वीकार किया जा सकता है कि आज नवगीतकार की आँखों में समस्त विश्व है, उसके तकाजे हैं और युगीन समस्याएँ तथा उन समस्याओं के आर-पार झाँकने वाली दृष्टि है। वह वैश्वीकरण से लेकर गाँवों की चौपाल तक की सारी जानकारी रखता है। समाज, राजनीति, भूमंडलीकरण, प्रकृति, प्रेम, पारिवारिक ताप और संताप, संत्रास, कुण्ठा, भय, घुटन के साथ-साथ मानवीय जिजीविषा, संघर्षशीलता, आस्था तथा अदम्य साहस उनके नवगीतों के रोये-रेशों में प्राण तत्त्व बनकर बहता है।

मुख्य शब्द - पर्यावरण वायु, जल, मृदा, पेड़-पौधे, प्राणी - चिन्तन, विचार और विमर्श की आवश्यकता है।

विषय विश्लेषण - मानवीय स्वभाव की बात करें तो आज समस्याओं को अनदेखा करना जैसे हमारी नियति-सी बन गई है। अपने समय के प्रश्नों से टकराने की जो स्वाभाविक स्थिति हममें होनी चाहिए थी वह जैसे विकसित ही नहीं हो पा रही है। हम जितने अधिक समृद्ध हो रहे हैं व्यवहार में उससे कहीं अधिक खोखले और निष्प्राण होते जा रहे हैं, इतने कि आँखों के सामने से ही बहुत कुछ परिवर्तित होता और हमारे अस्तित्व को चुनौती देता बढ़ा चला जा रहा है और हम, कुछ करना तो दूर हाथ-पैर मारना भी मुनाशिब नहीं समझते। हर एक स्थिति को संकीर्ण मनोवृत्ति में परखने और व्यक्तिगत स्वार्थता

के केन्द्र में उपयोग करने के अभ्यस्त जरूर हुए हैं। यही वजह है कि समय की संकीर्णता और स्वार्थता के आवरण में जीवन के बहुत से प्रश्न ऐसे होते हैं जिन्हें हम अनदेखा करते रहते हैं। पर्यावरण का प्रश्न उन सभी प्रश्नों में से एक और सबसे अधिक आवश्यक है जिसपर चिन्तन, विचार और विमर्श की आवश्यकता है। इसी आवश्यकता की पूर्ति में नवगीतकारों की दृष्टि का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान है जिसे स्पष्ट करने से पहले यह जान लेना आवश्यक है कि पर्यावरण कहते किसे हैं?

'मानक हिंदी कोश' के अनुसार "पर्यावरण (परि + आवरण) किसी व्यक्ति या विषय की परिस्थिति"को कहा जाता है अर्थात - जिन विशेष परिस्थितियों में रहते हुए व्यक्ति अपना जीवन-निर्वाहन करता है उसे पर्यावरण कहा जाता है। पर्यावरण दो शब्दों परिुआवरण से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है परि- चारों तरफ, आवरण घेरा, यानी प्रकृति में जो भी हमारे चारों ओर परिलक्षित होता है - वायु, जल, मृदा, पेड़-पौधे, प्राणी आदि - सभी प्रकार के अंग हैं और इन्हीं से पर्यावरण की रचना होती है। इस दृष्टि से देखने का प्रयत्न करें तो सम्पूर्ण भौगोलिक संरचना पर्यावरण के दायरे में आ जाती है। भौगोलिक संरचना दो प्रकार की होती है— १) जीवभूगोल - भौतिक, रासायनिक तथा जैविक दशाओं का योग जसकी अनुभूति किसी प्राणी या प्राणियों को होती है। इसके अंतर्गत वायु, मिट्टी, जल, प्रकाश वनस्पति, स्वप्रजाति एवं अन्य प्राणि जगत सम्मिलित होते हैं। पर्यावरणीय दशाओं में देश, काल, दिन के समय, मौसम, कारकों के अनुसार भिन्नता पायी जाती है। २) मानव भूगोल - भौतिक तथा सांस्कृतिक दशाओं का सम्पूर्ण योग जो मानव के चारों ओर व्याप्त होता है और उसे प्रभावित करता है। भौतिक पर्यावरण में संरचना, जलवायु, मिट्टी, वनस्पति तथा जीव-जंतु सम्मलित होते हैं। सांस्कृतिक या मानवीय पर्यावरण में समस्त मानवीय क्रियाओं, दशाओं तथा सांस्कृतिक भूदृश्यों को सम्मिलित किया जाता है। इस तरह जैविक तथा मानवीय परिधि में आने वाले सभी प्रकार के जीव, परिवेश एवं वातावरण को पर्यावरण के नाम से जाना जाता है।

पर्यावरण परिवेश में व्यक्ति का आगमन उसके जन्म लेने से पूर्व हो जाता है और जीवन के अंतिम दिनों तक वह उसका एक अभिन्न हिस्सा होता है। हमारी धरती और इसके आसपास के कुछ हिस्सों को पर्यावरण में शामिल किया जाता है। इसमें सिर्फ मानव ही नहीं, बल्कि जीव-जंतु और पेड़-पौधे भी शामिल किए गए हैं। यहां तक कि निजीव वस्तुओं को भी पर्यावरण का हिस्सा माना गया है। कह सकते हैं, धरती पर आप जिस किसी चीज को देखते और महसूस करते हैं, वह पर्यावरण का हिस्सा है। इसमें मानव, जीव-जंतु, पहाड़, चट्टान जैसी चीजों के अलावा हवा, पानी, ऊर्जा आदि को भी शामिल किया जाता है। प्रकृति प्रदत्त जीवन जीने के जितने भी उपागम हैं और जिन स्थितियों, परिस्थितियों के अंतर्गत रहते हुए हम अपने शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, सामाजिक एवं मानवीय स्थितियों को विकसित और समृद्ध करने के विविध प्रयोग करते रहते हैं, और जिनका प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर हम उपभोग करते हैं वे सब पर्यावरण के दायरे में आते हैं।

उपभोग करने की बढ़ती कुप्रवृत्ति का ही परिणाम है कि आज धरती पर अनावश्यक रूप से दबाव बढ़ा है। यह भी सहजतः स्वीकार करना पड़ता है कि मनुष्य ने अपने निहित स्वार्थों के वशीभूत होकर प्रकृति का अंधाधुंध दोहन किया है। इस दोहन का जो सीधा परिणाम निकल कर आया है वह, पर्यावरण का असंतुलित होना है। सम्पूर्ण संसार में असंतुलन की यह समस्या आज सबसे अधिक विचारणीय मुद्दा है। भावात्मक रूप से प्राकृतिक संसाधनों में जहाँ असंतोष के भाव दृष्टिगत हुए हैं वहीं विद्वानों, चिंतकों के लिए यह बेहद भयावह स्थिति के रूप में चिह्नित किया गया है।

विद्वानों की दृष्टि में यह जरूरत आए दिन महसूस की जाती रही है कि पर्यावरण जैसे गंभीर मुद्दे पर गहरे विमर्श की आवश्यकता है। उनकी चिंतन-प्रक्रिया में एक तरफ जहाँ धरती पर निवास करने वाले प्रत्येक जीव-जंतु को बचाए रखने की जरूरत वर्तमान है वहीं दूसरी तरफ अपनी जरूरत की चीजों को प्राप्त करने की आवश्यकता भी केन्द्र में है। अतः पर्यावरण संतुलन के लिए प्रकृति और मनुष्य के पारस्परिक सम्बन्धों के दरम्यान जागरूकता ही एक ऐसी स्थिति है जो जरूरत और उपलब्धता के मध्य संतुलन बना कर रख सकती है। प्रकृति के प्रति गहराते संकट और मानवीय अस्तित्व पर विद्यमान प्रश्न, दोनों स्थितियों को एक समान महत्त्व देना आज के नवगीतकारों ने अपनी रचनाधर्मिता का प्रमुख आधार बनाया है। इस स्थिति को स्वीकार करने में कोई गुरेज नहीं है कि "समकालीन कवि प्रकृति के संकटपूर्ण अस्तित्व को लेकर चिंतित है। उसकी चिंता प्रकृति को बचाने की है, मनुष्य को बचाने की है और इनके बीच शाश्वत रागात्मक सम्बन्ध को बचाने की भी।"[१]

प्रकृति के स्वस्थ परिवेश में जीवन यापन करने के लिए स्वच्छ हवा और स्वच्छ जल की बड़ी आवश्यकता है। हवा के योग से ही जल की विद्यमानता सुनिश्चित होती है। विडंबना की स्थिति यह है कि जो स्रोत वायु को उपलब्ध करवाने के हैं, हम उनको अनवरत समाप्त करने पर तुले हैं। गाँवों में यह प्रायः देखा जाता रहा है कि वहाँ के लोग सामाजिक जीवन का सफलतापूर्वक निर्वहन के लिए "आधी खेती और आधी बारी" पर बल दिया करते थे अर्थात आजीविका का साधन कृषि होने की वजह से उनका स्पष्ट मानना था कि आधे क्षेत्र में वे खेती करेंगे और आधे क्षेत्र में बागवानी। खेती की प्रवृत्ति में किसानों की आर्थिक बदहाली और पारिवेशिक दुर्दशा केन्द में रही लेकिन बागवानी की प्रवृत्ति दिनोंदिन लोगों में घटती गयी। नवगीतकार की यह चिंता नितांत प्रासंगिक और सोचने विवश करती है कि -

"आज आँधियों के युग में वे
कितने पेड़ बचे
जिनके मीठे
फल से रहती
लदी झुकी डाली
जेठ दुपहरी
छाया की जो
परसे थे थाली
आज मालियों को बाजारी
बौने पेड़ जंचे।"[२]

यहाँ "आज मालियों को" बड़े छायेदार घने पेड़-पौधों की जगह "बाजारी बौने पेड़" जंचने की स्थिति का पड़ताल किया जाना आवश्यक है। बौने पेड़ के रूप में देशी पौधों के बजाय कलमी पौधों का परिचलन इन दिनों अधिक बढ़ा है जिसका उद्देश्य, छाया और स्वास्थ्यवर्धक फलों की प्राप्ति न होकर महज धन-अर्जित करना रह गया है। बड़े पेड़ों को लगाने, सीचने और पालने में लगने वाले अधिक समय की जगह छोटे पौधों को उगाकर व्यापार करना लोग अधिक श्रेयस्कर समझ रहे हैं। यही नहीं जो वृक्ष शौक और सौंदर्य के लिए घर के सामने लगाए जाते थे उनके स्थान पर आज नागफनी आदि वृक्षों को गमले में सजाने का फैशन बढ़ा है—"बड़े घरों के ताम्र कलश में/ हंसती नागफनी/ हर मौसम में शूल चुभोती/ रहती तनी-तनी/ और काटने शेष छाँव को/ दंगे बहुत मचे।"[३] मंजर यह है कि आए दिन हर कोई अपने परिवेश में घने वृक्षों को अपनी जरूरत के अनुसार काटने पर लगा हुआ है। परिणामतः चिलचिलाती धुप में गंतव्य स्थल तक पहुँचाना असंभव सा लगने लगा है। डॉ० धनंजय सिंह के अनुसार "धूप चिलचिलाती है/ सड़क बहुत लम्बी है/ नहीं दूर तक कोई छाँव/ और हमें नंगे ही पांव/ जाना है सपनों के गाँव।"[४] यह कल्पना की जा सकती है कि जब सपनों के गाँव में जाने की यह नौबत है तो यथार्थ में चलने की क्या स्थिति होगी?

वृक्ष काटने की स्थिति ने रिहायसी इलाके से निकलकर जंगलों में उगने वाले पेड़ों को भी अपनी लालच का माध्यम बनाया है। कभी सडकों के नाम पर तो कभी औद्योगिक विकास की जरूरत पर बड़े-से-बड़े वन-क्षेत्र को ऊसर के रूप में परिवर्तित कर दिया गया है। "एक समय था जब भारत के विस्तृत क्षेत्रों में वनों का पर्याप्त विकास था किन्तु क्रमशः वनस्पति की कटाई में वृद्धि होती रही और आज वननाशन या वनोंन्मूलन भारत की एक प्रमुख पर्यावरणीय समस्या बन गयी है। वनस्पति विनाश न केवल पादप परिस्थितिक क्रम को प्रभावित करती है अपितु इसके प्रभाव से सम्पूर्ण पारिस्थितिकीय-तन्त्र असंतुलित होता जा रहा है।"[५] नवगीतकार अजय पाठक की मानें तो—

"जंगल पर संकट है भारी
इन हालातों में लगता है
मिट जायेगी धरा हमारी

क्षण भर के स्वारथ के चलते
खेल रहे जीवन से
भूल गये कि हमने सब कुछ
पाया केवल वन से
वृक्ष नहीं अपनी छाती पर
चला रहे हम आरी...
हरे-भरे थे पेड़ जहाँ पर
घना-घना था जंग
उजड़ी गुल्म-लतायें सारी
अब लगता है मरुथल
मंहगी साबित होने को है
यह सब गहरी भूल हमारी।"[६]

कवि यदि इस भूल को गहरी भूल कहता है तो इसके "मंहगी साबित होने को" लेकर संभावनाएँ इसलिए भी बढ़ जाती हैं क्योंकि आज औद्योगिकीकरण की बढ़ती मांग को वृक्षों की कटाई से पूरी की जा रही है। प्रतिदिन होने वाली वैज्ञानिक अविष्कारों के लिए भी बलि के केंद्र में यही वृक्ष होते हैं। इसके भयानक परिणाम हम सबके सामने है। धरती पर जल का संकट वृक्षों के अभाव से ही गहराया है। नवगीतकार २१ सदी के आज के मनुष्य को जैसे याद दिलाना चाहता है। मानवीय समाज में आज स्पष्ट दिखाई दे रहा है। सम्पूर्ण संसार जल के अभाव से जूझ रहा है। समय पर बारिस होना जैसे गुजरे जमाने की बात हो चली है। मानसून अनियमित हो चला है। जल के लिए अभी हम एकदम से जागरूक होने की स्थिति अपनाने लगे हैं। यह स्थिति एकाएक जागे भूखे शेर के मानिंद है जो युद्ध जैसी स्थिति पर लाकर हमें खड़ा कर दिया है। हम एक दूसरे के विरुद्ध षड्यंत्र-जाल बिछाने लगे हैं। पानी की खातिर मरने और मारने तक की स्थिति में आ गए हैं।

जल और वन की हो रही अनुपलब्धता के पीछे एक बड़ी वजह मनुष्य की अनवरत बढ़ती जनसंख्या भी है। जनसँख्या का दबाव परिवेश पर जितना बढ़ा है संसाधन उतने ही घटे हैं। रोजी-रोटी और रोजगार के अवसर की तलाश में नयी कंपनियों का स्थापना हुई है। वैज्ञानिक आविष्कार के तरीके ढूंढें गए हैं। वैज्ञानिकता ने जितनी सुविधाएँ हमारे लिए उपलब्ध करवाया है उससे कहीं अधिक समस्याएँ भी दिया है। यहीं से वैज्ञानिक शांति और औद्योगिकीकरण के साथ मनुष्य और प्रकृति के संबंधों का एक नया माध्यम शरू होता है। औद्योगिकीकरण के दौरान लम्बे समय तक इस बात की ओर ध्यान ही नहीं गया कि प्रकृति के रूपांतरण की भी एक सीमा है। पर्यावरण के नाश से मनुष्य का अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है। बीसवीं शताब्दी के आखिरी दशकों में प्रकृति और पर्यावरण के संरक्षण की चिंता एक गंभीर मुद्दों के रूप में उभर कर सामने आती है।

निष्कर्ष

वैज्ञानिक विकास के परिणाम स्वरुप धरती को छोड़कर स्वर्ग पर पहुँचने की लालसा बहुत हद तक कामयाब तो हुई है लेकिन इस कीमत पर कि अब धरती पर रहना दूभर होता जा रहा है। युद्ध के उन्माद और वसंत के पराभव से पर्यावरण समस्या और भी अधिक गहरा गयी है। जन-जीवन-जमीन सभी की दुर्गति युद्ध की वर्तमानता में निश्चित होती है। मुख्य रूप से युद्ध की परिस्थितियों में दो प्रकार की अपरिहार्य क्षतिपूर्णता निर्मित होती है। प्रथम प्राकृतिक आवास विनष्ट होते हैं। द्वितीय समुदायों की सामाजिक व्यवस्थाएँ पूर्णतः शिथिल हो जाती हैं। अविकसित अथवा विकासशील देशों में युद्ध की स्थिति और अधिक भयानक हो जाती है, क्योंकि यहाँ की मुख्य समस्याएँ जैसे पर्यावरण की शिथिलता, कुपोषण, रोग-बाधा, बेरोजगारी, आर्थिक अस्वस्थता....सभी कुछ में वृद्धि होती है। भौतिक एवं सामाजिक परिवेश युद्ध के आघातों को झेल नहीं पाते। अतः

पर्यावरण-सुरक्षा के लिए युद्ध जैसी परिस्थिति पर भी बहुत कुछ सोचने और समझने की जरूरत है। यदि हम इस विकसित हो रही परिस्थिति से निजात पाने में सफल हो सके तो कई प्रकार की समस्याएँ स्वयमेव समाप्ति के कगार पर पहुँच जायेंगी। नवगीतकारों के हृदय में उठने वाली असली चिंता का विषय यह भी है कि क्या मानव-हृदय में विद्यमान मानवीयता को सुरक्षित रखा जा सकेगा? सुरक्षा के लिए हमने सैनिकों का निर्माण किया। सुरक्षा के लिए ही हमने राज्यों की सीमाओं का संधान किया। सुरक्षा के लिए ही अनेकों प्रकार के अत्याधुनिक हथियारों के अस्तित्व की परिकल्पना किया और एक हद तक उसे साकार रूप भी दिया। सवाल ये है कि क्या हम सुरक्षित हैं? यदि हैं तो देश में नित-प्रतिदिन बढ़ रहे नक्सलवाद, मावोवाद की क्या वजह है? सम्पूर्ण संसार में आतंकवादी समूहों के उदित होने के क्या कारण हैं? क्या कारण हैं कि रोज ही हजारों-लाखों की जाने जा रही हैं हिंसा, आगजनी और विस्फ़ोट में? बढ़ रही हिंसा, आगजनी, आतंकवाद आदि अमानवीय समस्याओं से नवगीतकारों का हृदय व्यथित है। यायावर के शब्दों में कहें तो यह आशा भविष्य के लिए की जा सकती है कि धूर्तता, पाशविकता, नई सभ्यता, आदमी- आदमी से रहे दूर, कटु क्रूरता, द्वेष का ये कलुष, दूर हो, मन बने निर्मलम्। समय और परिवेश को निर्मलता से परिपूर्ण करने में नवगीतकारों का बड़ा योगदान रहा है जिसे किसी भी रूप में अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। लेकिन जब बात पर्यावरण संरक्षण की अपने यथार्थ रूप में की जाए तो इसे भी स्वीकार करने में कोई संदेह नहीं होनी चाहिए कि अब हर व्यक्ति को अपनी भूमिका तय करने का समय आ गया है। प्रतिरोध और सृजन का काम, हमें एंटीबायोटिक्स की जगह अपनी प्रतिरोधक शक्ति बढ़ाकर काम को अंजाम देना ही अपरिहार्य कदम है। यह कदम हम मिलकर उठाएँ तो परिणाम जल्दी सामने होंगे और अलग - अलग कदम हमें विलम्ब के अँधेरे में ढकेल देंगे। यह सांझा संकट है तो प्रयत्न भी मिलकर करने होंगे। अन्यथा प्रकृति को गुलाम बनाने के कुत्सित प्रयास जारी रहेंगे और हमारी कर्महीनता को लेकर आने वाली पीढ़ियाँ पानी पी-पीकर नहीं, बिन पानी के कोसेंगी।।

संदर्भ

१) प्रकृति, पर्यावरण और समकालीन कविता- मनीषा झा : आनंद प्रकाशन, पृष्ठ- ५५
२) रथ इधर मोड़िये- श्रीवास्तव बृजनाथ : कानपुर मानसरोवर, २०१३, पृष्ठ-७७
३) वही ७६
४) दिन क्यों बीत गये - डॉ. धनंजय सिंह : अनुभव प्रकाशन, २०१७ पृष्ठ-५६
५) पर्यावरण वन और वन्य जीव संरक्षण- साहनी कविता पृष्ठ-५४
६) गीत मेरे निर्गुणियाँ, दुर्ग - पाठक अजय : श्री प्रकाशन, २०१०, पृष्ठ ७३

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Stacked for Scale: India's Digital Public Infrastructure, UPI Adoption, and Inclusive Growth

Jagdish Rai
(Research Scholar)
Department of Commerce, Shri Jagdishprasad Jhabarmal Tibrewala University
Jhunjhunu, Rajasthan
[1]raijagdishrai@gmail.com

Dr. Aman Gupta
(Assistant Professor)
Department of Commerce, Shri Jagdishprasad Jhabarmal Tibrewala University, Shri Jagdishprasad Jhabarmal
amangupta76@gmail.com

Abstract:

India's digital transformation is anchored in layered digital public infrastructure—identity, payments, and data—collectively known as India Stack. This architecture enables population scale service delivery, real time retail payments, and consented data flows across public and private domains. The identity layer (including Aadhaar, eKYC, and eSign) provides foundational authentication and paperless onboarding; the payments layer (including UPI, AePS, APB, and BBPS) supports high frequency, low cost, interoperable transactions; and the data layer (including DigiLocker and Account Aggregators) enables secure, consent based information sharing. Together, these modular building blocks reduce transaction frictions, lower entry barriers for innovators, and allow solutions to be combined and reused across sectors, reinforcing scale, reliability, and competition.

This review synthesizes evidence across five themes. First, it examines the architecture and governance of India Stack, highlighting how open standards, interoperability, and non discriminatory access underpin rapid adoption while requiring continuous attention to privacy, consent, and accountability. Second, it analyzes UPI's behavioral adoption drivers, emphasizing the roles of perceived usefulness, ease of use, facilitating conditions, social influence, incentives, and trust in shaping intention and usage—insights that translate into practical design and outreach strategies. Third, it assesses digital financial inclusion among micro enterprises, showing how connectivity, education, and owner experience convert access into measurable ease of doing business gains, with clear implications for capability building programs and targeted support. Fourth, it reviews rural usage patterns, where mobile first preferences, vernacular interfaces, and assisted channels emerge as critical to closing geographic and gender divides. Finally, it situates these findings within India's evolving market and regulatory context, including the rollout of advanced connectivity, maturing data protection norms, and the practical implications of compliance for ecosystem participants.

The paper concludes that India's open, modular rails have delivered scale and inclusion alongside vigorous private edge innovation, but the next phase of progress depends on sustained investment in last mile infrastructure, digital literacy, and trustworthy consent and grievance mechanisms. Maintaining openness and interoperability will be essential to preserve competition and resilience, while internationalization of payment linkages should be guided by corridor level metrics on cost, reliability, access, and small business uptake. This combination of technical design, governance safeguards, and evidence based policy can deepen inclusive growth and sustain public trust at scale.

Keywords: *India Stack, digital public infrastructure (DPI), Aadhaar, eKYC, eSign, UPI (Unified Payments Interface), AePS, APB, BBPS, DigiLocker, Account Aggregators, interoperability, open APIs, consent architecture, financial inclusion, micro enterprises, MSMEs, UPI adoption, UTAUT factors, trust, mobile first rural adoption, last mile connectivity, data protection, privacy, 4G/5G rollout, digital economy, cross border payments, UPI internationalization, policy, governance.*

Introduction:

India's approach has evolved from siloed e government systems to foundational digital public infrastructure (DPI) that offers reusable identity, payments, and data building blocks via open standards and interoperable APIs (International Monetary Fund, 2024). These rails enable paperless, presence less, and cashless service delivery at population scale, crowding in private innovation while lowering transaction costs and barriers to entry (Raghavan et al., 2019). Scholarship situates DPI within a political economy of infrastructural authority and inclusion, emphasizing that governance choices and social contestation co determine outcomes alongside technical design (Singh, 2025).

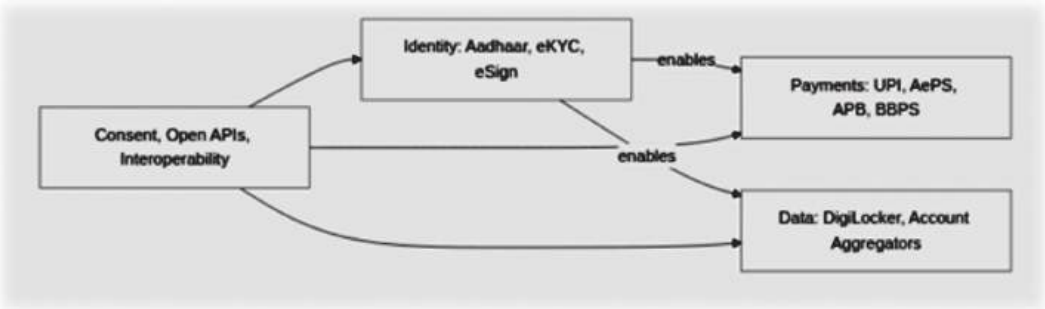

Chart 1: India Stack layers and enablers

Objectives:

- Consolidate evidence on India Stack's architecture and governance, highlighting identity, payments, and data layers and their ecosystem roles (International Monetary Fund, 2024; Raghavan et al., 2019).
- Assess UPI adoption determinants and usage behavior through recent empirical studies to inform design and outreach strategies (Kiran & Sailaja, 2025).
- Examine digital financial inclusion outcomes among micro enterprises and rural adoption

patterns to identify capability and access gaps (Johri et al., 2024; Sindakis & Showkat, 2024).

- Situate findings in market and regulatory context and outline priorities for domestic scaling and cross border expansion (International Trade Administration, 2024; Times of India, 2024).

Literature Review:

DPI Architecture and Governance: India Stack's modular layers—Aadhaar/eKYC/eSign (identity), UPI/AePS/APB/BBPS (payments), and DigiLocker/Account Aggregators (data)—provide interoperable, non discriminatory rails that reduce frictions and enable public purpose infrastructure with private edge innovation (International Monetary Fund, 2024). A public good framing, standardized APIs, and openness underpin scale and reuse across use cases, while governance arrangements balance access, compliance, and competition (Raghavan et al., 2019). Analyses emphasize "calculation, creativity, and coercion" as co evolving features of infrastructure, highlighting legitimacy, inclusion, and political contestation at scale (Singh, 2025).

1. **UPI Adoption and Usage:** An extended UTAUT study finds performance expectancy, effort expectancy, facilitating conditions, social influence, perceived promotional benefits, and trust significantly shape intention, which in turn predicts usage; add on services influence intention indirectly via expectancy pathways, with age and occupation moderating select links (Kiran & Sailaja, 2025). These results suggest visibility, reliability, ease of use, and trust assurances—supported by adequate facilitating conditions—are central to sustained, habitual usage (Kiran & Sailaja, 2025).
2. **Micro enterprise Inclusion:** Using World Bank Enterprise Survey micro firm data (n=998), digital financial inclusion improves ease of doing business outcomes and is associated with internet access, education, and owner experience, indicating capabilities are critical to converting access into usage and performance (Johri et al., 2024). These micro foundations illuminate firm level channels through which DPI adoption may translate to productivity and formalization beyond aggregate transaction counts (Johri et al., 2024).
3. **Rural Adoption:** Field evidence from Odisha shows strong preference for mobile based services and higher female adoption in the study sample, pointing to the importance of resilient mobile connectivity, vernacular UX, and assisted channels for rural inclusion (Sindakis & Showkat, 2024). Heterogeneous demographics and capabilities imply that targeted, locally adapted literacy and delivery approaches are more effective than device agnostic designs (Sindakis & Showkat, 2024).

Digitalization's Contribution to India's GDP:

Digitalization is increasingly playing a pivotal role in boosting India's GDP. Research indicates that digitalization could contribute substantially to economic growth, with a projected increase in GDP by up to 20% through enhanced productivity and expanded market access (Patel & Kumar, 2022). The digital economy is projected to contribute around 20% to the country's overall GDP by 2026, up from a modest 4-5% in 2014 (Economic Times, 2023; Trade.gov, 2023). This growth is driven by a combination of factors:

- **Increased Internet Penetration:** The widespread adoption of affordable internet services has enabled millions to access digital platforms, fostering economic activity. Rural areas, in particular, have benefited from improved connectivity, bridging the urban-rural divide and empowering communities with information and opportunities (EY Insights, 2023).
- **Improved Digital Infrastructure:** Government initiatives such as "Digital India" have bolstered digital infrastructure, including broadband connectivity, mobile networks, and public Wi-Fi hotspots. These developments have laid a robust foundation for the digital economy (Hindustan Times, 2023).
- **Efficiency Across Sectors:** Digital tools and platforms have enhanced productivity across various sectors. For instance, in agriculture, precision farming and digital marketplaces have revolutionized traditional practices. Similarly, in education, online learning platforms have democratized access to quality education (Economic Times, 2023).
- **Job Creation:** The expansion of the digital economy has created employment opportunities in software development, data analytics, digital marketing, and other tech-driven fields. Startups in emerging technologies such as AI, blockchain, and IoT are further driving job creation and innovation (Trade.gov, 2023).

Payments Landscape and Modalities:

Government communications outline a comprehensive menu of digital payment modes—cards, UPI, AePS, USSD, wallets, net banking—supporting everyday transactions and complementing research on usage drivers and inclusion outcomes (National Informatics Centre, 2023). For general background on the Cashless India initiative footprint, official portal listings provide a stable reference for public program materials and linkages (National Portal of India, 2024).

Market and Regulatory Context

The Country Commercial Guide details digital infrastructure rollout, sector leaders, and regulatory evolution, including the DPDP Act, data localization, and digital services taxes, shaping compliance and risk for DPI enabled participants and entrants (International Trade Administration, 2024). Sector notes on ICT and adjacent domains further contextualize adoption conditions, pricing constraints, and ecosystem capacity as connectivity expands with 4G/5G (International Trade Administration, 2024).

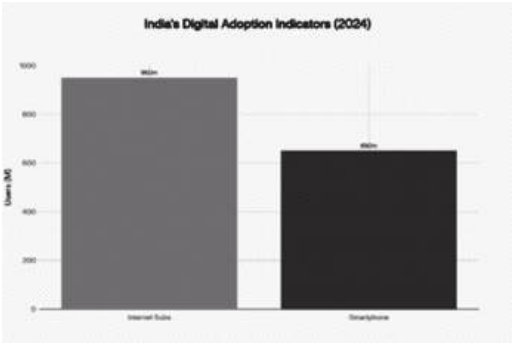

Chart 2: India's digital adoption indicators (2024)

Internationalization of UPI

The annual report indicates a roadmap to extend UPI to about 20 countries by FY2028 29, aligning with bilateral and multilateral corridor development for real time retail payments, which requires corridor level metrics to assess costs, reliability, access, and MSME uptake (Times of India, 2024). International policy commentary also positions India's DPI as a template for inclusion oriented payment modernization, with a need to pair scaling with clear governance and measurement (OMFIF, 2023).

Methodology

This study is a narrative review synthesizing peer reviewed journal articles, scholarly chapters, institutional working papers, and official guidance to integrate architecture, adoption, inclusion, market context, and cross border developments into a cohesive analysis (International Monetary Fund, 2024; Singh, 2025; International Trade Administration, 2024). Source selection prioritized peer reviewed and official materials, using corporate and media reports only to contextualize projections or document public communications with clear attribution and links (Raghavan et al., 2019; Times of India, 2024).

Findings and Discussion

a) **Architecture and Scale:** Open, interoperable rails and standardized APIs lowered entry barriers, increased reuse, and embedded competition, catalyzing sustained adoption and private innovation atop public purpose infrastructure (International Monetary Fund, 2024; Raghavan et al., 2019).

b) **Behavioral Drivers:** Intention and usage are driven by expectancy, trust, and facilitating conditions, indicating that UX reliability, security assurances, and segment specific enablement are central to durable uptake (Kiran & Sailaja, 2025).

Construct	Effect (summary)	Implication
Performance expectancy	Strong positive effect on intention	Emphasize clear value-in-use (speed, reliability)
Effort expectancy	Positive effect on intention	Simplify flows, reduce friction
Facilitating conditions	Positive effect on intention/usage	Ensure device, connectivity, help channels
Social influence	Positive effect on intention	Leverage social proof, merchant cues
Perceived promotional benefits	Positive effect on intention	Targeted incentives for segments
Trust	Strong positive effect on intention	Visible security, grievance redressal
Add-on services	Indirect via expectancy	Bundle features to raise perceived utility
Moderators (age, occupation)	Selected paths	Segment-specific onboarding

Table 1: UPI adoption drivers (Kiran & Sailaja, 2025)

c) **Inclusion Outcomes:** Capability endowments—connectivity, education, and experience—shape digital financial inclusion probabilities and ease of business effects among micro enterprises, guiding where policy interventions can be most impactful (Johri et al., 2024).

d) **Rural Delivery:** Mobile first preferences and the feasibility of assisted, vernacular experiences are essential to closing rural divides and advancing women's adoption where infrastructure and skills constraints persist (Sindakis & Showkat, 2024).

e) **Cross Border Scaling:** Internationalization is promising but should be sequenced with corridor specific KPIs, consumer protection, and resiliency requirements to ensure benefits outweigh integration frictions (Times of India, 2024; OMFIF, 2023).

Challenges and Risks

Large scale identity and data infrastructures heighten concerns about consent, privacy, and exclusion, requiring robust data protection norms, federated architectures, monitoring, and transparent governance to sustain trust (Singh, 2025). Market and regulatory complexities—data localization, platform caps, and compliance burdens—affect cost structures and competitive dynamics, necessitating careful sequencing and stakeholder engagement (International Trade Administration, 2024).

Policy Recommendations

a) **Capability and literacy:** Invest in targeted digital literacy and owner capabilities for micro enterprises and rural users, where internet access, education, and experience drive inclusion and sustained usage (Johri et al., 2024; Sindakis & Showkat, 2024).

b) **Mobile first last mile:** Prioritize resilient mobile connectivity, vernacular UX, and assisted channels that match observed preferences and bandwidth constraints (Sindakis & Showkat, 2024).

c) **Trust and safety:** Reinforce consented data sharing, security baselines, grievance redressal, and privacy safeguards to strengthen trust, a key driver of UPI intention and usage (Kiran & Sailaja, 2025; International Monetary Fund, 2024).

d) **Openness and competition:** Preserve open standards, interoperability, and non discriminatory access to maintain innovation, avoid lock in, and support resilience under stress (International Monetary Fund, 2024; Raghavan et al., 2019).

e) **Measured internationalization:** Define corridor level metrics on cost, reliability, access, and MSME uptake, and stage expansion with consumer safeguards and performance monitoring (Times of India, 2024; OMFIF, 2023).

CPriority	What to do	Evidence rationale
Capability and literacy	Targeted digital literacy, owner mentoring for micro-enterprises and rural users	DFI determinants: internet access, education, experience; rural mobile-first patterns (Johri et al., 2024; Sindakis & Showkat, 2024)

Mobile-first last-mile	Invest in resilient mobile connectivity, vernacular UX, assisted channels	Rural preference for mobile and assisted use (Sindakis & Showkat, 2024)
Trust and safety	Strengthen consented data sharing, security baselines, grievance processes	Trust is a key driver; DPI governance emphasizes safeguards (Kiran & Sailaja, 2025; IMF, 2024)
Openness and competition	Preserve open standards, interoperability, non-discriminatory access	Public-good rails enable private innovation and resilience (Raghavan et al., 2019; IMF, 2024)
Cross-border metrics	Corridor-level KPIs on cost, reliability, access, MSME uptake for UPI corridors	Internationalization roadmap to ~20 countries by FY2028-29 requires measurement (Times of India, 2024)

Table 2: Policy priorities mapped to evidence

Conclusion:

India's DPI centered model—combining identity, payments, and data layers—has delivered scale, reduced frictions, and broad innovation while expanding inclusion opportunities for consumers and firms, with UPI as a central driver of everyday digital transacting (International Monetary Fund, 2024; Raghavan et al., 2019). Realizing the next tranche of gains will depend on closing capability and rural gaps, institutionalizing consent and privacy safeguards, sustaining openness and competition, and executing cross border linkages with clear metrics to secure inclusive, trusted growth (Sindakis & Showkat, 2024; Kiran & Sailaja, 2025; Times of India, 2024).

References:

1. International Monetary Fund (2024), Stacking up the benefits: Lessons from India's digital journey (Working Paper) - https://www.imf.org/en/Publications/WP
2. International Trade Administration (2024), India—Digital economy (Country Commercial Guide) - https://www.trade.gov/country-commercial-guides/india-digital-economy
3. Johri, A., Asif, M., Tarkar, P., Khan, W., Rahisha, & Wasiq, M. (2024), Digital financial inclusion in micro enterprises: Understanding the determinants and impact on ease of doing business from World Bank survey. Humanities and Social Sciences Communications, 11, 361
4. Kiran, K. P., & Sailaja, V. N. (2025), Assessing Unified Payments Interface (UPI) adoption and usage through the interplay of UTAUT factors. Humanities and Social Sciences Communications, 12, 1060
5. OMFIF (2023, November 16), India's digital leap in financial inclusion - https://www.omfif.org/2023/11/indias-digital-leap-in-financial-inclusion/
6. Raghavan, V., Jain, S., & Varma, P. (2019), India Stack—Digital infrastructure as public good. Communications of the ACM, 62(11), 76–83
7. Sindakis, S., & Showkat, G. (2024), The digital revolution in India: Bridging the gap in rural technology

adoption. Journal of Innovation and Entrepreneurship, 13, 29
8. Singh, J. P. (2025), India Stack: Authority and innovation in a new financial infrastructure, The Cambridge Global Handbook of Financial Infrastructure (Chapter 27)
9. Times of India (2024, May 31), RBI is working on expanding UPI to 20 countries by 2028–29: RBI Annual Report - https://timesofindia.indiatimes.com/business/india-business/rbi-is-working-on-expanding-upi-to-20-countries-by-2028-29-rbi-annual-report/articleshow/110613478.cms
10. National Informatics Centre (2023, April 27), Digital payments driving the growth of digital economy - https://www.nic.gov.in/digital-payments-driving-the-growth-of-digital-economy/
11. National Portal of India (2024, January 31): Website of Cashless India - https://www.india.gov.in/website-cashless-india?page=11
12. nternational Trade Administration. (2024). India - Information and Communication Technology - https://www.trade.gov/country-commercial-guides/india-information-and-communication-technology

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

कृषि में कीटनाशकों का उपयोग : मानव व पारिस्थिति पर प्रभाव (हनुमानगढ़ जिले का भौगोलिक अध्ययन)

रोहताश कुमार
शोधार्थी (भूगोल),
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.)

डॉ. सोम प्रकाश
शोध निर्देशक (भूगोल),
टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.)

सारांश

फसलों पर कीटों का प्रकोप होना आम बात है। इन कीटों से निपटने के लिए ज्यादातर किसान रासायनिक कीटनाशकों का इस्तेमाल करते हैं, लेकिन जिस तरह से दुनियाभर में कैमिकल और पेस्टीसाइड का अंधाधुंध प्रयोग हुआ है, उससे खेती और इंसान दोनों को बहुत नुकसान पहुँचा है। दुनिया भर में हुए शोधों से पता चला है कि कैंसर समेत कई बीमारियों के लिए कुछ हद तक ये कीटनाशक जिम्मेदार हैं। लेकिन कई बार खाने की थाली तक पहुंचने से पहले ये कीटनाशक खुद किसानों की जान ले लेते हैं। वेबसाइट मदरजोंस के मुताबिक, कैलिफोर्निया के कर्न काउंटी में अगस्त 2017 में ही खेतों में काम करने वाले 167 मजदूरों का समूह लहसुन की कटाई करते समय अचानक बीमार हो गए। केर्न काउंटी के कृषि वैज्ञानिकों को बाद में पता चला कि उनमें से 92 मजदूर कीटनाशकों के सम्पर्क में थे। इसे बाद केर्न काउंटी के सम्बन्धित अधिकारियों ने पेस्टीसाइड बनाने वाली पांच कम्पनियों को दंडित किया लेकिन सिर्फ इन कम्पनियों को दोष देने से बात खत्म नहीं होगी, जरूरी है कि कीटनाशक समय लेकर हटाए जों, उनके विकल्प आएं और खुद किसान उसके सही इस्तेमाल का तरीका समझें।

बीज शब्दः कीटनाशक, कुप्रभाव, मानव, रसायन, त्वचा।

प्रस्तावना

फसलों पर कीटों का प्रकोप होना आम बात है। इन कीटों से निपटने के लिए ज्यादातर किसान रासायनिक कीटनाशकों का इस्तेमाल करते हैं, लेकिन जिस तरह से दुनियाभर में कैमिकल और पेस्टीसाइड का अंधाधुंध प्रयोग हुआ है, उससे खेती और इंसान दोनों को बहुत नुकसान पहुँचा है। दुनिया भर में हुए शोधों से पता चला है कि कैंसर समेत कई बीमारियों के लिए कुछ हद तक ये कीटनाशक जिम्मेदार हैं। लेकिन कई बार खाने की थाली तक पहुंचने से पहले ये कीटनाशक खुद किसानों की जान ले लेते हैं। कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग पर लगाम लगाने की कोशिशें तेज हुई हैं। इसी बीच संसद में इन जहर बनते कीटनाशकों को लेकर नया बिल लाने की सुगबुगाहट है। अगस्त 2017 में महाराष्ट्र के यवतमाल में कपास के खेत में कीटनाशकों का छिड़काव करते वक्त 800 लोग बीमार हो गए थे, इनमें से 50 मजदूरों की मौत हो गई थी, 25 लोगों की आंखों की रोशनी चली गई थी। 2017 में राज्यसभा में इस सम्बन्ध में पूछे गए एक सवाल के जवाब में कृषि राज्यमंत्री ने संसद को बताया था कि पिछले तीन सालों में खेत में कीटनाशकों का छिड़काव करत समय 5114 किसानों की मौत हो

गई थी। वेबसाइट मदरजोंस के मुताबिक, कैलिफोर्निया के कर्न काउंटी में अगस्त 2017 में ही खेतों में काम करने वाले 167 मजदूरों का समूह लहसुन की कटाई करते समय अचानक बीमार हो गए। केर्न काउंटी के कृषि वैज्ञानिकों को बाद में पता चला कि उनमें से 92 मजदूर कीटनाशकों के सम्पर्क में थे। इसे बाद केर्न काउंटी के सम्बन्धित अधिकारियों ने पेस्टीसाइड बनाने वाली पांच कम्पनियों को दंडित किया लेकिन सिर्फ इन कम्पनियों को दोष देने से बात खत्म नहीं होगी, जरूरी है कि कीटनाशक समय लेकर हटाए जों, उनके विकल्प आएं और खुद किसान उसके सही इस्तेमाल का तरीका समझें।

फसल के विकास में बाधा पहुंचाने वाले कुछ प्रजातियों को मारने या अवांछित फफूंद, कीटों अथवा खरपतवार की रोकथाम के लिए कीटनाशकों का उपयोग किया जाता है, क्योंकि वे फसलों को नुकसान पहुंचाते हैं। उदाहरण के लिए, कुछ कीड़े फसलों को खा जाते हैं जिन्हें कीट कहा जाता है, जबकि मधुमक्खी जैसे कुछ कीड़े फायदेमंद होते हैं, क्योंकि वे पौधों के परागण में सहायक होत हैं। आमतौर पर, फसलों के बीच उगने वाले बेकार के पौधों को खरपतवार कहते हैं। नियंत्रित किए जाने वाले कीटों अथवा पौधों की प्रजातियों के आधार पर कीटनाशकों को कई श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

कीट-पतंगों को मारकर उनकी आबादी को नियंत्रित करने के लिए कीटनाशकों का उपयोग किया जाता है। अवांछित फफूंद, जो पौधों को कमजोर कर सकते हैं या फलों को नष्ट कर सकते हैं, एन्हें फफूंदनाशी की मदद से नियंत्रित किया जाता है। कुतरने वाले जीवों और चूहों को कृतकनाशी द्वारा मारा जाता है। हानिकारक पौधों को शाकनाशी द्वारा नियंत्रित किया जाता है।

एक आदर्श कीटनाशक केवल विशिष्ट प्रकार के कीटों की वृद्धि को कम करता है या उन्हें मारता है, जो समस्या उत्पन्न करते हैं। हालांकि ज्यादातर कीटनाशक विशिष्ट नहीं होते हैं और विभिन्न प्रकार के गैर-लक्षित जीवों को भी मार देते हैं। उदाहरण के लिए अधिकांश कीटनाशक कीटों की लाभदायक एवं हानिकारक दोनों प्रजातियों को मारते हैं, कृतकनाशी कुतरने वाले जीवों के साथ-साथ अन्य जानवरों के साथ-साथ कृन्तकों को भी मारता है, जबकि ज्यदातर शाकनाशी विभिन्न प्रजातियों के पौधों को मार देते हैं, जिसमें नुकसानदेह एवं गैर-नुकसानदेह प्रजातियों के पौधे भी शामिल हैं। विभिन्न प्रकार के कीड़ों की 1000 से अधिक प्रजातियों में कुछ ही कीट हानिकारक होते हैं, लेकिन कीटनाशकों की मदद से सभी का सफाया किया जाता है। कीटनाशक मेंढ़क, सांप और पक्षियों जैसी अन्य प्रजातियों को भी प्रतिकूल रूप से प्रभावित करते हैं, जो कुदरती तौर पर कीट नियंत्रक का काम करते हैं।

भारत में, नियमित तौर पर इस्तेमाल किए जाने वाले 133 कीटनाशकों में से लगभग 40 को कुछ देशों में प्रतिबंधित या सीमित कर दिया गया है, परन्तु इनका आज भी धड़ल्ले से उपयोग हो रहा है। डीडीटी और बैंजीन हेक्साक्लोराइड की तरह खतरनाक कीटनाशकों में से कुछ कैंसर पैदा करने में सक्षम है। भारत में इनके उपयोग को प्रतिबंधित किए जाने के बावजूद इनका इस्तेमाल जारी है और ये निरन्तर जलाशयों तक पहुंच रहे हैं। ऐसा माना जाता है कि डीडीटी जैसे कीटनाशकों के अत्यधिक संचय के परिणामस्वरूप पक्षियों के अंडे का आवरण समान्य से काफी पतला हो जाता है। जब पक्षी इन अंडों को सेने के लिए इन पर बैठते हैं, तो ये अंडे टूट जाते हैं और अंदर विकसित होने वाले चूजे की मौत हो जाती है। इस प्रकार के प्रदूषण से बाज, गिद्ध और मछलियों का भक्षण करने वाले अन्य पक्षी विशेष रूप से प्रभावित होते हैं।

कीटनाशक उन किसानों के स्वास्थ्य को भी प्रभावित करते हैं, जो उनका इस्तेमाल करते हैं। वे शरीर में त्वचा एवं आंखों या नाक एवं मुंह के माध्यम से थोड़ी मात्रा में प्रवेश कर सकते हैं। जिन क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर उर्वरकों एवं कीटनाशकों का इस्तेमाल किया जाता है, वहाँ महिलाओं के स्तन दुग्ध के नमूने एकत्रित किए गए, जिसमें कीटनाशकों की मात्रा काफी पाई गई।

कीटनाशकों का मानव पर प्रभाव

कीटनाशकों को आधुनिक खेती का एक महत्वपूर्ण घटक माना जाता है, खाद्य पदार्थों के भण्डारण, उच्च कृषि उत्पादकता,

खाद्य पदार्थों की बढ़ती मांग को पूरा करने तथा कीटों के रोकथाम के लिए कीटनाशकों का व्यापक उपयोग किया जाता है। सब्जियों तथा फलों की खेती के दौरान फसलों की सुरक्षा के लिए कीटनाशकों की एक विस्तृत शृंखला का विश्व स्तर पर इस्तेमाल किया जाता है। उपलब्ध तथ्यों तथा विभिन्न अनुसंधान से पता चलता है कि कुछ खाद्य पदार्थों में कीटनाशकों के अवशेष अपने संबंधित अधिकतम अवशेष सीमा (एम.आर.एल.) से ऊपर होते हैं जो कि मानव स्वास्थ्य संबंधी विभिन्न विशाक्त प्रभाव के मुख्य कारक हैं। पारम्परिक कृषि में कीटनाशकों के उपयोग को कम करने के लिए वर्तमान में कई देशों में शोध कार्य प्रारम्भ किये गये हैं।

कीटनाशकों को आज विश्व पर्यावरण प्रदूषण मे शामिल कारकों में से एक माना जाता है जबकि इन रसायनों का उद्देश्य कीट और रोग कारकों को नष्ट करने के लिए तैयार किया गया था, हालांकि कीटनाशकों के बड़े पैमाने पर उपयोग से कृषि उत्पादों में वृद्धि और संक्रामक रोगों को नियंत्रित करने में महत्त्वपूर्ण सहयोग प्राप्त हुआ है तथापि उनके व्यापक उपयोग में वृद्धि से मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण प्रदूषण के पक्ष को अनदेखा नहीं किया जा सकता है।

कीटनाशक मानव शरीर में मुख द्वारा, सांस लेने एवं त्वचा के माध्यम से प्रवेश कर सकते हैं। कीटनाशकों का लम्बे समय तक सम्पर्क मानव जीवन को नुकसान पहुंचा सकता है और शरीर में विभिन्न अंग प्रणालियों, अंतः स्त्रावी, प्रतिरक्षा, प्रजनन, गुर्दे, हृदय और श्वसन प्रणाली मे विकास उत्पन्न कर सकता है। मानव जीर्ण रोगों की घटनाओं, जैसे- कैंसर, पार्किसंस, अल्जाइमर, मधुमेह, हृदय और क्रोनिक किडनी रोग सहित अनेक रोगों का कारण कीटनाशकों को माना जा रहा है।

विभिन्न शोध यह दर्शाते हैं कि कृषि में उपयोग होने वाले कीटनाशकों का केवल एक प्रतिशत ही लक्ष्य तक पहुंचता है जबकि शेष पर्यावरण के विभिन्न घटकों को दूषित करता है तथा खाद्य शृंखला में सम्मिलित होकर हानिकारक स्तर तक पहुंच जाता है। खाद्य शृंखला की श्रेणी में मानव उच्च पोषण स्तर पर विद्यमान है इसलिए बायोएक्युम्युलेशन तथा बायो मैग्निफिकेशन की प्रक्रिया के कारण मानव कीटनाशकों द्वारा अत्यधिक प्रभावित होते हैं।

कुछ कीटनाशक जल अविलेय होते हैं जिस कारण वे मानव तथा अन्य जीवों के वसा-युक्त ऊतकों में एकत्रित हो जाते हैं ओर समय के साथ-साथ इनके स्तर में बायोएक्युम्युलेशन की प्रक्रिया द्वारा वृद्धि होती रहती है। केवल बायोएक्युम्युलेशन और बायोमैग्निफिकेशन की प्रक्रिया ही नहीं परन्तु सहक्रियाशील प्रभाव के कारण भी मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाला प्रतिकूल प्रभाव बढ़ जाता है, जिसका तात्पर्य यह है कि कीटनाशक पर्यावरण में उपस्थित अन्य रसायनों के साथ मिलकर कई गुना अधिक हानिकारक बनकर मानव स्वास्थ्य को क्षति पहुंचाते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन (World Health Organization, WHO) ने यह प्रमाणित किया है कि 1 वर्ष में लगभग 3 मिलियन (30 लाख) मानव कीटनाशक के उपयोग द्वारा प्रभावित होते हैं।

कुछ कीटनाशक अंतःस्रावी प्रतिरोधक होते हैं जो मानव शरीर में उपस्थित प्राकृतिक हॉर्मोन्स को प्रभावित करते हैं। अधिक समय तक कम मात्रा में कीटनाशकों का मानव द्वारा सेवन उनके प्रतिरक्षा तंत्र को प्रभावित करता है। इसके साथ ही ये कीटनाशक मानव हॉर्मोन्स, बुद्धि विकास तथा प्रजनन दर को भी कम कर देते हैं। इसके अतिरिक्त कैंसर जैसी घातक बीमारियों को भी उत्पन्न कर देते हैं। कम समय तक तीव्रता से प्रभावित करने वाले कीटनाशक, मानव में सर्दी, जुकाम, माइग्रेन और त्वाचा रोग जेसी सामान्य बीमारियों को जन्म देते हैं।

आधुनिक कृषि में कीटनाशक का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता हैं। अधिक मात्रा में कीटनाशक के प्रयोग से वायु, जल तथा मृदा में प्रदुषण की मात्रा बढ़ जाती हैं। कीटनाशक जल तथा मृदा प्रदूषण के संभावित कारणों में से एक हैं। इसके अलावा, कीटनाशकों का उपयोग जैव विविधता को कम करता है और परागण के गिरावट में इसका मुख्य योगदान है। कीटनाशकों के साथ काम करने वाले लोगों में तीव्र और देरी से स्वास्थ्य प्रभाव हो सकता है। स्वास्थ्य समस्याओं का खतरा न केवल कीटनाशक पर निर्भर करता है, बल्कि कीटनाशक के अनावरण की मात्रा पर भी निर्भर करता है। इसके अलावा, बच्चे, गर्भवती महिलायें और बीमार या बूढ़े लोग सामान्य की तुलना में कीटनाशक के प्रभावों के प्रति अधिक संवेदनशील हो सकते हैं (चित्र 7.1)।

चित्र-1 : मानव शरीर पर कीटनाशक का प्रभाव

रासायनों के प्रयोग से उत्पन्न बुरे प्रभावों में से कुछ मुख्य प्रभाव जो मनुष्य जाति पर पड़े हैं निम्नानुसार हैं :

1. विश्व स्वास्थ्य संघ (WHO) के आंकड़ों (1985) के अनुसार हर साल विश्व में दस लाख लोग जहरीले रासायनों से प्रभावित हो जाते हैं जिनमें से बीस हजार लोग मर जाते हैं। जबकि यू. एन. ओ. (1983) की रिर्पोट के अनुसार ये आकड़े 20 लाख तथा 40 हजार हैं। अन्धाधुन्ध रसायनों के प्रयोग से ये आंकड़े लगातार बढ़ते जा रहे है, इसके लिए कड़े कदम उठाने की आवश्यकता है।

2. संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा संचालित विश्व पर्यावरण विश्लेषण कार्यक्रम के आकड़ों के अनुसार भारतीय माताओं के दूध में डी. डी. टी. और बी. एच. सी. की मात्रा दूसरे देशों की तुलना में कम से कम चार गुणा अधिक पाई गयी है।

3. डाक्टरों के अनुसार मनुष्य पर कई प्रकार के रासायनों से होने वाले दुष्प्रभाव सामने आये हैं जिनमें से मुख्य इस प्रकार हैं, बेहोशी, मृत्यु, चक्कर, थकान, सिरदर्द, उल्टी, छाती, दर्द, केंसर, मोतिया बिन्द, अंधापन, दमा, उच्च रक्तचाप, दिल का दौरा, गर्भपात, अनियमित मासिक धर्म, नपुंसकता इत्यादि।

4. कीटनाशकों को नियंत्रित करने वाले श्रमिकों में गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं, जैसे पेट दर्द, चक्कर आना, सिरदर्द, उल्टी, गले में संक्रमण साथ ही त्वचा और आंख की समस्याएं। आमतौर पर कीट प्रबंधन में बिना किसी सुरक्षा संयंत्रों के कीटनाशकों का उपयोग करने से ये समस्याएं बढ़ जाती हैं।

5. कीटनाशकों के अनियमित इस्तेमाल तथा इनके संपर्क में ज्यादा रहने से स्वास्थ्य पर कई प्रकार के गंभीर और विपरीत प्रभाव देखने को मिलते हैं जिनमे कैंसर, प्रजनन सम्बंधित समस्या, गुर्दे तथा यकृत का खराब होना तथा तंत्रिका तंत्र पर दुष्प्रभाव शामिल हैं।

फसलों में प्रयोग किए जा रहे मानव स्वास्थ्य के लिए घातक 19 कीटनाशकों पर सरकार ने प्रतिबंध लगा दिया है। ये ऐसे कीटनाशक हैं, जिनकी जांच में पॉइजन की मात्रा मानक से अधिक पाई गई है। ऐसे कीटनाशकों के इस्तेमाल से कैंसर, किडनी एवं लीवर खराब होने, हार्टअटैक सहित कई गम्भीर बीमारियां बढ़ रही हैं। अब इन कीटनाशकों का रजिस्ट्रीकरण, आयात, विनिर्माण, सूत्रीकरण (फार्मूला), परिवहन, बिक्री का उपयोग नहीं किया जा सकेगा। मानव स्वास्थ्य के लिए खतरनाक कीटनाशकों में से फिलहाल ट्राइफ्लूरेलिन को गेहूं की फसल में उपयोग करने की छूट दी गई है, जबकि 12 कीटनाशकों को तत्काल पूरी तरह प्रतिबंधित कर दिया है। वहीं छः कीटनाशकों के आयात, विनिर्माण एवं सूत्रीकरण पर एक जनवरी 2019 से प्रतिबंध लगा दिया गया है।

कीटनाशकों का मृदा पर प्रभाव

तेजी से बढ़ती मानव आबादी के कारण, फसल का अधिकतम करने के लिए व्यापक कीटनाशकों का उपयोग किया जाने लगा है। खेत की मिट्टी में कीटनाशकों के अत्यधिक सेवन से प्रदूषण दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है।

मृदा प्रदूषण मृदा में होने वाले प्रदूषण को कहते हैं। यह मुख्यतः कृषि में अत्यधिक कीटनाशक का उपयोग करने या ऐसे पदार्थ जिसे मृदा में नहीं होना चाहिए, उसके मिलने पर होता है, जिससे मृदा की उपज क्षमता में भी बहुत प्रभाव पड़ता है। इसी के साथ उससे जल प्रदूषण भी हो जाता है।

गत दो दशकों के दौरान खेती में रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों के बढ़ते प्रयोग के कारण कृषि भूमि का उपजाऊपन घटता जा रहा है। मृदा की उर्वरा शक्ति नष्ट होती जा रही है। साथ ही कृषि रसायनों के अंधाधुंध प्रयोग से कृषि उपज भी विषाक्त होती जा रही है। बढ़ती जनसंख्या के भरण-पोषण के लिए यह नितांत आवश्यक है कि खाद्यान्न व खाद्य तेलों के उत्पादन में अधिकाधिक वृद्धि की जाए ताकि भविष्य में देश का खाद्यान्न उत्पादन बढ़ती जनसंख्या के अनुरूप हो। इसके लिए प्रति इकाई क्षेत्र उत्पादन बढ़ाने के अलावा और कोई विकल्प नहीं है क्योंकि भविष्य में कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल बढ़ने की संभावनाएं नगण्य हैं। यह मृदा उर्वरता के उचित प्रबंध द्वारा ही सम्भव हो सकेगा। मृदा में किसी खास पोषक तत्व की कमी हो तो उसकी आपूर्ति जैविक खादों एवं रासायनिक उर्वरकों के द्वारा की जानी चाहिए। अन्यथा इसका मृदा उर्वरता व उत्पादकता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

खेतों में गोबर की खाद व पशुओं के मल-मूत्र तथा बिछावन का बहुत कम प्रयोग हो रहा है। परिणामस्वरूप मृदा में जीवांश पदार्थ की कमी होती जा रही है। मृदा में जीवांश पदार्थ की कमी से उसमें उपस्थित लाभकारी जीवाणु और जीव-जंतु विलुप्त हो जाएंगे। इनकी उपस्थिति में मृदा में होने वाली विभिन्न अपघटन इत्यादि क्रियाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा जिससे पोषक तत्वों एवं खनिज लवणों का बहुत बड़ा हिस्सा पौधे को प्राप्त नहीं हो सकेगा। अतः फसलों से अच्छी गुणवत्ता की अधिक पैदावार लेने के लिए तथा जमीन के उपजाऊपन को बनाए रखने के लिए रासायनिक उर्वरकों के संतुलित प्रयोग की आवश्यकता है। इसके लिए खेती में रासायनिक उर्वरकों के अलावा पौधों को पोषक तत्व प्रदान करने वाले अन्य स्रोतों के प्रयोग की भी पर्याप्त संभावनाएं हैं।

रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग से हो रहे नुकसान इस प्रकार है–

1. नाइट्रोजन धारी उर्वरकों को लम्बे समय तक अधिक मात्रा में प्रयोग करने से जमीन अम्लीय हो जाता है। इससे मिट्टी और जल दोनों प्रदूषित होता है। पानी में नाइट्रेट की मात्रा 50 मिली ग्राम लीटर में अधिक होने पर मनुष्य के बच्चे और पशुओं में ब्लू बेबी सिण्ड्रोम या मेथेमोग्लोबिनिमि बीमारी उत्पन्न करना है जिसके कारण बच्चों का रक्त ऑक्सीजन के अभाव में नीला हो जाता है।

2. फॉसफेटीक उर्वरक एवं एक फास्फेट में कैडमियन ओर सीसा होता है और कैडमियम युक्त भोजन लेने से गुर्दा और हृदय रोग का खतरा बढ़ जाता है। जबकि शीशा युक्त भोजन लेने से दिमाग को क्षति पहुंचाता है एवं उल्टी की शिकायत होती है। आर्सेनिक के कारण चर्मरोग होता है।

कीटनाशकों का पर्यावरण व पारिस्थितिकी पर प्रभाव

विश्व में जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ कृषि उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुई है। इस उत्पादन के विकास में जहाँ एक ओर उन्नत तकनीक, सिंचाई सुविधाओं के विस्तार आदि का हाथ है वहीं दूसरी ओर रासायनिक उर्वरकों एवं अनेक कीटनाशकों का योग है क्योंकि कृषि में अनेक प्रकार के रोगों से संपूर्ण फसल का नष्ट होना एक सामान्य बात होती है।

इस समस्या का निराकरण कीटनाशकों के प्रयोग द्वारा एक सीमा तक कर लिया गया है। इनका प्रयोग विकसित देशों में ही नहीं अपितु विकासशील देशों में भी प्रचुरता से किया जा रहा है। इसी के फलस्वरूप भारत एवं अनेक देशों में 'हरित

क्रांति' का सूत्रपात हुआ और खाद्य समस्या का निराकरण किया गया। कृषि विकास के क्षेत्र में यह एक विशेष उपलब्धि है किंतु कतिपय उर्वरकों एवं रसायनों का पर्यावरण एवं मानव तथा अन्य जीवों पर हानिकारक प्रभाव भी हो रहा है, जिसके प्रति सचेष्ट होना आवश्यक है।

कृषि में हो रहे रसायनों, उर्वरकों एवं कीटनाशी, खरपतवार नाशी और रोग नाशी रसायनों से जीवों एवं वनस्पतियों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से हानि पहुँच रही है अर्थात् ये पर्यावरण प्रदूषण का कारण बन रहे हैं। अब यह स्पष्ट हो गया है कि जीव नाशी रसायनों (कीट नाशी, रोग नाश) से पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है!

उनके प्रयोग से सूक्ष्म जीव-समूह तथा वनस्पति समूह प्रभावित हो रहा है। मिट्टी में डाले गये डी.डी.टी., गेमेक्सीन, एल्ड्रिन, क्लोरोडेन आदि कीटनाशियों का अवशेषी प्रभाव क्रमशः 9, 10, 11 तथा 12 वर्षों तक पाया गया है। खरतपवार नाशी रसायनों का अवशेषी अंश 6 से 36 महीनों तक रहता है।

मिट्टी से ये रसायन वर्षा जल के साथ बह कर तालाबों, झीलों, नदियों, कुंओं में पहुँच कर वनस्पतियों तथा जल-जीवों को प्रभावित करते हैं। वर्तमान समय में नित नये कार्बनिक रसायनों की खोज हो रही है और अब तक 70000 से भी अधिक रसायन तैयार किये जा चुके हैं।

पेस्टीसाइड्स आधुनिक कृषि विज्ञान का एक आवश्यक अंग बन गये हैं और इनके वातावरणीय प्रदूषण तथा असंतुलन पर विश्व भर में अनेक परीक्षण हो चुके हैं। 1962 में महिला जीव-शास्त्री रॉकेल कार्सन द्वारा लिखित 'साइलैण्ट स्प्रिंग' के पश्चात् पेस्टीसाइड्स के घातक प्रभावों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित हुआ।

तत्पश्चात् इस दिशा में विश्वव्यापी जागृति आई और इनके प्रभावों को कम करने हेतु अनुसंधान प्रारंभ हुए। अकार्बनिक पेस्टीसाइड में आर्सेनिकीय पदार्थ आते हैं जो अनेक वर्षों तक भूमि, वनस्पति में विद्यमान रहते हैं।

इसी प्रकार कार्बनिक पेस्टीसाइड भी वातावरण को विषाक्त करते हैं। कार्बनिक फॉस्फेट यौगिक में पैराथियन, मैलाथियन, क्लोथियम, फोसड्रिन, क्लोरडोन, डाइल्ड्रिन, एंड्रिन एल्ड्रिन, हेप्टाक्लोर, टोक्साफीन, लिनडेन आदि आते हैं। इनका प्रभाव न केवल हानिकारक जीवों अपितु संपूर्ण पर्यावरण पर होता है।

डी.डी.टी. का प्रयोग विगत समय में इतना व्यापक किया गया कि संपूर्ण विश्व में कृषि कीटों तथा मलेरिया नाशक के लिये इसका प्रयोग होने लगा। इसके परिणाम भी लाभकारी रहे। किंतु शीघ्र ही इसके हानिकारक तत्वों का ज्ञान होने पर अमेरिका जैसे देशों में इसके प्रयोग पर कानूनी रोक लगा दी गई।

कीटनाशकों का प्रयोग आवश्यक है किंतु इनके विषैले प्रभाव पर नियंत्रण उससे भी अधिक आवश्यक है क्योंकि ये रसायन जल, वायु, मृदा, वनस्पति यहाँ तक कि मानव एवं अन्य जीवों के शरीर में प्रविष्ट होकर उन्हें अनेक प्रकार से हानि पहुँचाते हैं।

इनके निरंतर प्रयोग से आनुवांशिक परिवर्तन भी उत्पन्न हो जाते हैं तथा अनेक कीट इस प्रकार का अनुकूलन कर लेते हैं कि बाद में उन पर वे पेस्टीसाइड बेअसर हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त इनके प्रयोग से ऐस जीव-जंतु भी समाप्त हो जाते हैं जो लाभकारी होते हैं।

अतः कीटनाशकों का प्रयोग सावधानी से किया जाना चाहिये, उनकी उत्तमता सुनिश्चित होनी चाहिये और यदि उनका पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव होता है तो उनके प्रतिरोधक भी विकसित करना आवश्यक है अन्यथा कृषि का वर्तमान विकास पारिस्थितिकी-तंत्र को हानिकारक रहेगा।

राजस्थान राज्य के कृषि क्षेत्रों में हनुमानगढ़ जिले का महत्त्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इस जिले की कृषि भूमि समतल व उपजाऊ है, साथ ही यहाँ पर गंगनहर, भाखड़ा नहर तथा इन्दिरा गांधी नहर परियोजनाओं द्वारा सिंचाई सुविधायें भी उपलब्ध है। फलस्वरूप यह क्षेत्र कृषि उत्पादन की दृष्टि से श्रेष्ठ क्षेत्र है। राज्य में कुल काशत क्षेत्रफल का 4.72 प्रतिशत क्षेत्रफल हनुमानगढ़ जिले में है। हनुमानगढ़ जिले का भौगोलिक क्षेत्रफल राजस्थान का 3.19 प्रतिशत है तथा राज्य की कुल जनसंख्या का 2.87 प्रतिशत भाग यहाँ निवास करता है।

विभिन्न कारणों से आज कृषि में सार्थक परिवर्तन हो रहें है। किसान परम्रागत कृषि पद्धति से हटकर आधुनिक कृषि की तरफ अग्रसर है। कृषि के आधुनिकीकरण में प्रभावशाली तत्त्व आधुनिक तकनीक है, जिसके कारण पारिथितिकी में अनेक परिवर्तन हुए हैं। कृषि में आधुनिक आदानों के प्रयोग से सिंचाई क्षेत्रों में वृद्धि हो रही है। ऊर्जा का प्रयोग बढ़ रहा है। फसल उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई है। देश की बढ़ती आबादी के भोजन के लिए हरित क्रांति के माध्यम से हमने अन्न उत्पादन में भारी बढ़ोतरी की। इस रिकॉर्ड अन्न उत्पादन के लिए प्रयोग होने वाले कीटनाशकों, फंफुदनाशकों, खरपतवारनाशकों और खादों ने हमारे अन्न भंडारों को तो भर दिया, लेकिन अंधाधुंध कीटनाशकों के प्रयोग ने पर्यावरण को बुरी तरह से प्रदूषित करना भी शुरू कर दिया। फसलों, सब्जियों और फलों पर प्रयोग होने वाले इन रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से ग्रामीण क्षेत्रों का जल, भूमि एवं जलवायु सबसे अधिक प्रभावित हो रहे हैं। मानव शरीर भोजन एवं स्वच्छ वातावरण पर ही आधारित है और अच्छा भोजन एवं स्वच्छ वातावरण कृषि फसलों से ही प्राप्त किया जाता है। अतः मानव का विनाश एवं अस्तित्व कृषि व पर्यावरण पर आधारित है। मानव विकास के लिए कृषि पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण का संतुलित विकास भी जरूरी है। अतः कृषि व पर्यावरणीय समस्याओं के लिए कृषि पारिस्थितिकी व पर्यावरण का अध्ययन करना पड़ता है। इस अध्ययन के लिए किसी क्षेत्र का चुनाव करना आवश्यक है अतः कृषि पारिस्थितिकी एवं पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान को अर्थशास्त्र का मूल आधार मानते हुए राजस्थान के उत्तरी भाग के कृषि जिले हनुमानगढ़ का अध्ययन हेतु चयन किया गया है। हनुमानगढ़ जिले मे कृषि विकास हेतु राज्य सरकार निरन्तर प्रयासरत रही है तथा इसके अंतर्गत यह अतिआवश्यक है कि जिले में कृषि के विभिन्न पहलूओं का क्षेत्रीय अध्ययन किया जावे एवं इन अध्ययनों के आधार पर भावी कृषि विकास की योजनाएं तैयार की जावे, जिससे अधिक से अधिक मानवीय एवं प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर कृषि विकास किया जा सके।

कीटनाशकों के उपयोग से मिट्टी (मृदा), जल और अन्य उपयोगी वनस्पतियाँ दूषित हो रही हैं। कीड़ों एवं खरपतवारों को नष्ट करने वाले कीटनाशक पक्षियों, लाभप्रद कीड़ों, अन्य पौधों तथा जीवों को भी विषाक्त कर नष्ट कर सकत हैं।

कीड़ों को नष्ट करने वाले कीटनाशक (Insecticides) सबसे अधिक तीव्रता से विषाक्त करने वाले वर्ग हैं परन्तु शाकनाशी तथा खरपतवारनाशक भी अन्य जीवों को क्षति पहुंचाकर नष्ट कर सकते हैं।

निष्कर्ष

खेती में कीटनाशकों के बेतहाशा इस्तेमाल पर रोक लगाने की जरूरत लंबे समय से महसूस की जाती रही है। इसके मद्देनजर सरकार ने कुछ कीटनाशकों के खतरनाक प्रभावों को देखते हुए उन्हें प्रतिबंधित भी किया, लेकिन फिर भी इनका इस्तेमाल नहीं रुका। फसल को बीमारी से बचाने के लिए जितना कीटनाशक इस्तेमाल होता है, उसका बहुत कम हिस्सा अपने वास्तविक मकसद के काम आता है। इसका बड़ा हिस्सा तो हमारे विभिन्न जल स्रोतों में पहुंच जाता है और भू-जल को प्रदूषित करता है। हालत यह है कि इन रसायनों के जमीन में रिसते जाने की वजह से काफी जगहों का भू-जल बेहद जहरीला हो गया है। यही नहीं, ये रसायन बाद में बहकर नदियों, तालाबों में भी पहुंच जाते हैं, जिसका दुष्प्रभाव जल-जीवों और पशु-पक्षियों पर भी पड़ रहा है। इनमें तरह-तरह के रोग पैदा हो रहे हैं। कीटनाशकों के इस्तेमाल वाली फसलों के खाने से न सिर्फ इंसान की सेहत पर प्रभाव पड़ा, बल्कि पशु-पक्षी, कीट-पतंगे और पर्यावरण भी प्रभावित हुआ।

इतना सब कुछ होने के बाद भी सरकार में यह इच्छाशक्ति जरा सी भी नहीं दिखलाई देती कि वह कीटनाशकों के इस्तेमाल को रोकने या सीमित करने के लिए कुछ खास कदम उठाए। कुछ ऐसा करे कि कीटनाशकों का इस्तेमाल हतोत्साहित हो। जब भी रासायनिक खादों और कीटनाशकों के अंधाधुंध इस्तेमाल से पैदा होने वाले स्वास्थ्य संबंधी खतरों की बात उठती है, तो यह दलील दी जाती है कि इस पर रोक लगाने से पैदावार कम हो जाएगी। देश की खाद्य सुरक्षा प्रभावित होगी, लेकिन ज्यादा पैदावार किस शर्त पर मिल रही है, इसे जानते-बूझते नजरअंदाज कर दिया जाता है। खाद्य सुरक्षा का मतलब किसी भी तरह पैदावार का बढ़ाना नहीं होता। खाद्य ऐसा होना चाहिए, जो सेहत के लिए भी लाभदायक हो। रासायनिक खादों और कीटनाशकों के ज्यादा इस्तेमाल से न सिर्फ इंसान और जीव-जंतुओं की सेहत पर असर पड़ रहा है, बल्कि जमीन के उपजाऊपन

में भी कमी आ रही है। अब वक्त आ गया है कि सरकार अपनी कृषि नीतियों का पुनरावलोकन करे। आधुनिक कृषि प्रणाली के फायदे और नुकसान का सही-सही जायजा ले। सरकार की ओर से कीटनाशकों के इस्तेमाल को नियंत्रित करने और खेती के ऐसे तौर-तरीकों को बढ़ावा देने की पहल होनी चाहिए, जो सेहत और पर्यावरण दोनों के लिए अनुकूल हों, तभी जाकर खेत और किसान सुरक्षित रहेंगे।

संदर्भ

1. शर्मा, एच.एस. शर्मा, एम.एल. (2006) : राजस्थान का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर
2. नेगी, बी.एस. (2014-15) पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण, कमल प्रकाशन मेरठ
3. कपूर, सुदर्शन कुमार (1974) : भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
4. धाबाई, सुमन (1999), राजस्थान में कृषि परिवर्तन का स्वरूप, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर।
5. Ross, Theadora (2016) : "Take control of your genetic inheritance." Gilden Media, LLC Publication.
6. Pagoda, J.M., Preston, Martin S. (1997) : "Household Pesticides and risk of pediatric train tumors environment health perspective, p.p. 1214-1220

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

मानव अधिकार की अवधारणा, विकास और महत्व : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन
सहा प्राध्यापक राजनीति विज्ञान
पं देवी प्रसाद चौबे शासकीय महाविद्यालय साजा, जिला बेमेतरा छ.ग.

सारांश

मानव अधिकार वे जन्मजात और सार्वभौमिक अधिकार हैं जो हर व्यक्ति को मानव होने के नाते प्राप्त होते हैं। यह अध्ययन मानव अधिकारों की अवधारणा, उनके प्राकृतिक और कानूनी सिद्धांतों, प्रकारों (नागरिक, राजनीतिक, आर्थिक), ऐतिहासिक विकास (प्राचीन काल से आधुनिक तक) और महत्व पर केंद्रित है। मानव अधिकारों का विकास मैग्ना कार्टा 1215, पेटिशन ऑफ राइट्स 1628, हेबियस कॉर्पस एक्ट 1679, बिल ऑफ राइट्स 1689 अमेरिकी स्वतंत्रता घोषणा 1776, फ्रांसीसी क्रांति 1789, रूसी क्रांति 1917 और संयुक्त राष्ट्र की सार्वभौमिक घोषणा से जुड़ा है। 2025 में ये अधिकार पर्यावरण सुरक्षा, शांति और सतत विकास से जुड़े हैं। अध्ययन से पता चलता है कि मानव अधिकार सामाजिक न्याय, समानता और वैश्विक शांति के आधार हैं।

परिचय

मानव अधिकार मानव विकास की आधारशिला हैं। जन्म से व्यक्ति मात्र शारीरिक अस्तित्व है, लेकिन परिवार और समाज के संपर्क से वह मानवीय गुणों को ग्रहण करता है और अधिकारों से अवगत होकर विकसित होता है। मानव अधिकार वे अधिकार हैं जो हर व्यक्ति को मानव होने के नाते मिलने चाहिए, जैसे स्वतंत्रता, समानता, जीवन का अधिकार। ये सार्वभौमिक, अविभाज्य और अपरिहार्य हैं। संयुक्त राष्ट्र की सार्वभौमिक घोषणा में इन्हें 30 अनुच्छेदों में वर्णित किया गया है।

मानव अधिकार की अवधारणा

मानव अधिकार प्राकृतिक और जन्मसिद्ध हैं। वे स्वाभाविक, निष्पक्ष, पूर्ण सामाजिक और जन्मजात हैं। ये व्यक्ति की प्रकृति में निहित हैं जो सदैव से व्यक्ति को प्राप्त थे और समाज में आने से पूर्व तथा प्राकृतिक अवस्था में हमारे पास थे। इन अधिकारों पर व्यक्ति का उतना ही अधिकार है जितना शरीर, मन और मस्तिष्क पर। इनका अस्तित्व राज्य के जन्म से पूर्व भी था राज्य द्वारा केवल इन्हें संरक्षित किया गया है इसलिए राज्य इन्हें मनुष्यों से छीन नहीं सकता। ये राज्य की शक्ति से सीमित न होकर स्वतंत्र हैं, ये नागरिकों के सर्वांगीण विकास का मूल आधार हैं जिनके बिना मनुष्य का शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक विकास संभव नहीं है। मानव अधिकार, मनुष्य के सामाजिक जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है।

मानव अधिकार का सीधा अर्थ ऐसे न्यूनतम अधिकारों से है जिसमें व्यक्तियों के साथ लिंग, वर्ण, भाषा, धर्म, रंग, जाति

की विविधता होते हुए भी भेदभाव का व्यवहार न किया जाए क्योंकि ये व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता तथा प्रतिष्ठा से जुड़े होते हैं। मानव अधिकार का मूल तत्व है कि सभी मनुष्य समान हैं तथा उन्हें सम्मान के साथ जीने का अधिकार है। इन अधिकारों की सुरक्षा करना तथा सम्मान को बढ़ाना राज्यों का कर्तव्य है।

व्यक्ति और राज्य के संबंध अधिकार और कर्तव्यों से निर्धारित होते हैं। एक व्यक्ति को राज्य से क्या-क्या मिला है ये उसके अधिकार हैं, दूसरा व्यक्ति को राज्य के लिए क्या-क्या करना चाहिए ये उसके कर्तव्य हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि अधिकार और कर्तव्य एक दूसरे के साथ परस्पर अंतर्संबंधित होते हैं। संक्षेप में अधिकार राज्य के अंतर्गत व्यक्ति को प्राप्त होने वाली ऐसी अनुकूल परिस्थितियाँ और अवसर हैं जिससे उसे आत्मविकास में सहायता मिलती है। जैसे कि लास्की का कथन है "अधिकार सामाजिक जीवन की वे परिस्थितियाँ हैं जिनके बिना आमतौर पर कोई व्यक्ति अपने पूर्ण आत्मविकास की आशा नहीं कर सकता है।"

अधिकारों को न्याय से जोड़ कर परिभाषित करते हैं– "अधिकार न्याय की उस सामान्य व्यवस्था का परिणाम है जिस पर राज्य और उसके कानून आधारित हैं।"

वहीं गेटेल के अनुसार "अधिकार वह माँग है जिसे समाज स्वीकार करता है और राज्य लागू करता है।

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि अधिकार व्यक्ति के विकास की महत्वपूर्ण दशाएँ हैं जिन्हें राज्य कानूनी रूप से प्रदान करता है ताकि व्यक्ति अपना समुचित विकास कर सके। वास्तव में अधिकार इस बात का प्रमाण है कि जिस राज्य में व्यक्ति की गरिमा को स्वीकार नहीं किया जाता है वहाँ व्यक्ति के कोई अधिकार नहीं होते हैं। फिर भी प्राचीन समय में कुछ राज्यों में कुछ वर्गों के लोगों को अधिकारों से वंचित रखा जाता था उदाहरण के लिए प्राचीन यूनानी नगर राज्यों में केवल स्वतंत्र-जनों को ही अधिकार प्राप्त थे दासों, स्त्रियों तथा अन्य देशीय लोगों को कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे, इससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि ऐसे अधिकारों की व्यवस्था न्याय पर आधारित नहीं होती थी। सामान्यतः मानव अधिकारों को अधिकार के एक व्यापक विमर्श के रूप में देखा जाता है यद्यपि अधिकार की संकल्पना एक जटिल और बहुआर्थी संकल्पना है।

मानव अधिकारों का विकास

मानव अधिकारों के बारे में इतिहास के पन्नों को पलटने पर दिखाई देता है कि सैद्धांतिक अवधारणा के रूप में मानव अधिकार शब्द से पहले अधिकार की अवधारणा का विकास हुआ और प्राकृतिक अधिकारों के रूप में विचारकों ने अधिकारों की अवधारणा पर चिंतन मनन शुरू किया। प्राकृतिक अधिकार एक ऐसा अधिकार है जो व्यक्ति के व्यक्तित्व में निहित अधिकार है। व्यक्ति का समाज में विकास प्राकृतिक अधिकारों के द्वारा होता है जिससे वह अपना मानसिक और शारीरिक विकास कर सके। आज जिन मूल अधिकारों और मानव अधिकारों का समावेश लिखित या अलिखित संविधानों में किया गया है वह प्राकृतिक अधिकारों की ही देन है। मानव अधिकारों की वर्तमान अवधारणा का अध्ययन करने से पहले हमें यह जानना जरूरी होगा कि इन अधिकारों की जड़ें कितनी गहरी हैं इसलिए मानव अधिकार से पूर्व अधिकारों के बारे में समझना आवश्यक है और इसकी शुरुआत सामान्यतः प्राकृतिक अधिकारों के सिद्धांत से मानी जाती है।

प्राकृतिक अधिकारों का सिद्धांत 17वीं और 18वीं शताब्दी में बहुत प्रचलित रहा है, राज्य का जन्म इन अधिकारों की रक्षा के लिए हुआ है। अधिकारों के इतिहास के बारे में जानने से हमें यह ज्ञान होता है की प्राकृतिक अधिकारों की संकल्पना अनेक क्रांतियों की प्रेरणा स्रोत रही है। उदाहरण के लिए फ्रांसीसी घोषणा के अंतर्गत स्वतंत्रता, समानता, बंधुता, सुरक्षा और संपत्ति को मनुष्य के प्रमुख प्राकृतिक अधिकारों में रखा गया। अमेरिकी स्वतंत्रता की घोषणा में भी कहा गया था कि मनुष्य जन्म से समान है और विधाता ने उन्हें कुछ ऐसे अधिकार दिए हैं जो उनसे कोई भी छीन नहीं सकता है, इनमें जीवन, स्वतंत्रता और सुख की साधना के अधिकार प्रमुख हैं।

अधिकारों का कानूनी सिद्धांत प्राकृतिक अधिकारों के विपरीत है, कानूनी सिद्धांत के आधार पर अधिकार प्राकृतिक नहीं है अपितु वह राज्य और देश के कानूनों की देन है, इस प्रकार यह अधिकार कृत्रिम है अर्थात राज्य इन्हें बना भी सकता

है और इनमें संशोधन भी कर सकता है। इसके संदर्भ में बेंथम ने कहा है कि "अधिकार विधि और केवल विधि का फल है, बिना विधि के कोई अधिकार नहीं है, विधि के विरुद्ध कोई अधिकार नहीं है तथा विधि के पूर्व भी कोई अधिकार नहीं है।" दूसरे शब्दों में कानूनी अधिकार वे अधिकार हैं जिन्हें राज्य द्वारा मान्यता प्राप्त होती है और यह राज्य द्वारा लागू किए जाते हैं। राज्य द्वारा बनाए गए किसी भी कानूनी अधिकार का उल्लंघन करने पर कानून द्वारा दंडित किया जाता है जो राज्य द्वारा ही निर्धारित किया जाता है।। कानूनी अधिकार ऐसे अधिकार होते हैं जो सभी नागरिकों के लिए समान रूप से उपलब्ध होते हैं। कानूनी अधिकारों के द्वारा सभी नागरिकों को ऐसे अधिकार प्रदान किए जाते हैं जो सभी के लिए समान और बिना किसी भेदभाव के प्राप्त होते हैं। इसके अलावा अगर किसी के द्वारा किसी के इन अधिकारों का उल्लंघन किया जाता है तो वह न्यायालय भी जा सकते हैं। इस प्रकार कानूनी अधिकार तीन प्रकार के होते हैं–

- नागरिक अधिकार
- राजनीतिक अधिकार
- आर्थिक अधिकार

मानव अधिकार अविभाज्य एवं अन्योन्याश्रित होते हैं। सभी व्यक्तियों के मानव अधिकार समान महत्व के होते हैं और वे सभी मानव प्राणियों में अंतर्निहित भी होते हैं। मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा में मानव अधिकारों को भिन्न-भिन्न श्रेणियों में विभक्त नहीं किया गया है बल्कि इसकी गणना अनुच्छेदों में की गई है। संयुक्त राष्ट्र के द्वारा बाद में किए गए विकास और प्रयासों के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि इसे मुख्य रूप से दो भागों में विभक्त किया गया है।

सिविल अधिकारों का आशय उन अधिकारों से है जो व्यक्ति के प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के संरक्षण से संबंधित होते हैं जो सभी व्यक्तियों के लिए आवश्यक होते हैं जिससे कि वे अपना गरिमामय जीवन यापन कर सकें। राजनीतिक अधिकारों से तात्पर्य ऐसे अधिकारों से है जो किसी व्यक्ति को राज्य की सरकारों में भागीदारी करने की स्वीकृति देते हैं। इसमें मत देने का अधिकार, चुनावों में निर्वाचित होने का अधिकार, जन कार्यों में प्रत्यक्षतः अथवा चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से भाग लेने के अधिकार आदि आते हैं।

सिविल एवं राजनीतिक अधिकारों की प्रकृति अलग-अलग हो सकती है लेकिन वे एक दूसरे से संबंधित हैं इसलिए इनमें भेद करना तर्कसंगत नहीं प्रतीत होता है। इस प्रकार इन दोनों अधिकारों अर्थात् सिविल एवं राजनीतिक अधिकारों को एक ही प्रसंविदा में समाहित करते हुए इस प्रसंविदा का गठन किया गया जिसे अंतरराष्ट्रीय सिविल एवं राजनीतिक अधिकारों की प्रसंविदा कहा जाता है। इसमें समाहित अधिकारों को प्रथम पीढ़ी के अधिकार भी कहा जाता है।

इन अधिकारों का संबंध व्यक्तियों के लिए जीवन की न्यूनतम आवश्यकताएँ उपलब्ध कराने से है जिनके अभाव में व्यक्तियों के मुश्किल में पड़ने की संभावना रहती है। आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों के अंतर्गत मकान, भोजन, वस्त्र एवं जीवन के समुचित स्तर तथा भूख से स्वतंत्रता, काम के अधिकार, सामाजिक सुरक्षा का अधिकार, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य का अधिकार और शिक्षा का अधिकार आदि आते हैं। इन अधिकारों को दूसरी पीढ़ी के अधिकार भी कहा जाता है। इस तरह के अधिकारों के संबंध में राज्यों की ओर से सक्रिय हस्तक्षेप की अपेक्षा की जाती है जिससे इनकी पूर्ति की जा सके लेकिन राज्यों द्वारा इन अधिकारों की पूर्ति करने के लिए बहुत से संसाधनों की आवश्यकता पड़ती है जिससे इन अधिकारों की उपलब्धता इतनी तत्कालिक नहीं हो सकती है जितनी कि सिविल और राजनीतिक अधिकारों की होती है।

मानव अधिकारों का महत्व

मानव सभ्यता को विकसित करने में विधि और उसकी प्रक्रिया ने अहम भूमिका का निर्वाह किया है। विधि ने व्यक्ति अथवा मानव को विकसित करने के लिए अधिकारों का बोध कराया है। मानव अधिकारों की उत्पत्ति ही संघर्ष के परिणामों से हुई है, इसलिए इन अधिकारों की उपयोगिता अथवा महत्व व्यक्ति के आपसी सहयोग के आधार पर पारस्परिक सोहार्द को

प्रोत्साहन देना है तथा संघर्ष की स्थितियों का निदान करना है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मानवाधिकारों ने तृतीय विश्व युद्ध की विभीषिका को रोका है। अवांछनीय मानव अधिकार प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्ध की देन है, इसलिए इसके प्रभाव ने भविष्य में अंतरराष्ट्रीय संघर्ष को स्थिर किया है। मानव अधिकारों के द्वारा सामाजिक वातावरण में सोहार्द, बंधुता और समरसता की भावना को प्रोत्साहन मिलता है। सोहार्द के वातावरण में एक व्यक्ति का मानवीय अधिकार दूसरे व्यक्ति पर कर्तव्य अधिरोपित करता है। जिससे मानव अधिकारों की सार्वभौमिकता के कारण मानव अधिकार सभी राष्ट्रों के सभी मनुष्यों के लिए समान रूप से लागू होते हैं। परिणामस्वरूप इनसे विश्व समुदाय में मैत्री की विचारधारा का प्रचार एवं प्रसार होता है।

मानवाधिकार एक ऐसा विषय है, जो सभी सामाजिक विषयों में सबसे गंभीर है। आज समस्त विश्व में शक्ति और सत्ता के लिए होने वाली हिंसा इस बात का प्रत्यक्ष सबूत है कि मानवता खतरे में है। हालात ऐसे हैं कि यदि मानव पर कोई विधिक और सामाजिक नियंत्रण न हो तो वह खुद की श्रेष्ठता साबित करने के लिए मानवता को नुकसान भी पहुँचा सकता है। वास्तव में आज दुनिया में संपन्न और शक्तिशाली लोगों के बीच यदि आम जनता सुरक्षित ढंग से रह पा रही है, तो इसका एकमात्र कारण सबको मिलने वाला मानवाधिकार ही है। वर्तमान में हमारी आबादी का बहुत बड़ा हिस्सा अभी भी गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन कर रहा है और गरीबी रेखा से ऊपर भी काफी लोग औसत दर्जे का ही जीवन जी पाते हैं। मानवाधिकारों की संकल्पना सभी सरकारों से यह अपेक्षा करती है कि वो व्यक्ति की मूलभूत सुविधाओं या आवश्यकताओं को सुनिश्चित करे। अब तो तृतीय पीढ़ी के अधिकारों को भी सुनिश्चित किया जा रहा है, जिसमें पर्यावरण सुरक्षा, शांति और सतत विकास को शामिल किया गया है। इस तरह हम देखते हैं कि 21वीं शताब्दी में मानवाधिकारों का महत्व लगातार बढ़ता जा रहा है।

निष्कर्ष

मानव अधिकार मानव गरिमा और समानता के आधार हैं। उनकी अवधारणा प्राकृतिक और कानूनी सिद्धांतों से विकसित हुई है विकास ऐतिहासिक क्रांतियों और दस्तावेज़ों से जुड़ा है और महत्व वैश्विक शांति में है। 2025 में डिजिटल अधिकार और जलवायु न्याय जैसे नए आयाम जुड़ रहे हैं। सरकारों को इनकी रक्षा सुनिश्चित करनी चाहिए।

संदर्भ

1. गुप्ता, कैलाश नाथ एवं शाह, सरिता, 2011, मानवाधिकार : संदर्भ, संदर्भ एवं निराकरण। अभिव्यक्ति प्रकाशन दिल्ली।
2. मिश्र, सुबाष। 2010। मानवाधिकारों का मानवीय चेहरा। प्रतिभा प्रतिष्ठान नई दिल्ली।
3. चौधरी, मधुकुर। 2011।मानवाधिकार, आधिकार एवं संरक्षण। आर.बी.एस.ए. पब्लिशर्स, जयपुर।
4. संयुक्त राष्ट्र 1948। मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, https://www.un.org
5. Amnesty International? (2025), Human Rights in the 21st Century, https://www.amnesty.org

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

राजस्थान की स्थापत्य कला : एक ऐतिहासिक अध्ययन

Subhash Chander
(Research scholar)
Department of History
Tantia University, Riico, Sri Ganganagar
Gmail - subhashjalandhara1984@gmail.com

Dr. Vijay Shankar Kaushik
Supervisor - Assistant professor

सारांश (Abstract)

राजस्थान की स्थापत्य कला भारतीय संस्कृति, इतिहास और सामाजिक-राजनीतिक परंपराओं का अद्वितीय प्रतिबिंब है। यह कला न केवल वास्तुकला का उदाहरण प्रस्तुत करती है, बल्कि राजस्थानी जीवन मूल्यों, धार्मिक आस्थाओं और कलात्मक अभिरुचियों की जीवंत झलक भी प्रदान करती है। मरुस्थलीय जलवायु और भौगोलिक परिस्थितियों ने यहाँ के स्थापत्य को विशेष रूप दिया, जिसके परिणामस्वरूप मोटी दीवारें, ऊँचे बुर्ज, झरोखे, जालियाँ और आँगन-प्रधान संरचनाएँ विकसित हुईं। राजस्थान की स्थापत्य परंपरा में किले, महल, हवेलियाँ, मंदिर, छतरियाँ और बावड़ियाँ विशेष स्थान रखते हैं। चित्तौड़गढ़, कुम्भलगढ़, जैसलमेर और मेहरानगढ़ के किले सैन्य सुरक्षा तथा शौर्य के प्रतीक हैं, वहीं आमेर, उदयपुर और जोधपुर के महल शाही वैभव और कलात्मकता को प्रदर्शित करते हैं। धार्मिक स्थापत्य में रणकपुर, देलवाड़ा और ओसियां के मंदिरों का शिल्प वैश्विक स्तर पर प्रसिद्ध है। जैसलमेर, बीकानेर और शेखावाटी की हवेलियों में उकेरी गई जालियाँ, भित्ति-चित्र और नक्काशी शहरी स्थापत्य कला का अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। इस स्थापत्य में राजपूत, मुगल और औपनिवेशिक प्रभावों का समन्वय देखा जा सकता है। जहाँ राजपूत स्थापत्य में शौर्य और वीरता का भाव है, वहीं मुगल प्रभाव से आलीशान बाग-बगीचे, दरबार हाल और संगमरमर की जटिल नक्काशी देखने को मिलती है। ब्रिटिश काल में बनाए गए भवनों में गोथिक और औपनिवेशिक शैली की छाप भी स्पष्ट है। अतः राजस्थान की स्थापत्य कला केवल भौतिक निर्माण तक सीमित न रहकर सांस्कृतिक पहचान, ऐतिहासिक गौरव और कलात्मक समृद्धि की जीवंत अभिव्यक्ति है। यह न केवल अतीत की शौर्यगाथाओं और धार्मिक परंपराओं को संजोए हुए है, बल्कि आधुनिक पर्यटन और सांस्कृतिक विरासत संरक्षण के लिए भी प्रेरणास्रोत है।

मुख्य शब्द (Keywords) : राजस्थान, स्थापत्य कला, दुर्ग, राजप्रासाद, मंदिर, राजपूत, मुगल

राजस्थान की स्थापत्य कला : एक ऐतिहासिक अध्ययन

प्रस्तावना : मानव संस्कृति के इतिहास में स्थापत्य का अपना स्वतन्त्र स्थान है। स्थापत्य एक ऐसी श्रृंखला है जो शताब्दियों की बिखरी हुई कड़ियों को जोड़कर देश और जाति की सच्ची सांस्कृतिक झाँकी उपस्थित करता है। जहाँ लिखित ऐतिहासिक साधनों की उपलब्धि नहीं हो सकती, वहाँ स्थापत्य के अवशेष अज्ञातकाल के इतिवृत्त के साक्षी बनते हैं तथा विस्मृत युगों की याद दिलाने में सहायक होते हैं। किसी भी देश की युगीन प्रगति का समुचित अध्ययन बिना स्थापत्य की विविध परतों तथा खण्डहरों के अध्ययन के नहीं हो सकता, क्योंकि उनमें देश की वास्तविक आत्मा प्रतिबिम्बित होती है। स्थापत्य

के ये सभी सांस्कृतिक तत्त्व विकसित तथा समृद्ध परिमाण में राजस्थान में पाये जाते हैं, क्योंकि यहाँ स्थापत्य की ओर रुचि सभी युगों में और जन- समुदाय में सतत् बनी रही है। इस स्थापत्य की अभिव्यक्ति गाँवों, नगरों, मन्दिरों, राजभवनों, दुर्गों, जलाशयों, उद्यानों तथा समाधियों के निर्माण द्वारा प्रमाणित होती है।

बस्तियाँ और स्थापत्य

राजस्थान के स्थापत्य का इतिहास उतना ही प्राचीन है जितना मानव इतिहास का युग। प्रमाणों से ज्ञात है कि यहाँ का आदि-निवासी भारत के आदि-निवासी की भाँति पूर्व-प्रस्तर युगीन मानव था। यह बर्बर था एवं नदियों के किनारे, वृक्षों के नीचे और पहाड़ों की उपत्यकाओं तथा कन्दराओं में रहकर जीवन व्यतीत करता था। सरस्वती, चम्बल, बनास, गम्भीरी, आहड़ तथा लूनी नदियों तथा अरावली की श्रेणियों के किनारों और गड्ढ़ों में जमी हुई परतें तथा उनके आस-पास के क्षेत्रों में मिलने वाले पत्थरों के औजार इस बात को प्रमाणित करते हैं कि यहाँ का आदिम मानव इन नदियों के तटों और अरावली पर्वत की उपत्यकाओं में कम से कम एक लाख वर्ष पूर्व रहता था। कालान्तर में प्रस्तर-युगीन मानव प्रस्तर धातु युग में प्रवेश करता है। स्थापत्य को धुँधली एवं अन्धकारपूर्ण अवस्था अब समाप्त होती है। हनुमानगढ़ जिले में कालीबंगा और बीकानेर में सौंथी से पुरातत्त्व सम्बन्धी खुदाइयों में जो भग्नावशेष मिले हैं, उनसे प्रमाणित है कि ऋग्वेद काल से कई सदियों पूर्व सरस्वती और दृषद्वती, जिन्हें आजकल घग्घर कहते हैं; के काँठे पर जीबन लहरें मारता था। खुदाई से उपलब्ध सामग्रियों-मिट्टी के चिकने बर्तन, सुन्दर रेखाचित्रों वाली मुहरें, खिलौने, चूड़ियाँ आदि ने प्रमाणित कर दिया है कि सरस्वती तथा दृषद्वती सभ्यता के नागरिक मोहनजोदड़ो तथा प्राचीन यूनानियों की भाँति कला के प्रति जागरूक थे और नागरिक स्थापत्य के प्रति पूर्ण रुचि रखते थे।

सरस्वती सभ्यता की गोधूलि के बाद दक्षिण-पश्चिमी राजस्थान की संस्कृति का प्रभात हुआ। यह संस्कृति भी ऐतिहासिक काल तक अनेक रूपों के साथ विकसित होती रही। आहड़, गिलुड आदि केन्द्र इस सभ्यता के केन्द्र रहे। अन्न पीसने के पत्थर, ताँबे की चद्दरें आदि आहड़ की कृषि तथा व्यवसाय प्रधान बस्ती की ओर संकेत करते हैं। ताँबे की कतिपय खानों के निकट होने से खनन कार्य में लगे हुए मानव का बोध होता है। आज भी इसका पुराना नाम ताम्रवती नगरी से जाना जाता है। मौर्य-काल से लेकर उत्तर गुप्तकालीन युग में भारतीय स्थापत्य की भाँति राजस्थान में स्थापत्य के एक विशेष रूप का विकास हुआ। इस काल की कला केवल राजकीय प्रश्रय की ही पात्र न थी वरन् उसे जन-प्रिय बनने का भी सौभाग्य प्राप्त था। वैराट नगर, जो जयपुर जिले में है, अशोककालीन सभ्यता का एक अच्छा उदाहरण है। यहाँ के भग्नावशेषों में स्तम्भ लेख और बौद्ध विहार के खण्डहर प्रमुख हैं। मध्यमिका में, जिसे आजकल नगरी कहते हैं और जो चित्तौड़ से आठ मील उत्तर में बेड़च नदी पर स्थित है, इन विविध प्रवृत्तियों के अच्छे नमूने उपलब्ध हैं। इस नगरी के भग्नावशेष नदी के किनारे-किनारे धूल के ढेर के रूप में दूर-दूर तक फैले हुए हैं। इसी तरह इस युग के उत्तर-पूर्वी तथा दक्षिण-पश्चिमी राजस्थान, जयपुर तथा कोटा के आसपास के क्षेत्र वास्तुकला की दृष्टि से महत्त्व के हैं। उदाहरणार्थ, नान्दसा, ककर्कोटनगर, रंगमहल आदि अपने धर्म, कृषि, वाणिज्य, व्यापार तथा शिल्प की समृद्ध स्थिति के कारण अच्छी बस्ती के स्थान थे। पुरमण्डल, हाड़ौती, शेखावाटी और जाँगल प्रदेश में भी स्थापत्य के उत्कृष्ट नमूने देखने को मिलते हैं।

जब हम सातवीं शताब्दी से लेकर तेरहवीं शताब्दी के स्थापत्य का पर्यवेक्षण करते हैं तो हम पाते हैं कि वह एक नयी राजनीतिक परिस्थिति के अनुरूप ढल जाता है। इसी अवधि में अर्बुदांचल प्रदेश में परमार, मेवाड़ और बागड़ में गुहिल, शाकम्भरी में चौहान, ढूँढाड़ में कच्छपघाट, जाँगल व मरु में राठौड़, मत्स्य व राजगढ़ में गुर्जर-प्रतिहार आदि राज्यों का उदय होता है। ये राजवंश बल और शौर्य को प्रधानता देते थे और विस्तार की ओर अग्रसर थे। यही कारण है कि इस काल की वास्तुकला में शक्ति, विकास तथा जातीय संगठन की भावना स्पष्ट झलकती है।

बूँदी के स्थापत्य में तथा उसके बसाने में पानी के प्राचुर्य का बड़ा हाथ रहा है। जोधपुर और बीकानेर की बसावट में गढ़ निर्माण, परकोटे-भवन निर्माण आदि भौगोलिक परिस्थितियों से सम्बन्धित हैं। जैसलमेर का निर्माण, जंगल की निकटता

और पानी की सुविधा को ध्यान में रखकर किया गया था। अजमेर चौहानों के काल में समृद्ध नगर था। आमेर को कछवाहों ने योजना के साथ बसाया गया था। दोनों ओर की पहाड़ियों के ढलानों में हवेलियाँ तथा ऊँचे-ऊँचे भवन बनाये गये थे। आधुनिक जयपुर नगर को खुले मैदान में चौपड़-योजना के अनुरूप बसाया और उसे चारों ओर परकोटे से सुरक्षित किया गया। उदयपुर नगर के बसाने में प्राकार, खाई तथा पहाड़ी श्रेणियों का उपयोग किया गया। पहाड़ी ढलान, चढ़ाव व उतार को ध्यान में रखते हुए नगर को टेढ़ा-मेढ़ा बसाया गया। नगरों के स्थापत्य से गाँवों की वास्तुकला भिन्न है। जो गाँव नदी के किनारे मिलते हैं, उनको हम लम्बे आकार में खुली बस्ती के रूप में बसा हुआ पाते हैं। पहाड़ी इलाके के गाँव पहाड़ी ढलान और कुछ ऊँचाई लिए हुए हैं, जैसे केलवाड़ा, सराड़ा आदि। रेगिस्तानी गाँवों की पानी की सुविधा को ध्यान में रखकर बसाया जाता है। इसीलिए बीकानेर और जैसलमेर के गाँवों के आगे "सर" अर्थात् जलाशय का प्रयोग बहुधा पाया जाता है, जैसे बीकासर, सालासर, जेतसर, उदासर आदि। जन-जीवन के विकास के साथ राजस्थान में ग्रामीण स्थापत्य की स्थिति बदल रही है और राज्य सरकार खुले, पक्के व हवादार मकानों के बनवाने की व्यवस्था जगह-जगह कर रही है। इसी तरह नगरों के स्थापत्य में भी बड़ी द्रुत गति से बदलाव आ रहा है। प्राचीन नगरों में जो ग्रामीण और नागरिक स्थापत्य का सामंजस्य था, वह विलीनप्राय होता जा रहा है और आधुनिक संस्कृति प्राचीनता के तत्त्वों को कम करती जा रही है।

दुर्ग स्थापत्य

राजस्थान में महाराष्ट्र की भाँति पद-पद पर किले मिलते हैं। यदि हम इस राज्य के एक भाग से दूसरे भाग में पद यात्रा करें तो हमें लगभग 10 मील के बाद कोई-न-कोई किला अवश्य मिल जायेगा। चाहे राजा हो या सामन्त; वह अपने किले को निधि के रूप में समझता था। वे अपने निवास के लिए, सुरक्षा के लिए, सामग्री संग्रह के लिए, आक्रमण के समय अपनी प्रजा को सुरक्षित रखने के लिए, पशु-धन को बचाने के लिए और सम्पत्ति को छिपाने के लिए किले बनाते थे। प्राचीन काल के लेखकों, मंडन सूत्रधार एवं सदाशिव ने किलों को राज्य का अनिवार्य अंग बताया है।

राजस्थान में किले के स्थापत्य के विकास का प्रथम सूत्र कालीबंगा की खुदाई में मिलता है। पीर सुल्तान और बड़ोपल में, जो गंगानगर जिले में हैं; किलों के अवशेष दिखाई देते हैं जिनमें सुदृढ़ प्राचीर, इमारतें, द्वार और गोल बुर्जे अनुमानित की जाती हैं। चित्तौड़ के अन्तिम छोर वाले भाग में सुदृढ़ दीवारों के खण्डहर सातवीं शताब्दी के किले के स्थापत्य के साक्षी हैं। एक गणना के अनुसार राजस्थान में 250 से अधिक दुर्ग व गढ़ है। श्यामलदास कृत श्वीरविनोदश के अनुसार - मेवाड़ के 84 किलों में से अकेले महाराणा कुम्भा ने 32 दुर्गों व गढ़ियों का निर्माण कराया था। इसके बाद राज्य के ढूंढाड़ इलाके में 50 से अधिक किले पाए गए।

शुक्रनीति के अनुसार राज्य के सात अंग माने गये हैं, जिनमें दुर्ग भी एक है। शुक्रनीतिकार ने दुर्ग के नौ भेद बताये हैं- एरण दुर्ग (खाई, काँटों तथा पत्थरों से जिसके मार्ग दुर्गम बने हों।), पारिख दुर्ग (जिसके चारों तरफ बहुत बड़ी खाई हो), पारिध दुर्ग (जिसके चारों तरफ ईट, पत्थर तथा मिट्टी से बनी बड़ी-बड़ी दीवारों का परकोटा हो), वन दुर्ग (बहुत बड़े-बड़े काँटेदार वृक्षों के समूह से चारों तरफ घिरा हुआ हो), धन्व दुर्ग (जिसके चारों तरफ बहुत दूर-दूर तक मरुभूमि फैली हुई हो), जल दुर्ग (जिसके चारों तरफ बहुत दूर तक फैली हुई जलराशि हो), गिरि दुर्ग (एकान्त में किसी पहाड़ी पर बना किला जिसमें जल संचय का भी प्रबन्ध हो), सैन्य दुर्ग (व्यूह रचना में चतुर वीरों से व्याप्त होने से जो अभेद्य / आक्रमण द्वारा अजेय हो), सहाय दुर्ग (शूर एवं सदा अनुकूल रहने वाले बान्धव लोग रहते हों)।

राजस्थान के दुर्गों की कोटियां

- औदुक दुर्ग - गागरोण, भैंसरोड़गढ़, चित्तौड़।
- गिरि दुर्ग - गागरोन, जालोर, सिवाना, चित्तौड़, रणथंभौर, अजमेर का तारागढ़, बूंदी का तारागढ़, मेहरानगढ़, आमेर, जयगढ़, दौसा तथा कुचामन के दुर्ग।

- धान्वन दुर्ग - जैसलमेर, तन्नोट, सिवाना, फलोदी, जालोर, नागौर, अनूपगढ़, सूरतगढ़, भटनेर के दुर्ग।
- वन दुर्ग - सिवाना, गागरोन, चित्तौड़, रणथंभोर, जालौर दुर्ग तथा मेवास दुर्ग।
- स्थल दुर्ग - बीकानेर का जूनागढ़, नागौर का अहिछत्रगढ़, चौमूं का चौमुहागढ़, भरतपुर का लोहागढ़, हनुमानगढ़ का भटनेर, माधोराजपुरा का दुर्ग।
- एरण दुर्ग - गागरोन, चित्तौड़, सिवाना, जालोर।
- पारिख दुर्ग - चित्तौड़ दुर्ग, भरतपुर का लोहागढ़, बीकानेर का जूनागढ़, नागौर का दुर्ग।
- पारिध दुर्ग - गागरोन, चित्तौड़, जालौर, बीकानेर, जैसलमेर, मेहरानगढ़, लोहागढ।
- सैन्य दुर्ग - चित्तौड़ सहित अन्य सभी दुर्ग इस श्रेणी में शामिल।
- सहाय दुर्ग - सिवाना।

तेरहवीं सदी से आगे के युग तक तो किले बनाने की परम्परा एक नया मोड़ लेती है। इस काल में ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ जो ऊपर से चौड़ी हों और जिनमें खेती और सिंचाई के साधन हों; किले बनाने के उपयोग में लाई जाने लगीं या यहाँ प्राचीन काल से बने हुए किलों का आवश्यकतानुसार पुनः निर्माण करा दिया गया। कहीं-कहीं दीवारों के नीचे गहरे पहाड़ी गड्ढे ऐसी स्थिति में रखे गये कि हमलावर फौजों का दुर्ग में घुसना कठिन हो। अचलगढ़ तथा जोधपुर के किले में चौड़ा भाग न होने से पानी का प्रबन्ध कृत्रिम टंकियों द्वारा किया गया। इसी तरह जब जालौर व नागौर के किले तुर्कों व मुगलों के अधीन हो गये तो उनमें गोली चलाने और तोपखाने से आक्रमण को रोकने की विधि का प्रयोग किया गया। बीकानेर का किला समतल मैदान में होने से ऊँची प्राचीर बनाई गई और उसके चारों ओर खाई कां प्रबन्ध रखा गया। युद्ध काल में किले में फाटकों को बन्द करके लड़ने के लिए यह किला बड़े उपयोग का था।

राजप्रासाद और स्थापत्य

स्थापत्य का विशिष्ट रूप राजप्रासाद है। प्राचीनकाल के राजप्रासादों के खण्डहर पूरे उपलब्ध नहीं होते, परन्तु यह तो निश्चित है कि जब से राजस्थान में राजपूतों के राज्य स्थापित होने लगे तब से राजभवनों का भी निर्माण होने लगा। मेनाल, नागदा, आमेर आदि स्थानों में पूर्व मध्यकालीन काल के राजभवनों के अवशेष देखने को मिलते हैं। मण्डन शिल्पी ने राजभवनों को बनाने का स्थान या तो नगर के बीच में या नगर के एक कोने के ऊँचे स्थान पर ठीक माना है। उसने राजभवनों के ढाँचे में दुर्गों की भाँति प्राकार तथा कुओं का होना आवश्यक माना है। उसने अन्तःपुर और पुरुष कक्षों को सँकड़े ढके हुए भागों से जोड़ना अच्छा समझा है। उसने महलों में दरबार लगाने, आम जनता एवं दरबारियों से मन्त्रणा करने के कक्षों पर बल दिया है। राजभवन के अन्तर्गत रसोईघर, शस्त्रागार, धान्य भंडार, मन्दिर और राजकुमारों के कक्षों को मान्यता दी है जो भारतीय शास्त्रीय पद्धति के अनुरूप हैं। वैसे राजभवन साधारण गृहस्थ के मकानों का वृहद् रूप मात्र है, जिसमें सादगी की मात्रा अधिक देखी गई है। नीचे छतें, छोटे-छोटे आवास, पतली गैलेरियाँ, छोटे-छोटे दालान इन राजभवनों की विशेषता रही है। राजपूत और मुगलों के बीच संबंध स्थापित होने के बाद स्थापत्य कला में एक समन्वय देखने को मिला है। इनमें फव्वारे, छोटे बाग, पतले खम्भे, दीवारों पर बेल-बूँटे के काम, संगमरमर का प्रयोग आदि का समावेश हो गया। उदयपुर के अमरसिंह के महल, जगनिवास, जगमन्दिर, जोधपुर के फूलमहल, आमेर व जयपुर के दीवाने-खास व दीवाने-आम, बीकानेर के रंगमहल, कर्णमहल, शीशमहल, अनूपमहल आदि में राजपूत तथा मुगल-पद्धति का समुचित समन्वय है। बूँदी, कोटा तथा जैसलमेर के महलों में मुगल शैली क्रमशः बलवती दिखाई देती है। कारण यह है कि ज्यों-ज्यों राजपूत सरदार मुगलों के दरबार में अधिकाधिक जाने लगे, त्यों-त्यों कलात्मक विचारों का आदान-प्रदान भी होने लगा तथा उनमें मुगली शान के अनुरूप अपने राज्य में व्यवस्था लाने की भी रुचि बढ़ने लगी। मुगलों के पतन के पश्चात् तो मुगल-आश्रित कई कलाकारों के परिवार राजस्थान में आकर राजपूत दरबार के आश्रित बन गये। यहाँ तक कि सामन्तों तथा समृद्ध परिवारों के भवनों में भी यह समन्वय की प्रक्रिया बढ़ती गई। राजभवनों का निर्माण समन्वयपरक हो गया। आज महलों पर पारिवारिक स्थापत्य का स्वरूप समन्वय

के माध्यम से ही परखा जा सकता है।

मन्दिरों का निर्माण और स्थापत्य

स्थापत्य कला का प्रवाह न केवल नगर-निर्माण, भवन एवं दुर्ग-निर्माण तक ही सीमित रहा वरन् कला की गति और कला की शक्ति के अनुरूप उसका प्रवेश मन्दिरों के निर्माज द्वारा भी अभिव्यक्त हुआ। मौर्यकाल से लेकर उत्तर-गुप्तकालीन युग तक भावना और कलात्मक प्रवृत्ति ने शक्ति, सौन्दर्य और आराधना की अभिव्यक्ति द्वारा मन्दिरों के स्थापत्य को अनुपम आदर्श के रूप में प्रस्तुत किया। मध्यमिका (नगरी) तीसरी शताब्दी ई. पू. से पाँचवीं-छठी शताब्दी ई. तक एक समृद्ध नगर रहा। इस अवधि में वहाँ विविध धर्म सम्बन्धी मन्दिरों का निर्माण हुआ। इन मन्दिरों के अवशेष, देवी, देवता, यक्ष, यक्षिणी, पीठिका, कलश, स्तम्भ, दहेलिका आदि के रूप में चारों ओर बिखरे या मकानों के साथ जुड़े हुए मिलते हैं। इसी कला के अन्तर्गत जब भारतीय इतिहास का चरण शुंग तथा कुषाण युग में प्रवेश करता है तो राजस्थान के मन्दिरों के स्थापत्य में एक नई गति दीख पड़ती है। मालव, यौधेय, अर्जुनायन आदि गणराज्यों में बनने वाले मन्दिरों में एक सौम्य और समृद्ध कला की परम्परा परिलक्षित होती है। जब हम गुप्तकाल तथा गुप्तोत्तरकाल में प्रवेश करते हैं तो हम पाते हैं कि राजस्थान की स्थापत्य कला सूक्ष्मता तथा दक्षता की चरमसीमा को भी पार करती है। इस युग की कला की विशेषता यह है कि उसके द्वारा चित्रण, मूर्तितक्षण और मन्दिरों के निर्माण की शैली में एक समन्वय स्थापित होता है जिससे स्थापत्य को एक नवचेतना मिलती है। इस काल में बने हुए मन्दिर, जैसे छोटी सादड़ी का भ्रमरमाता का मन्दिर, परम्परा के अध्ययन के अच्छे साधन हैं। इस परवती शताब्दी के मन्दिरों में चित्तौड़ का सूर्य मन्दिर एवं बाड़ौली के शिव मन्दिर बड़े महत्त्व के हैं। इनको देखने से लगता है कि निर्माण-कर्त्ता कलाकारों ने पारलौकिक जगत का स्पष्ट रूप हमारे सामने रख दिया है। विविध स्तरों में उभारी गई रेखाएँ तथा यक्षी मूर्तियाँ मुद्रा तथा शारीरिक सौन्दर्य की पराकाष्ठा है।

7वीं शताब्दी से लेकर 13वीं शताब्दी के स्थापत्य का पर्यवेक्षण करते हैं तो हम पाते हैं कि राजस्थान एक नये राजनीतिक जीवन में प्रवेश करता है। मालव, अवन्ति और अर्बुदांचल प्रदेशों में परमार, मेवाड़ तथा बागड़ में गुहिल, शाकम्भरी में चौहान, ढूँढाड़ में कछवाह, जाँगल और मरु में राठौड़, मत्स्यराजोगढ़ में गुर्जर प्रतिहार आदि राजवंशों का प्राबल्य बढ़ा जिन्होंने परम्परागत स्थापत्य को एक नया मोड़ दिया। जो शक्ति, विकास और संगठन की भावना राज्यों के संस्थापन में आवश्यक थी, वह भावना स्थापत्य में भी प्रस्फुटित हुई। इस काल में बनने वाले मन्दिरों में, चाहे वे विष्णु के हों अथवा शिव के, शक्ति के हों या सूर्य के, बल और शौर्य का उन्मीलन प्रगाढ़ रूप से दिखाई देता है। एकलिंगजी के अरण्यवासिनी के मन्दिर, कुण्डाग्राम के कैटभरिपु के मन्दिर, चित्तौड़ के सूर्य मन्दिर, आम्बानेरी के हर्षमाता के मन्दिर में भागवत एकत्व और शौर्य का मिलन स्पष्ट है। ये ही तत्त्व आहड़ के आदिवराह मन्दिर और जगत् के अम्बिका के मन्दिर में उभरते हैं। इन मन्दिरों के स्थापत्य में जहाँ शौर्य और बलं दिखाई देता है, वहीं धर्म का वातावरण भी प्रचुर मात्रा में है। जैन धर्म से सम्बन्धित मन्दिरों में आबू का विमलशाह का मन्दिर और वस्तुपाल और तेजपाल द्वारा निर्मित 1231 ई. के मन्दिर बड़े महत्त्व के हैं। चित्तौड़ के कीर्ति स्तम्भ, जिसे बघेरवंशीय शाह जीजा ने बनवाया था; कला का भव्य प्रतीक है। इसी प्रकार अर्धूणा, ओसियाँ, बाडौली, नागदा आदि स्थानों के मन्दिरों के शिल्प में आत्मोत्थान के भाव स्पष्ट प्रतिबिम्बित होते हैं। यहाँ के कलाकारों ने अपनी बारीक छैनी से भारतीय जीवन और सांस्कृतिक चिन्तन के अमर तत्त्वों का उन्मीलन कर जनजीवन पर अद्भुत प्रकाश डाला है। यहाँ परमात्मा की आराधना, साधुओं की वाणी का श्रवण, अर्चन आदि गंभीरतम भावों को अंकित कर कलाकार ने उच्चतम कल्पना का स्तर निर्धारित करने में सफल प्रयत्न का प्रदर्शन किया है।

जिस प्रकार दुर्गों को सुरक्षा की दृष्टि से बनाया जाता था उसी प्रकार मंदिर स्थापत्य को भी दुर्गों की तरह बनाए जाने लगा। इस युग में बनने वाले मन्दिरों को बाहर से किले के रूप में बनाया जाने लगा। कुम्भलगढ़ के नीलकण्ठ के मन्दिर, बाँणमाता के मन्दिर, एकलिंगजी के मन्दिर, कुम्भश्याम तथा रणकपुर के मन्दिर आदि के चारों ओर बनी हुई दीवारें, बुर्जे, द्वार आदि में दुर्ग-स्थापत्य का अवलम्बन लिया गया है। कुम्भा के समय के पश्चात् राजस्थान में मन्दिरों के स्थापत्य में एक नया

मोड़ आया। यहाँ के राजा-महाराजाओं ने दिल्ली शासकों से प्रभावित प्रणाली को अपनाना आरम्भ किया जिससे क्रमशः हिन्दू-मुस्लिम स्थापत्य में सामंजस्य की स्थिति बल पकड़ने लगी। इसका एक विशिष्ट रूप अकबर के काल में बन चुका था। उदाहरणार्थ, बीकानेर के प्रत्येक मन्दिर में कमल, तोते, मोर आदि के अंकन हिन्दू पद्धति से हैं तो सितारे, कुंजे तथा मेहराब वाले द्वारों की बनावट में लाहौर शैली की ओर झुकाव दिखाई देता है। बीकानेर दुर्ग में देवी के मन्दिर के खम्भे मुगल-राजपूत शैली के हैं। बीकानेर के लक्ष्मीनारायण मन्दिर के शिखर तथा मण्डल आदि भागों में जो नुकीलापन है, वह मेहराबी शैली जैसा है। मण्डपों का अधिक खुले हुए रूप में बनना भी नई पद्धति तथा स्थानीय पद्धति का सम्मिश्रण मात्र है। जोधपुर के घनश्यामजी के मन्दिर तथा आमेर के जगत् शिरोमणिजी के मन्दिर में अलंकरण और मंडप का ढाँचा मुगल शैली से प्रभावित है। यहाँ तक कि बिहार से आने वाले वैष्णव आचार्यों के मठ या मन्दिर जो कोटा, नाथद्वारा, उदयपुर आदि में हैं, वे भी मुगली प्रभाव से वंचित न रह सकें। यह तथ्य दालानों, गैलेरियों अथवा तिबारियों की शैली से स्पष्ट झलकता है।

निष्कर्ष (conclusion)

राजस्थान की स्थापत्य कला भारतीय सांस्कृतिक धरोहर का गौरवशाली प्रतीक है, जिसमें स्थानीय भूगोल, जलवायु, सामाजिक संरचना और धार्मिक परंपराओं का अद्भुत संगम दिखाई देता है। राजपूत, मुगल और ब्रिटिश प्रभावों के मेल से यहाँ का स्थापत्य अद्वितीय शैली का विकास करता है। किलों, महलों, मंदिरों, बावड़ियों और हवेलियों में उपयोग की गई पत्थर की नक्काशी, झरोखे, चबूतरे, गुम्बद और चौक राजस्थान की कला को विशिष्ट पहचान प्रदान करते हैं। यह स्थापत्य केवल भव्यता और सौंदर्य का प्रतीक ही नहीं, बल्कि व्यावहारिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है—गर्मी और रेगिस्तानी परिस्थितियों में वायुसंचालन, जल-संरक्षण प्रणालियाँ और मजबूत किलेबंदी इसकी उपयोगिता दर्शाते हैं। राजस्थान की स्थापत्य परंपरा यह प्रमाणित करती है कि कला और विज्ञान के सामंजस्य से मानव समाज न केवल अपनी सांस्कृतिक पहचान बनाए रख सकता है बल्कि पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान भी खोज सकता है। अतः राजस्थान की स्थापत्य कला इतिहास, संस्कृति, वास्तु-शिल्प और पर्यावरणीय बुद्धिमत्ता का अद्वितीय मिश्रण है, जो आज भी विश्व भर के शोधकर्ताओं और पर्यटकों को आकर्षित करता है।

संदर्भ (Reference)

- शर्मा, गोपीनाथ, सोशल लाइफ ऑफ मिडावलव राजस्थान, लोक चेतना प्रकाशन, 2015
- शर्मा, गोपीनाथ, राजस्थान का सांस्कृतिक इतिहास, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2012
- मनोहर, राघवेंद्र सिंह, राजस्थान के प्रमुख दुर्ग, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2022
- नीरज, जयसिंह, भगवती लाल शर्मा, राजस्थान की सांस्कृतिक परंपरा, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 2021
- शर्मा, हरिशंकर, सरोज पावा, राजस्थान का इतिहास, जयपुर पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, 2008
- विशिष्ठ, नीलिमा, राजस्थान का स्थापत्य एवं मूर्तिशिल्प, लिटरेरी सर्किल, जयपुर, 2018
- गुप्ता, मोहनलाल, राजस्थान के ऐतिहासिक दुर्ग, राजस्थानी ग्रंथागार, जोधपुर, 2018
- शर्मा, गोपीनाथ, राजस्थान का इतिहास, शिवलाल अग्रवाल एंड कंपनी, आगरा
- मंदिर वास्तुकला और मूर्तिकला, भारतीय कला का परिचय, एनसीईआरटी प्रकाशन

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

जयप्रकाश नारायण की संपूर्ण क्रांति एवं विचारों का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

आदित्य राज
शोधार्थी (NET) राजनीति विज्ञान विभाग
ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार
Email araj4677@gmail.com

सारांश

जयप्रकाश नारायण भारतीय राजनीतिक विचारधारा के एक महान दार्शनिक एवं क्रांतिकारी नेता रहे हैं। उन्होंने भारतीय राजनीति में नैतिकता, आदर्शवाद और वैचारिक प्रतिबद्धता का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत किया। 1974 में उन्होंने तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी की सत्तावादी नीतियों को चुनौती देते हुए "संपूर्ण क्रांति" का आह्वान किया। यह क्रांति केवल राजनीतिक परिवर्तन तक सीमित नहीं थी, बल्कि इसका उद्देश्य सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और नैतिक क्षेत्रों में व्यापक सुधार करना था। इस विचारधारा ने 1977 में बैलेट क्रांति को जन्म दिया, जिसने भारतीय लोकतंत्र में सत्ता परिवर्तन की नई परंपरा स्थापित की और गैर-कांग्रेसवाद को एक संगठित राजनीतिक विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया। जयप्रकाश नारायण का राजनीतिक प्रभाव 1967 से ही स्पष्ट हो गया था। यहां तक कि पंडित जवाहरलाल नेहरू के समय में भी उन्हें एक मजबूत विकल्प माना जाता था। नेहरू ने स्वयं उन्हें कांग्रेस में पुनः शामिल होने के लिए आमंत्रित किया था। परंतु, उन्होंने स्वतंत्र चिंतन और वैचारिक स्वायत्तता को प्राथमिकता देते हुए समाजवादी आंदोलन, सर्वोदय आंदोलन और अंततः संपूर्ण क्रांति के मार्ग को चुना। वे न केवल स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी सेनानी थे, बल्कि स्वतंत्र भारत में वैकल्पिक राजनीतिक सोच के शिल्पकार भी बने। उन्होंने राजनीति में नैतिक मूल्यों और जनसरोकारों को सर्वोच्च स्थान दिया। उनके विचार भारतीय राजनीतिक परंपरा में लोकतंत्र, सामाजिक न्याय और परिवर्तनकारी सोच के प्रतीक माने जाते हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में जयप्रकाश नारायण के राजनीतिक चिंतन का विश्लेषण किया गया है, ताकि उनके विचारों की प्रासंगिकता को समझा जा सके और भारतीय राजनीति में उनके योगदान का मूल्यांकन किया जा सके।

मूल शब्द : भारतीय राजनीति, संपूर्ण क्रांति, लोकतंत्र, समाजवाद, विचारधारा।

प्रस्तावना

भारतीय राजनीति और समाज सुधार के क्षेत्र में जयप्रकाश नारायण का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है। वे न केवल स्वतंत्रता संग्राम के सक्रिय सेनानी थे, बल्कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भी लोकतंत्र की मजबूती और सामाजिक परिवर्तन के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहे। 1974 में दिया गया उनका "संपूर्ण क्रांति" का आह्वान भारतीय राजनीति में एक निर्णायक मोड़ सिद्ध हुआ। इस आंदोलन ने भ्रष्टाचार, सत्ता के केंद्रीकरण और प्रशासनिक असमानताओं के विरुद्ध व्यापक जनजागरण का

वातावरण तैयार किया। जयप्रकाश नारायण का जीवन संघर्ष, आदर्शों और समर्पण का अद्वितीय उदाहरण प्रस्तुत करता है। उन्होंने समाज में व्याप्त अन्याय, शोषण और असमानताओं को समाप्त करने हेतु स्वयं को आजीवन समर्पित किया। प्रस्तुत शोध पत्र में उनके जीवन, विचारधारा और संपूर्ण क्रांति के भारतीय राजनीति एवं समाज पर पड़े प्रभाव का विश्लेषण किया गया है। इसका उद्देश्य यह समझना है कि उनके नेतृत्व में हुए आंदोलनों ने किस प्रकार वर्तमान भारत की राजनीतिक चेतना और सामाजिक संरचना को प्रभावित किया। उनका जन्म 11 अक्टूबर 1902 को बिहार के सिताबदियारा गाँव में हुआ। प्रारंभिक शिक्षा पटना में प्राप्त करने के बाद वे उच्च शिक्षा के लिए अमेरिका गए, जहाँ समाजवाद एवं राजनीति संबंधी उनके विचार विकसित हुए। भारत लौटने पर वे स्वतंत्रता संग्राम में सक्रिय हुए और महात्मा गांधी के नेतृत्व में कार्य किया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान उनकी राजनीतिक यात्रा ने नया मोड़ लिया जब उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के साथ रहते हुए समाजवादी विचारधारा को बढ़ावा दिया। वे कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना में अग्रणी रहे और अपने समाजवादी दृष्टिकोण के कारण कई बार जेल भी गए।

स्वतंत्रता के पश्चात जयप्रकाश नारायण ने सक्रिय राजनीति से स्वयं को अलग कर लिया और विनोबा भावे के भूदान आंदोलन का समर्थन किया। किंतु 1970 के दशक में देश में बढ़ते भ्रष्टाचार, प्रशासनिक अक्षमता और लोकतांत्रिक मूल्यों के क्षरण ने उन्हें पुनः राजनीतिक रूप से सक्रिय होने के लिए प्रेरित किया। 1974 में उन्होंने बिहार में छात्रों द्वारा आरंभ किए गए भ्रष्टाचार-विरोधी आंदोलन का नेतृत्व संभाला, जो आगे चलकर संपूर्ण क्रांति आंदोलन के रूप में विकसित हुआ। इस दौरान उन्होंने सरकार की नीतियों पर कठोर प्रहार किए और लोकतंत्र की रक्षा हेतु जनता को एकजुट किया। उन्होंने तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी से इस्तीफे की मांग करते हुए अहिंसक तरीकों से सत्ता परिवर्तन का नेतृत्व किया। उनके इन प्रयासों का परिणाम 1977 के आम चुनावों में स्पष्ट रूप से दिखाई दिया, जब कांग्रेस सरकार पराजित हुई और जनता पार्टी की सरकार सत्ता में आई।

संपूर्ण क्रांति की अवधारणा

जयप्रकाश नारायण ने अपने जीवन के उत्तरार्ध में देश की संपूर्ण व्यवस्था को बदलने के लिए 'संपूर्ण क्रांति' का आह्वान किया। उन्होंने इस क्रांति का नेतृत्व करने की जिम्मेदारी मुख्यतः युवाओं, जाग्रत शिक्षित वर्ग और बौद्धिक समुदाय को सौंपी। इस आंदोलन में रचनात्मक कार्यक्रमों तथा विघटनात्मक उपायों का अद्वितीय समन्वय दिखाई देता है। उस समय देश की शासन व्यवस्था में व्याप्त भ्रष्टाचार, बढ़ती महंगाई, बेरोजगारी, प्रशासनिक अधिनायकवाद, सामाजिक असमानता और अन्याय जैसी समस्याओं को समाप्त कर एक न्यायपूर्ण, संतुलित, समतामूलक और जागरूक समाज का निर्माण उनका प्रमुख उद्देश्य था। यदि पहली स्वतंत्रता की लड़ाई महात्मा गांधी ने ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध लड़ी थी, तो दूसरी स्वतंत्रता और नागरिक अधिकारों की लड़ाई जयप्रकाश नारायण ने लड़ी। गांधीजी ने भारत को विदेशी अधिनायकता से मुक्त कराया, जबकि जयप्रकाश नारायण ने देश को घरेलू निरंकुशता से आजादी दिलाने का प्रयास किया। उन्होंने अहिंसक और शांतिपूर्ण तरीकों से लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा करते हुए एक स्वतंत्र और समतामूलक समाज की स्थापना का सपना साकार करने की कोशिश की।

संपूर्ण क्रांति का विचार

1974 में जयप्रकाश नारायण ने 'संपूर्ण क्रांति' का आह्वान किया, जिसका उद्देश्य भारतीय समाज, राजनीति और अर्थव्यवस्था में व्यापक परिवर्तन लाना था। यह आंदोलन भ्रष्टाचार, राजनीतिक दमन और सामाजिक असमानता के विरुद्ध एक सशक्त जनजागरण के रूप में उभरा। 1970 के दशक में देश राजनीतिक अस्थिरता, आर्थिक संकट और प्रशासनिक भ्रष्टाचार से जूझ रहा था। शैक्षणिक संस्थानों में बढ़ते असंतोष और सरकारी तंत्र में व्याप्त अनियमितताओं ने जनता में आक्रोश को जन्म दिया। इसी माहौल में 1974 में बिहार के छात्रों ने विरोध की शुरुआत की, जिसे आगे चलकर जयप्रकाश नारायण

ने एक व्यापक राष्ट्रीय आंदोलन का रूप दिया।

आंदोलन के प्रमुख चरण

1. प्रारंभिक चरण (1974) : बिहार में छात्रों के नेतृत्व में शुरू हुए विरोध प्रदर्शनों ने सरकार की दमनकारी नीतियों के विरुद्ध जनसमर्थन जुटाया और आंदोलन को मजबूत आधार प्रदान किया।

2. राष्ट्रीय विस्तार (1974-75) : जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में आंदोलन ने भ्रष्टाचार, बेरोजगारी और प्रशासनिक असमानता के खिलाफ देशव्यापी स्वरूप ग्रहण किया। यह दौर सरकार के लिए गंभीर चुनौती बन गया।

3. आपातकाल और दमन (1975-77) : 25 जून 1975 को प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने देश में आपातकाल लागू कर दिया। इस दौरान जयप्रकाश नारायण सहित कई नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया और नागरिकों के मौलिक अधिकारों को सीमित कर दिया गया।

4. लोकतंत्र की पुनर्स्थापना (1977) : आंदोलन के दबाव और जनता की जागरूकता के परिणामस्वरूप 1977 में आम चुनाव हुए, जिसमें कांग्रेस को पराजय मिली और जनता पार्टी सत्ता में आई। यह भारतीय लोकतंत्र के इतिहास में एक निर्णायक मोड़ था।

संपूर्ण क्रांति की रूपरेखा

जयप्रकाश नारायण ने अपनी सम्पूर्ण क्रांति की अवधारणा में सात (7) प्रमुख आयामों को समाहित किया - नैतिक एवं आध्यात्मिक क्रांति, बौद्धिक क्रांति, सामाजिक क्रांति, आर्थिक क्रांति, राजनीतिक क्रांति, सांस्कृतिक क्रांति तथा वैचारिक एवं शैक्षणिक क्रांति। इन सभी आयामों का उद्देश्य समाज और मानव जीवन के हर महत्वपूर्ण पहलू को प्रभावित कर एक समग्र परिवर्तन लाना था।

1. नैतिक और आध्यात्मिक क्रांति : जयप्रकाश नारायण का मानना था कि सम्पूर्ण क्रांति के सफल कार्यान्वयन के लिए लोगों की मानसिक संरचना और जीवन-दृष्टि में मौलिक परिवर्तन अत्यंत आवश्यक है। उनके अनुसार यह क्रांति जीवन के उद्देश्य को ऐसे दृष्टिकोण से देखती है जिसमें भौतिक और आध्यात्मिक दोनों आवश्यकताओं की संतुलित पूर्ति सुनिश्चित हो। उन्होंने स्पष्ट किया कि केवल भौतिक आवश्यकताओं को ही सर्वोपरि मानना उचित नहीं है; बल्कि इन्हें आध्यात्मिक लक्ष्यों द्वारा मर्यादित किया जाना चाहिए। वे ऐसे जीवन की कल्पना करते हैं जिसमें न तो अभाव का स्थान हो और न ही विलासिता का। मनुष्य के भौतिक विकास पर नैतिकता और आध्यात्मिकता का विवेकपूर्ण नियंत्रण होना चाहिए।

सामाजिक जीवन में व्यापक परिवर्तन के लिए उन्होंने मनुष्य की दृष्टि में पारस्परिकता तथा मानव मात्र की अविच्छिन्न संबद्धता की आध्यात्मिक आस्था को अनिवार्य माना। यद्यपि उन्होंने लौकिक समस्याओं के समाधान हेतु प्रायः आध्यात्मिक तर्कों का सहारा नहीं लिया, फिर भी दूसरों के दुःख से व्यथित होने, पीड़ितों की सेवा के लिए कष्ट सहने और त्याग की प्रवृत्ति को उन्होंने सच्ची आध्यात्मिकता और धर्म माना। जयप्रकाश के अनुसार, अपने सुख-दुःख को दूसरों के साथ बाँटना तथा समाज में करुणा और सहानुभूति को सर्वोच्च मानवीय मूल्य के रूप में स्थापित करना ही वास्तविक आध्यात्मिक साधना है। वे आध्यात्मिकता और मानवीय मूल्यों को समानार्थी मानते थे। महात्मा गांधी की भांति उनका विश्वास था कि जब तक मनुष्य के अंतःकरण में क्रांति नहीं होती, तब तक समाज में क्रांतिकारी परिवर्तन संभव नहीं है। लोभ, मोह और स्वार्थ की जड़ों को उखाड़ने से ही वास्तविक क्रांति का मार्ग प्रशस्त हो सकता है।

2. बौद्धिक क्रांति : जयप्रकाश नारायण द्वारा प्रतिपादित संपूर्ण क्रांति का बौद्धिक आयाम समाज की विचारधारा, सोच और ज्ञान की दिशा को परिवर्तित करने का प्रयास है। उनका मानना था कि केवल राजनीतिक या आर्थिक परिवर्तन पर्याप्त नहीं हैं, जब तक कि समाज की बौद्धिक चेतना में व्यापक जागृति न आए। बौद्धिक क्रांति का अर्थ है कि लोग अंधविश्वास, रूढ़िवादिता, संकीर्णता और जड़ता से मुक्त होकर तार्किक, विवेकपूर्ण तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाएं। इसके

अंतर्गत शिक्षा को मात्र डिग्री प्राप्त करने का साधन न मानकर उसे मूल्यपरक और रचनात्मक बनाने पर बल दिया गया। जयप्रकाश नारायण का विश्वास था कि एक ऐसी शिक्षा प्रणाली विकसित होनी चाहिए जो व्यक्तियों में नैतिकता, सामाजिक जिम्मेदारी और लोकतांत्रिक मूल्यों का विकास करे। बौद्धिक क्रांति का उद्देश्य केवल ज्ञानार्जन तक सीमित नहीं है, बल्कि समाज के हर वर्ग में जागरूकता पैदा करना है ताकि वे अन्याय, भ्रष्टाचार और शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठा सकें। यह आयाम सत्य और विवेक पर आधारित सोच को बढ़ावा देता है, जिससे समस्याओं का समाधान भावनाओं या कट्टरता के बजाय यथार्थपरक दृष्टिकोण से किया जा सके। संवाद, बहस और रचनात्मक विचार-विमर्श को समाज में सम्मानित स्थान दिलाना भी इसी का हिस्सा है। इस प्रकार बौद्धिक आयाम संपूर्ण क्रांति की आत्मा है, क्योंकि विचारों में बदलाव आए बिना किसी भी प्रकार का स्थायी सामाजिक, राजनीतिक या आर्थिक परिवर्तन संभव नहीं है।

3. सामाजिक क्रांति : जयप्रकाश नारायण ने सम्पूर्ण क्रांति के माध्यम से ऐसे समाज की परिकल्पना की, जहाँ न्याय, समानता और मानवीय मूल्यों का वास हो। उनका मानना था कि सामाजिक क्रांति तभी संभव है जब छुआछूत जैसी अमानवीय प्रथाओं का अंत किया जाए, कुप्रथाओं व बुरे रिवाजों को त्यागा जाए तथा जातिवाद को पूर्ण रूप से नकार दिया जाए। उनकी दृष्टि में सामाजिक क्रांति का उद्देश्य केवल समाज के विभिन्न वर्गों के बीच समानता स्थापित करना ही नहीं था, बल्कि स्त्रियों और पुरुषों के बीच बराबरी सुनिश्चित करना भी था। उन्होंने बल दिया कि यह परिवर्तन केवल व्यापक मुद्दों तक सीमित न रहकर पारिवारिक जीवन के छोटे-छोटे पहलुओं तक पहुँचना चाहिए। उनका मानना था कि यदि युवा पीढ़ी दहेज प्रथा, विवाह में आत्मनिर्णय के अधिकार, और ऐश्वर्य प्रदर्शन जैसी समस्याओं की अनदेखी करती रही, तो वास्तविक सामाजिक परिवर्तन की कल्पना असंभव होगी। जयप्रकाश ने कहा कि सम्पूर्ण क्रांति के अंतर्गत उन सभी कुरीतियों और बुरे संस्कारों के विरुद्ध संघर्ष आवश्यक है, जिन्होंने विवाह जैसे पवित्र संस्कार को व्यापार में बदल दिया है। उन्होंने युवाओं से आह्वान किया कि वे इन प्रवृत्तियों का विरोध करें, और यदि आवश्यक हो, तो प्रहलाद की भाँति अपने माता-पिता के विरुद्ध भी सत्याग्रह के लिए तैयार रहें।

4. आर्थिक क्रांति : लोकनायक जयप्रकाश नारायण के अनुसार आर्थिक विकास का उद्देश्य केवल उत्पादन बढ़ाना नहीं, बल्कि मनुष्य के सुख, स्वास्थ्य और गरिमा को सुनिश्चित करना है। उनका मानना था कि आर्थिक व्यवस्था की सफलता तभी मानी जाएगी जब प्रत्येक वयस्क को रोजगार और प्रत्येक नागरिक को न्यूनतम जीवन स्तर की गारंटी मिले। वे बड़े उद्योगों, लघु उद्योगों और कुटीर उद्योगों के संतुलित विकास के पक्षधर थे। बड़े उद्योगों को केवल रक्षात्मक आवश्यकताओं और आधारभूत संरचना तक सीमित रखने की बात उन्होंने कही, जबकि लघु एवं मध्यम उद्योगों तथा ग्रामोद्योग को विकास की मुख्य धारा में लाने पर बल दिया। तकनीकी प्रगति और वैज्ञानिक खोजों का उपयोग ऐसे ढंग से होना चाहिए कि साधनों का केंद्रीकरण न होकर जनकल्याण अधिकतम हो। जयप्रकाश नारायण ने आर्थिक क्षेत्र में आत्मानुशासन को आवश्यक माना। उनके अनुसार, उद्योगों के स्वामी, श्रमिक और उपभोक्ता समाज व राष्ट्र के हितों को ध्यान में रखते हुए 'ट्रस्टी' की भूमिका निभाएं। यदि निजी उद्योग अपने सामाजिक दायित्व समझकर आचरण करें, तो उन पर से अनावश्यक नियंत्रण और लाइसेंस व्यवस्था हटाई जा सकती है। उन्होंने श्रमिकों की भागीदारी को उद्योगों के प्रबंधन का आवश्यक हिस्सा माना। साथ ही, औद्योगिक विकास के दौरान पर्यावरण संरक्षण और प्रदूषण नियंत्रण पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता भी बताई।

ग्राम जीवन के पुनर्गठन पर भी उन्होंने बल दिया। उनका विचार था कि गांवों को स्वायत्त और आत्मनिर्भर इकाइयों में परिवर्तित किया जाए। इसके लिए भूमि सुधार अनिवार्य है ताकि भूमि पर वास्तविक किसान का स्वामित्व स्थापित हो सके। उन्होंने सहकारी खेती का समर्थन किया और कहा कि किसानों का शोषण समाप्त कर, उनके ऋण माफ कर तथा जोतों को मिलाकर सहकारी व सामूहिक फार्म विकसित किए जाएं। इसके साथ ही सहकारी ऋण, हाट व्यवस्था और सहायक उद्योगों की स्थापना भी की जानी चाहिए। उनका मानना था कि एशिया की मुख्य आर्थिक समस्या किसानों का पुनर्निर्माण है। कृषि को उसकी वर्तमान व्यक्तिवादी व्यवस्था में छोड़ना अपव्ययपूर्ण है; उत्पादन बढ़ाने के लिए सहकारी व सामूहिक खेती ही समाधान है।

जयप्रकाश नारायण समाजवादी दृष्टिकोण रखते थे, इसलिए वे आर्थिक समस्याओं के त्वरित समाधान के पक्षधर थे। उनके अनुसार आर्थिक क्रांति का मूल उद्देश्य ऐसी व्यवस्था का निर्माण करना है, जिसमें सभी को प्रगति के समान अवसर मिलें, किसी की प्रतिभा साधनों की कमी के कारण दमित न हो और आर्थिक असमानताओं को मिटाकर वर्गहीन समाज की स्थापना हो सके।

5. राजनीतिक क्रांति : संपूर्ण क्रांति के राजनीतिक संदर्भ में जयप्रकाश नारायण ने स्पष्ट किया कि राजनीतिक व्यवस्था में राजभक्ति की बजाय लोकशक्ति की निर्णायक भूमिका स्थापित होनी चाहिए। उनके अनुसार राजनीति का उद्देश्य सत्ता प्राप्ति या व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा की पूर्ति न होकर जनकल्याण होना चाहिए। उन्होंने मौजूदा राजनीतिक व्यवस्था में दलगत संकीर्णता, स्वार्थपरता और सत्ता केंद्रीकरण जैसी प्रवृत्तियों की कड़ी आलोचना की। जयप्रकाश का मानना था कि संपूर्ण क्रांति के माध्यम से ऐसी नई राजनीतिक संरचना विकसित होगी, जो नींव से निर्मित होगी अर्थात् सत्ता का आधार गांव-गांव और मोहल्लों से शुरू होकर ऊपर की ओर जाएगा, न कि केवल केंद्र से नियंत्रित रहेगा। उन्होंने यह भी कहा कि केवल नए दल की स्थापना या नए नेता के आगमन से यह परिवर्तन संभव नहीं होगा; बल्कि यह लोकनीति जनता की शक्ति और सहभागिता से ही जन्म लेगी।

6. सांस्कृतिक क्रांति : जयप्रकाश नारायण का विश्वास था कि सम्पूर्ण क्रांति ऐसा वातावरण निर्मित करेगी जिसमें भारत की प्राचीन मानवीय एवं आध्यात्मिक परंपराएं पुनः स्थापित होंगी। उनका मत था कि इन मूल्यों के बिना 'भारत' और 'भारतीयता' की रक्षा कठिन हो जाएगी। उन्होंने अपेक्षा की कि इस क्रांति की प्रक्रिया में उदारता, सहयोग और सबके हित में अपने हित को देखने की समृद्ध भारतीय सांस्कृतिक परंपरा को पुनः प्रतिष्ठा मिलेगी। उनका मानना था कि जब प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में भारतीय आध्यात्म का प्रभाव गहरा होगा, तब व्यक्ति समाज के हित के लिए और समाज व्यक्ति के हित के लिए कार्य करेगा। यही अभिनव सांस्कृतिक क्रांति होगी, जो उन्नयन की ओर अग्रसर करेगी। यद्यपि आर्थिक व्यवस्था और सांस्कृतिक जीवन के बीच सीधा और अनिवार्य संबंध नहीं होता, फिर भी यह सत्य है कि बुनियादी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के बिना सांस्कृतिक सृजनशीलता संभव नहीं। इसी कारण जयप्रकाश नारायण ऐसे सामाजिक-आर्थिक ढांचे के पक्षधर थे, जिसमें समान अवसर के आदर्श को व्यवहार में उतारा जा सके। उनके अनुसार, संस्कृति के विकास के लिए न्यूनतम आर्थिक स्तर का होना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त, उन्होंने विश्व समाज की परिकल्पना को भी महत्वपूर्ण माना। उनका मानना था कि संगठित सैनिकवाद और समग्रवादी व्यवस्थाओं द्वारा फैलाए गए विनाश के मुकाबले, केवल विश्व समाज ही एशिया और अफ्रीका की पीड़ित मानवता को न्याय दिला सकता है।

7. वैचारिक एवं शैक्षणिक क्रांति : वैचारिक और शैक्षणिक क्रांति समाज में बौद्धिक जागरण और शिक्षा की पुनर्परिभाषा पर आधारित हैं। वैचारिक दृष्टि से यह क्रांति समाज में नई चेतना और मूल्य प्रणाली का निर्माण करना चाहती है, जिसमें समानता, न्याय, स्वतंत्रता और बंधुत्व जैसे आदर्शों को जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उतारा जा सके। जयप्रकाश नारायण का मानना था कि विचारों में परिवर्तन के बिना समाज का वास्तविक रूपांतरण संभव नहीं है। इसलिए उन्होंने व्यक्तिवाद और स्वार्थ की प्रवृत्ति को त्यागने तथा सामूहिकता, सेवा-भाव और सामाजिक उत्तरदायित्व को बढ़ावा देने पर जोर दिया। राजनीतिक व्यवस्था में नैतिकता, पारदर्शिता और ईमानदारी का समावेश भी इस वैचारिक क्रांति का आवश्यक अंग माना गया, जिससे भ्रष्टाचार-मुक्त और जनोन्मुखी शासन प्रणाली स्थापित हो सके।

शैक्षणिक क्रांति शिक्षा को केवल रोजगार का साधन न मानकर उसे व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास का माध्यम मानती है। इस दृष्टि से शिक्षा का उद्देश्य ऐसे नागरिक तैयार करना होना चाहिए, जो न केवल तकनीकी और व्यावसायिक रूप से दक्ष हों, बल्कि नैतिक मूल्यों, नागरिक कर्तव्यों और मानवीय संवेदनाओं से भी परिपूर्ण हों। जयप्रकाश नारायण ने ग्रामोन्मुखी शिक्षा पर विशेष बल दिया, जिससे शिक्षा का संबंध समाज और उसकी वास्तविक आवश्यकताओं से जुड़ सके। साथ ही उन्होंने शिक्षा प्रणाली में लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक न्याय और आत्मनिर्भरता के तत्वों को शामिल करने का सुझाव दिया, ताकि यह केवल ज्ञान का संचरण न होकर विचार क्रांति और सामाजिक परिवर्तन का साधन बने। इस प्रकार, संपूर्ण क्रांति के वैचारिक

और शैक्षणिक आयाम एक ऐसे समाज के निर्माण का मार्ग प्रशस्त करते हैं जो बौद्धिक रूप से जागृत, नैतिक मूल्यों से प्रेरित और विकास की सच्ची भावना से ओत-प्रोत हो।

जयप्रकाश नारायण के विचारों का मूल्यांकन

भारतीय राजनीतिक चिंतन के इतिहास में जयप्रकाश नारायण एक ऐसे व्यक्तित्व हैं, जिन्होंने राजनीति को सत्ता की प्राप्ति तक सीमित न मानकर सामाजिक परिवर्तन का सशक्त उपकरण बनाया। वे उन विरले नेताओं में थे जिन्होंने जीवनभर आदर्श और आचरण की एकरूपता को बनाए रखा। उनके चिंतन का मूल लक्ष्य समाज का संतुलित एवं समन्वित विकास था, जिसमें वर्ग, जाति तथा दलगत संकीर्णताओं के लिए कोई स्थान न हो।

जयप्रकाश नारायण का सबसे उल्लेखनीय योगदान उनकी "संपूर्ण क्रांति" की अवधारणा है, जिसे उन्होंने 1974 के आंदोलन के दौरान प्रस्तुत किया। यह क्रांति केवल राजनीतिक सत्ता परिवर्तन तक सीमित न होकर समाज के सात क्षेत्रों—राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक, नैतिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक को समाहित करती थी। उनका मानना था कि यदि लोकतंत्र को सशक्त और प्रभावी बनाना है, तो इन सभी क्षेत्रों में आमूलचूल परिवर्तन अनिवार्य है। इस प्रकार, उनका चिंतन व्यापक, बहुआयामी और दीर्घकालिक दृष्टिकोण से परिपूर्ण था।

लोकतांत्रिक व्यवस्था के संदर्भ में जयप्रकाश नारायण का "सहभागी लोकतंत्र'' का सिद्धांत विशेष महत्व रखता है। वे मानते थे कि लोकतंत्र का अर्थ केवल चुनावों तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि जनता को शासन की प्रक्रिया में प्रत्यक्ष भागीदारी करनी चाहिए। प्रशासनिक कार्यवाहियों पर निगरानी रखना जनता का अधिकार ही नहीं, अपितु उसका कर्तव्य भी है। इस प्रकार की सोच भारतीय लोकतंत्र को मात्र औपचारिक संरचना से आगे ले जाकर उसे जनोन्मुख और उत्तरदायी बनाने का प्रयास करती है।

हालाँकि, उनके विचारों की कुछ आलोचनाएँ भी की गईं। विशेष रूप से राजनीतिक दलों के प्रति उनका अविश्वास व्यवहारिक दृष्टि से विवादास्पद माना गया। लोकतांत्रिक व्यवस्था में दलविहीन राजनीति की कल्पना कठिन है, क्योंकि राजनीतिक दल लोकतंत्र में नीतियों, विचारधाराओं और जनता के बीच सेतु का कार्य करते हैं। उनका मानना था कि राजनीतिक दल संपूर्ण राजनीतिक व्यवस्था को भ्रष्ट और दुर्बल बना देते हैं। इसके विपरीत, वे सहभागी लोकतंत्र में विश्वास रखते थे, जिसकी नींव जनता की आत्मनिर्भरता और स्वशासन की क्षमता पर आधारित है। उनके अनुसार, प्रशासन की गतिविधियों पर निगरानी रखना जनता का केवल अधिकार ही नहीं, बल्कि एक महत्वपूर्ण कर्तव्य भी है। इस लोकतांत्रिक व्यवस्था में जनप्रतिनिधि स्वयं को जनता का स्वामी नहीं, बल्कि जनता का सच्चा सेवक मानेंगे।

समाजवाद के संदर्भ में भी जयप्रकाश नारायण के विचार आज भी महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक हैं। जयप्रकाश नारायण भारतीय राजनीति के उन विचारकों और नेताओं में से एक थे, जिन्होंने समाजवाद को केवल आर्थिक व्यवस्था तक सीमित न मानकर उसे जीवन और समाज के हर क्षेत्र में परिवर्तन का साधन माना। उनके लिए समाजवाद का अर्थ था ऐसा समाज जहाँ शोषण, अन्याय और असमानता का स्थान न हो और प्रत्येक व्यक्ति को समान अवसर मिले। प्रारंभिक दौर में वे मार्क्सवाद से प्रभावित रहे, लेकिन बाद में उन्होंने वर्ग-संघर्ष और तानाशाही की प्रवृत्तियों को अस्वीकार कर दिया। उनका मानना था कि भारत जैसे विविधताओं से भरे समाज में हिंसात्मक वर्ग संघर्ष से नहीं, बल्कि लोकतांत्रिक और शांतिपूर्ण साधनों से समाजवाद की स्थापना संभव है। जयप्रकाश नारायण ने गाँधीजी के विचारों को समाजवादी सोच के साथ जोड़ा। वे मानते थे कि ग्राम स्वराज, नैतिकता और आत्मनिर्भरता समाजवाद की वास्तविक नींव होनी चाहिए। उनके अनुसार समाजवाद तभी सार्थक होगा जब वह केवल औद्योगिक ढांचे पर आधारित न होकर ग्राम आधारित और विकेन्द्रित होगा। उन्होंने उत्पादन के साधनों पर समाज का नियंत्रण, श्रमिकों की भागीदारी और न्यूनतम जीवन स्तर की गारंटी पर बल दिया।

उनका समाजवाद राजनीति से भी जुड़ा हुआ था। वे लोकतंत्र और समाजवाद को एक-दूसरे का पूरक मानते थे और इसीलिए उन्होंने लोकतांत्रिक पद्धति से समाजवाद की स्थापना की वकालत की। 1974 के छात्र आंदोलन और उसके बाद

सम्पूर्ण क्रांति के आह्वान में भी उनका समाजवाद साफ झलकता है। सम्पूर्ण क्रांति के अंतर्गत उन्होंने न केवल आर्थिक और राजनीतिक बदलाव की बात की, बल्कि सामाजिक, नैतिक और शैक्षणिक क्षेत्रों में भी क्रांति लाने का आह्वान किया। उनके विचार में समाजवाद तभी टिकाऊ और सार्थक होगा जब वह नैतिक मूल्यों, आत्मानुशासन और जनसहभागिता पर आधारित होगा। इस प्रकार जयप्रकाश नारायण का समाजवाद न तो केवल मार्क्सवादी ढांचे में बंधा हुआ था और न ही केवल सैद्धांतिक आदर्शवाद तक सीमित था, बल्कि वह भारतीय परिस्थितियों में विकसित एक मानवीय, लोकतांत्रिक और गाँधीवादी समाजवाद था।

निष्कर्ष

जयप्रकाश नारायण भारतीय राजनीति के उन युगपुरुषों में से थे जिन्होंने सत्ता की राजनीति से ऊपर उठकर जनसेवा, नैतिकता और लोकशक्ति पर आधारित लोकतंत्र की स्थापना का स्वप्न देखा। उनकी "संपूर्ण क्रांति" केवल एक राजनीतिक आंदोलन नहीं थी, बल्कि यह जीवन के सभी क्षेत्रों—नैतिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक और राजनीतिक में परिवर्तन का समग्र दर्शन था। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि लोकतंत्र की सफलता केवल चुनावो से नहीं, बल्कि जनता की निरंतर भागीदारी, जवाबदेही और नैतिक चेतना से सुनिश्चित होती है। जयप्रकाश नारायण का मानना था कि जब तक व्यक्ति स्वयं में नैतिक सुधार नहीं लाएगा, तब तक समाज में वास्तविक परिवर्तन संभव नहीं है। उन्होंने सत्ता के केंद्रीकरण का विरोध करते हुए विकेन्द्रीकृत लोकतंत्र की वकालत की, जहाँ ग्राम स्तर पर जनता शासन की प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभाए। उनकी संपूर्ण क्रांति का लक्ष्य एक ऐसे समाज की स्थापना था जिसमें समानता, न्याय, स्वराज और नैतिकता के आदर्शों का समावेश हो। आज के राजनीतिक परिदृश्य में, जहाँ नैतिक मूल्यों का ह्रास और स्वार्थप्रधान राजनीति का बोलबाला दिखाई देता है, जयप्रकाश नारायण के विचार और अधिक प्रासंगिक हो जाते हैं। उनकी सोच हमें यह सिखाती है कि सच्चा लोकतंत्र वही है जिसमें सत्ता जनता की सेवा के लिए हो, न कि उसके ऊपर शासन करने के लिए। इसलिए, जयप्रकाश नारायण का चिंतन भारतीय लोकतंत्र के लिए आज भी प्रेरणास्रोत और मार्गदर्शक बना हुआ है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. जयप्रकाश नारायण सम्पूर्ण क्रांति, सर्व प्रकाशन, राजघाट वाराणसी पृष्ठ 59-60
2. जयप्रकाश संपादित नारायण देसाई, पृष्ठ 586
3. उपर्युक्त, पृष्ठ 591
4. उपर्युक्त, पृष्ठ 588, 89
5. जयप्रकाश नारायण फॉर्म सोशयलिज्म टू सर्वोदय, सर्व सेवा प्रकाशन वाराणसी 1957. पृष्ठ. 111
6. जयप्रकाश संपादित नारायण देसाई, पृष्ठ 586
7. उपर्युक्त, पृष्ठ 593
8. जयप्रकाश नारायण का सभापति के रूप में दिया गया भाषण (28 मार्च 1951) Congress for cultural freedom, पृष्ठ 39 (मुंबई द रानाडे प्रेस1951)
9. जयप्रकाश नारायण संपूर्ण क्रांति, सर्व प्रकाशन, राजघाट वाराणसी, पृष्ठ 59-60
10. जयप्रकाश नारायण टुवार्ड टोटल रेगयुलेशन वाल्यूम-2 पॉपलर प्रकाशन बॉम्बे 1978 पृष्ठ 102

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

भाषा और समाज (वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भाषाओं का योगदान)

डॉ. सुनीता सिंह मरकाम
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी
शास. इन्दिरा गांधी गृहविज्ञान कन्या महाविद्यालय शहडोल, मध्य प्रदेश
Email : sunitasingh2779@gmail.com
Mob-9575155610

सारांश

पढ़ना है, पढ़ाना है, सबको सीखना है
हिन्दी भाषा को आगे बढ़ाना है।

मानव अपने भाव को व्यक्त करने के लिए जिस सार्थक मौखिक साधन को अपनाते है वह भाषा है। मानव के विचार ही उसका समाज से संपर्क स्थापित करते हैं।विश्व के प्रत्येक देश में कोई ना कोई भाषा बोली जाती है और वही उनके विचार-विनिमय का माध्यम है। डॉ. मंगल देव शास्त्री के अनुसार -"भाषा विज्ञान उस विज्ञान को कहते हैं, जिसमें सामान्य रूप से मानवी भाषा का, किसी विशेष भाषा की रचना और इतिहास का, और अंततः भाषाओं ,प्रादेशिक भाषाओं या बोलियों के वर्गों की पारस्परिक समानताओं और विशेषताओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है।"[1] भाषा मनुष्य के सामाजिक जीवन का आधार है। इसी के कारण मनुष्य एक सामाजिक प्राणी के रूप में जाना जाता है भाषा अपने आप को पहचानने का एक साधन है।भाषा के बिना अस्मिता की पहचान नहीं होती। डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार- "भाषा परंपरा से चली आ रही है। व्यक्ति उसका अर्जन परंपरा और समाज से करता है एक व्यक्ति उसमें परिवर्तन आदि तो कर सकता है किंतु उसे उत्पन्न नहीं कर सकता है, किंतु उसे उत्पन्न नही कर सकता (सांकेतिक या गुप्त आदि भाषाओं की बात यहां नहीं की जा रही है) यदि कोई उसका जनक और जननी है तो समाज और परंपरा यथार्थतः भाषा केवल मौखिक भाषा को कहना चाहिए। उसका लिखित रूप उसी मौखिक पर आधारित है और उसी से पीछे-पीछे चलता है।"[2]

प्रस्तावना - भाषा एक अर्जित संपत्ति है और व्यक्ति अर्जन समाज से ही करता है भाषा से समाज को एक व्यवस्था मिलती है। भाषा लोगों को एक दूसरे से जोड़ने का काम करता है समाज में कई जाति समूह के लोग रहते हैं उनकी अलग-अलग भाषाएं होती हैं। भाषा का मुख्य उद्देश्य ही सामाजिक व्यवहार है अकेले व्यक्ति को भाषा की कोई आवश्यकता ही नहीं होती है, जहां समाज होता है वहां भाषा होती है। भाषा समाज को और समाज भाषा को परस्पर संस्कार देते हुए आगे बढ़ते हैं मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है उसका व्यक्तित्व, उसका चिंतन और उसका व्यवहार सब कुछ समाज सापेक्ष होता है। भाषा के माध्यम से ही मनुष्य अपने समाज और संस्कृति से जुड़ता है।

मनुष्य का भावात्मक एवं बौद्धिक विकास भाषा के माध्यम से ही होता है। भाषा इस बात पर निर्भर करती है कि मनुष्य किस परिवेश में रहकर भाषा सीखना है वह जिस परिवेश में भाषा सीखता है, उसी के मनुष्य भाषा कर प्रयोग भी करता है। भाषा विहीन समाज पशु के समान ही होता है भाषा के कारण ही मनुष्य और पशुओं को अलग-अलग किया जाता है। मनुष्य

ईश्वर की सर्वश्रेष्ठ रचना है क्योंकि उसमें सोचने समझने की निर्णय लेने की क्षमता होती है। चीजों को सीखता है नित नए-नए भाषाओं को सीखता और बोलता है।

वक्ताओं की ताकत भाषा
लेखक का अभिमान है भाषा
भाषाओं के शीर्ष पर बैठी
मेरी प्यारी हिंदी भाषा।[3]

भाषा और समाज का संबंध शाश्वत है। इस शाश्वतता का स्वरूप पूर्णतः परिभाषित नहीं हो सका है। भाषा व समाज के बीच का संबंध इतना सन्निकट होता है कि व्यक्ति की भाषा उसके सामाजिक परिवेश से प्रभावित होती है। और कभी-कभी भाषा समाज की संरचना को नियंत्रित भी करती है।[4]

शब्द-कुंजी - अभिमान, बौद्धिक, वैश्विक, भूमंडलीकरण, प्रवासी, अभिव्यक्ति, यथार्थता, सन्निकट, उत्तरोत्तर, अग्रसर, वर्चस्व।

हिंदी एक विकास शील भाषा है, जिसका उत्तरोत्तर विकास हुआ है। भाषा हमारी सभ्यता और संस्कृति का अंग है हमारी पहचान, हमें हिंदी बोलने का या लिखने में बिल्कुल भी संकोच नहीं करना चाहिए। सामाजिक और राजनीतिक विकास का तो एकमात्र कारण भाषा है। भाषा को किसी भी रूप में क्यों ना देखें उसे समाज और व्यक्ति से अलग नहीं किया जा सकता और इसी कारण समाज और व्यक्ति से संबंधित जो भी उपकरण है वह भाषा को प्रभावित करते हैं दूसरी ओर यही भाषा समाज और व्यक्ति का स्वरूप स्पष्ट करने में सहायक होती है।[5]

आधुनिकता की ओर तेजी से अग्रसर होता हमारा भारतीय समाज भले ही अंग्रेजी बोलने में अपनी आन, बान, शान समझते है लेकिन वैश्विक स्तर पर हिंदी की बढ़ती ताकत का सकारात्मक पक्ष है कि आज विश्व भर में करोड़ों लोग हिंदी बोलते हैं दुनिया के सैकड़ो विश्वविद्यालय में हिंदी पढ़ाई जाती है। अमेरिका में हिंदी का दबदबा बढ़ रहा है पिछले कुछ साल से यहां अंतरराष्ट्रीय भाषा के तौर पर हिंदी विषय पढ़ने वाले स्कूलों की संख्या दस गुना बढ़ गई है अब 90 फ़ीसदी स्कूलों में हिंदी के कोर्स चल रहे हैं (मशहूर सिलिकॉन वैली के सरकारी स्कूलों में अगस्त से हिंदी वैसी भाषा को शुरू होगा)। कोलंबिया विश्वविद्यालय में के प्रो. राकेश रंजन के अनुसार अमेरिका में भारतीयों की दूसरी और तीसरी पीढ़ी में हिंदी के प्रति लगाव का एक बड़ा कारण हिंदी को भाषा के रूप में पढ़ने के बाद मिलने वाले करियर ऑप्शन है। कुछ भारतीय कंपनियां हिंदी अधिकारियों की नियुक्ति करती हैं[6], हिंदी वर्तमान समय में केवल शिक्षा एवं साहित्य की भाषा की परिधि तक सीमित नहीं रह गई है। भूमंडलीकरण अथवा वैश्वीकरण के दौर में हिंदी वैश्विक परिदृश्य के रूप में अपना महत्वपूर्ण स्थान बना रही है। वैश्विक फलक पर सबसे ज्यादा बोली जाने वाली तीसरी भाषा हिंदी है।वैश्विक स्तर पर स्थापित होने के पीछे हिंदी में रचित उत्तम साहित्य का महत्वपूर्ण योगदान है। हिंदी साहित्य को वैश्विक साहित्य की कोटि में पहुंचाने में बहुत बड़ा योगदान प्रवासी भारतीयों का भी है। प्रवासी भारतीय अपने साथ-साथ अपनी भाषा संस्कृति, आचार-विचारों को भी लेकर गए, और अपनी भाषा में ही साहित्य रचना कर इसे समृद्ध बनाया [7], जिस कारण हिंदी की लोकप्रियता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। भारतीय लेखिका गीतांजलि श्री को उन्हें हिंदी उपन्यास रेत की समाधि के अंग्रेजी अनुवाद टॉप सेंड के लिए अंतर्राष्ट्रीय बुकर पुरस्कार दिया गया है। इससे भारतीय भाषा साहित्य को फिर से सुर्खियों में ला दिया था।आज हिंदी बारह से अधिक देश में बहुसंख्यक समाज की मुख्य भाषा है। सिंगापुर, यमन, युगांडा, नेपाल, दक्षिण अफ्रीका, इंग्लैंड, जर्मनी, अमेरिका आदि देशों में हिंदी भाषी भारतीयों की संख्या दो करोड़ से अधिक है। [8], हिंदी भाषा को और अधिक बढ़ावा देने के उद्देश्य से वर्ष 2006 से 10 जनवरी को 'विश्व हिंदी दिवस' मनाया जाता है।

जापान में हिंदी की पढ़ाई हिंदुस्तानी के रूप में सन 1908 से प्रारंभ हुई, जिसे ज्यादातर व्यापार करने वाले लोग पढ़ाया करते थे आज वहां सात एफएम रेडियो स्टेशन भारतीय संगीत का प्रसारण करते हुए जापान में हिंदी की उपस्थिति को दिखाते हैं। [9], अमेरिका का भाषा नीति में दस नई विदेशी भाषाओं को जोड़ा गया है। जिनमें हिंदी शामिल है मॉरीशस में हिंदी का

वर्चस्व है तथा उनका संकल्प हिंदी को विश्व भाषा बनाने का है। सन 1996 में वहां हिंदी साहित्य अकादमी की स्थापना हुई और उसकी दो पत्रिकाएं बसंत और रिमझिम प्रकाशित हो रही है। अब तक हुए 11 विश्व हिंदी सम्मेलन में तीन मॉरीशस में आयोजित हुए हैं इसे हिंदी का 'छोटा भारत' भी कहा जाता है [10],

सरल है, सुबोध है, सुंदर अभिव्यक्ति है
हिन्दी ही सभ्यता, हिन्दी ही संस्कृति है
हिंदी भाषा में ज्ञान है, प्रेम है, करुणा है, मित्रता है भाव विवेक के चरम सीमा है।

भारतीय भाषाओं में वैश्विक पदचाप और प्राचीन संस्कृत विश्व की सबसे प्राचीन और सभी भाषाओं के जननी मानी जाती है। इस तरह से देखा जाए तो विश्व की अधिकांश भाषाओं के शब्दों की उत्पत्ति भारतीय शब्द परंपरा से ही जुड़ी हुई है। विश्व के सभी भाषाओं का निर्माण संस्कृत में होने के कारण उन सभी भारतीय भाषाओं में समानता की प्रवृत्ति होना अनिवार्य एवं लाजमी है।[11], मनुष्य अपने मूल से उखड़ कर जहां-जहां जाकर बसता रहा वहां-वहां उसकी भाषा संस्कार और रीति रिवाज भी जीवित होते चले गएहिन्दी भाषा में रोजगार के अवसर है आज का युवा वर्ग विभिन्न तकनीकी के माध्यम से हिंदी में रोजगार स्थापित कर रहें है। हिन्दी भाषा के ज्ञान का उपयोग करके सरकारी और निजी दोनों क्षेत्रों में रोजगार के कई अवसर उपलब्ध हैं।जैसे -लेखन साहित्य - उपन्यास, कहानी, निबंध, आलोचना, आत्मकथा आदि। सिनेमा- पटकथा लेखक, गीतकार, संवाद, पत्रकारिता, तकनीकी क्षेत्र, आदि आज वैश्विक परिप्रेक्ष्य में हिंदी भाषा ने अपना स्थान प्राप्त कर लिया है और निरंतर विकास कर रही है। वैश्विक स्तर पर हिंदी की स्थिति बहुत मजबूत है यह विश्व की तीसरे नंबर की सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा है। हिंदी को संयुक्त राष्ट्र की गैर अधिकारिक भाषाओं की सूची में शामिल किया गया है। जिससे इसका अंतरराष्ट्रीय स्तर बढ़ा है भारत के फिल्म और टीवी उद्योग के माध्यम से भी हिंदी का वैश्विक स्तर पर वैश्विक बाजार में इसकी पकड़ मजबूत हुई है।और यह एक बड़े बाजार का रूप ले सकी है।विश्व पटेल पर हिंदी की महत्व बढ़ाने में कुशाग्र भारतीयों का महत्वपूर्ण भूमिका है। विश्व के तमाम देशों की उन्नति में भारतीयों ने जो सहायता की है। उससे प्रभावित विदेशियों को समझ आ गया कि भारतीयों से अच्छे संबंध बनाने के लिए हिंदी भाषा सीखना बहुत जरूरी है।[12]

निष्कर्ष

आज हिंदी भाषा में वैश्विक स्तर पर अपनी पकड़ बना ली है भाषा के साथ-साथ विश्व के कई ऐसे देश हैं जहां पर बहुत आयात में हिंदी बोली और पड़ी पढ़ाई जाती है। भाषा और समाज का संबंध बहुत ही गहरा है भाषा एक अर्जित संपत्ति है समाज से ही अर्जन किया जाता है हिंदी एक विकासशील भाषा है। जिसका उत्तरोत्तर विकास हुआ है।भाषा संचार की एक संरक्षित प्रणाली है। जिसमें व्याकरण और शब्दावली शामिल होती है। भाषा व साधन है जिससे किसी समाज के लोग अपने भीतर के भाव और सोच को एक दूसरे के सामने व्यक्त करते हैं। मनुष्य अपने मूल से उखाड़ कर जहां-जहां जाकर बसता गया वहां- वहां उसकी भाषा संस्कार और संस्कृति भी जीवित होते चले गए,निश्चित ही आज वैश्विक स्तर पर हिंदी भाषा ने अपना एक मुकाम हासिल किया है। जो हमारे लिए बहुत बड़ी उपलब्धि है,हिंदी हमारी राजभाषा तो है ही लेकिन अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी अपना महत्वपूर्ण स्थान बना चुकी है।और वह दिन दूर नहीं जब राष्ट्रभाषा भी बन जाएगी।

हम सब हिन्दी को अपनाएं
देश -विदेश में मान बढ़ाएं
वैज्ञानिक भाषा है हिन्दी
यह बात सबको समझाएं।

संदर्भ ग्रन्थ

1 भाषा विज्ञान और भाषा शास्त्र, डॉ कपिल द्विवेदी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
2 भाषा शास्त्र की रूपरेखा -डॉ उदयनारायण तिवारी
3. https://www-
4. भाषा विज्ञान के सिद्धांत और हिन्दी भाषा, डॉ द्वारिका प्रसाद सक्सेना, डॉ उदय प्रताप सिंह,
5. आधुनिक भाषा विज्ञान (चिंतन की कतिपय दिशाएं)- डॉ. मोतीलाल गुप्त
6. दैनिक भास्कर, जबलपुर, शनिवार 2 मार्च 2024
7. https://www.drishias.com
8. https://www.drishias
9. https://www.jansatta.com
10. https://www.jansatta.com
11. https://www.garbhanal.com
12. https://oldror.Ibp.world.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

प्रेमचंद का साहित्य : समाज का दर्पण

नेहा जैन अज़ीज़
सहायक अध्यापक, कवयित्री

"कैसे कह दूँ मात्र साहित्यकार तुम्हें,
कण कण मे बसते हो।
समझना हो जब धरा चिर कालीन,
"प्रेमचंद" नाम भारत का दृश्य दिखाता है।
टिकिट भले ही हो नाम तुम्हारे,
बात इससे भी कहीं अधिक है कि
हर क़लम तुम्हें ही लिखती है।
बनारस के लमही गॉव मे जन्मे तुम,
पर हिंदुस्तान का पर्याय बने।"
हर कथा तुम्हारी पत्थर को द्रवित करती है,
साक्षात्कार हमारा हमसे करवाती है।
शत शत नमन तुम्हें हमारा
आओ पुनः सृजन करने,
मैं आह्वान तुम्हारा करती हूँ।

कथा सम्राट मुंशी प्रेमचंद एक ऐसे साहित्यकार थे, जिन्होंने अपनी कहानियों मे भारतीय समाज को शब्दों द्वारा चित्रित किया या यूँ कहें कि उन्होंने अपने समय के समाज की बीमारियों को पकड़कर उन्हें सबके सामने लाकर खड़ा कर दिया जो गहराई तक अपनी अपनी जड़े फैलायी थी लेकिन अगर देखा जाए तो आज भी ये बुराइयाँ वर्तमान समाज मे भी व्याप्त है।

उनकी कहानियाँ उनके पात्र आज भी हमें हममें से ही लगते है। कितने पात्रों मे तो हम खुद को औऱ अपने आस पास के लोगों को देख सकते है ये हमारे ही आस पास की कहानियाँ है।

प्रेमचंद का मूल नाम धनपत राय था वे पहले नबाब राय के नाम से लेखन करते थे।

उनकी सारी कहानियाँ वर्तमान मे भी प्रासंगिक है।

प्रेमचंद जी की कहानी "पूस की रात" में किसान हलकू पूस की हाड़ कपानें वाली सर्दी की रात मे अपने खेतों रखवाली करता है ताकि नील गाय से फसलों को बचा सकें वह ठंड से बचने की कोशिश करता है, सारी रात करवटे बदलता है, आग जलाता है यहाँ तक कि अपने गंदे मैले बदबूदार कुत्ते को चिपकाकर सो जाता है और गमी पाकर आनंद का अनुभव करता है, विडंबना ये थी कि नीलगाय के फ़सल नष्ट करने के बाद हलकू खुश हो जाता है कि अब उसे ठंड मे खेत की रखवाली नहीं करनी पड़ेगी।

यहीं हालत आज भारतीय किसानों की है वह कर्ज मे डूबे रहते है, फ़सल भी कोई खास लाभ की होती है अंत मे वे फाँसी लगाकर अपनी जान देदेते है।

वहीं उनकी कहानी "निर्मला'' में 15 वर्षीय निर्मला नामक किशोरी की शादी एक अधेड़ आदमी तोताराम से करा दी जाती है क्योकि निर्मला की विधवा माँ दहेज देने मे असमर्थ थी, तोताराम के बच्चे निर्मला की ही उम्र के थे।

वह कम उम्र मे तोताराम के बच्चे को जन्म देती है और अंत में दयनीय हालत मे मर जाती है।

आज यहीं हालत वर्तमान मे है गरीब कन्याओ के माता पिता दहेज की मोटी रकम नही जुटा पाते है और अपनी बेटियों का विवाह बूढ़े, विधुर व्यक्तियों से कर देते है है ताकि माता पिता दहेज के दानव से मुक्ति पा सकें आज डॉक्टर, सी. ए. इंजीनियर लड़कों, सरकारी नौकरी वाले लड़कों के माता पिता अपने बेटों के मूल्य तय करके बाजार मे बैठे है, जितना ऊँचे ओहदे पर बेटा होगा उतने ही ऊँचे उसके भाव होंगे। लड़की के माता पिता से अपने बेटे की क़ीमत वसूलते है।

लड़की के मजबूर माता -पिता अपनी जमीन, सोना, चांदी बेचकर या कर्ज लेकर ब्याह की तैयारी करते है कि लड़की बड़े घर की बहू बन सकें।

"निर्मला'' का कथानक इसी पर आधारित था।

अगर हम कहानी मंत्र की ओर देखें तो तथाकथित सभ्य समाज के लोगों को देखेंगे जिनमें दया नही है जो अपने पैसे से खुद को भगवान से बड़ा समझते है और गरीब को कीड़ा मकोड़ा।

उनके हृदय मे सहानुभूति, परपीड़ा का कोई स्थान नही वे बस अपनी बड़ी बड़ी पार्टियों, समारोह मे डूबे रहते है यहीं उनकी दुनियां है जहाँ गरीब को इंसान नही समझा जाता है।

"मंत्र'' कहानी मे डॉ चड्ढा बूढ़े गरीब व्यक्ति के बेटे का ईलाज करने से मना कर देते है वह लाख मिन्नतें करता है ये बच्चा ही उसकी जिंदगी का सहारा है इसे बचा लो डॉ. साहब, पर डॉ चड्ढा साफ मना कर देते है कि वे अभी मरीज नही देखेंगे। उनकी चौखट पर ही वो लड़का दम तोड़ देता है।

कहानी यहाँ खत्म नही होती जब डॉ चड्ढा के लड़के कैलाश को साँप काट लेता है तब यहीं बूढ़ा आदमी साँप का जहर उतारने का मंत्र पढ़ता है वह डॉ साहब से बदला नही लेता कि बेटे के बदले बेटा बल्कि वह उनके बेटे की जान बचा लेता है।

आज का भौतिकवादी समाज धन कमाने मे लगा है उसे भावनाओं या नैतिकता से कोई सरोकार नहीं।

आज लोग दिखावा पसंद करते हैं।

अमीर होने का ढोंग दिखाते है भले ही उनकी आर्थिक स्थिति अच्छी क्यों न हो, वे कर्ज लेते है या गलत काम करते है ताकि पैसे कमाकर समाज मे थोथा दिखावा करके वाही वाही लूट सकें इसी का उदारहण प्रेमचंद का उपन्यास गबन है जिसका मुख्य पात्र रमानाथ अपनी पत्नी जलपा की नजरों मे अमीर बनने का ढोंग करता है जबकि वह मामूली सी तनख्वाह पर क्लर्क है

उसका पत्नी जलपा जिद करती है कि उसे चंद्रहार चाहिए और उसकी जिद को पूरा करने के लिए पति गबन कर डालता है, और फरार हो जाता है

क्या वह अपनी पत्नी को समझा नही सकता था कि हमारी आर्थिक स्थिति अभी इतनी नही है कि चंद्रहार खरीद पाये बल्कि उसने जघन्य अपराध कर डाला।

प्रेमचंद ने इस उपन्यास मे भारतीय स्त्रियों का गहनों के प्रति लगाव भी दिखाया है।

उन्होंने अपने उपन्यास "गोदान'' में किसानो पर जमींदारों के अत्याचार को दिखाया है कि किस प्रकार वे कर्ज लेकर ब्याज के चक्रव्यूह में फ़ंस जाते है।

लगान, नजराना आदि कि आड़ मे किसानों का शोषण जमींदार, महाजन, पंडित करते है।

इस उपन्यास का नायक होरी जमींदार का 200 रुपये का कर्ज चुकाने के लिए अपनी बेटी रूपा को एक अधेड़ रामसेवक

से ब्याह देता है और बदले मे 200रूपये ले लेता है।

इस उपन्यास मे ये भी बताया गया कि जाति वाद, छूत अछूत के चलते छोटी जाति या दलित भेद भाव का शिकार होते है, छुआ छूत केवल गाँव मे ही नही बल्कि शहरो मे भी फैला हुआ है इस उपन्यास का एक पात्र गोबर जो मेहतो जाति का है जब वह शहर मे किराये का घर तलाशता है तो कोई भी जाति जानने के बाद उसे घर नही देता है।

अंत में वह एक गंदे, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक दशाओ वाले घर में रहने लगता है।

बात यहीं तक सीमित नही है बल्कि मातादीन पंडित सीलिया नामक चमार जाति की लड़की की मजबूरी का फायदा उठाकर उसे अपने प्रेम जाल मे फसाकर उसका शारीरिक शोषण करता है और विवाह के नाम पर मुकर जाता है।

इस उपन्यास की हर महिला पात्र शोषण का शिकार हुई चाहे धनिया, झुनिया हो या रूपा और सीलिया।

अगर हम उनके उपन्यास कफ़न की बात करें तो मानवता को शर्म सार पाएंगे कथानक मे घीसू और माधव दोनों आलसी, कामचोर मनुष्य है, माधव की पत्नी बुधिया प्रसव पीड़ा से कराह रही है उसे वेदना मे सुबह से रात हो गई पर माधव उसकी चिकित्सा कराने मे दायी को बुलाने मे असमर्थ है क्योंकि उसके पास तो एक पाई भी नही।

कमरे मे उसकी पत्नी तड़फ रही है वह बाहर बैठा उसकी आवाजे सुनता रहता है सुबह कमरे मे जाकर देखता है तो बुधिया के मुँह पर मख्खी भिंनभिना रही थी। वह दम तोड़ चुकी थी तब दोनों बाप बेटे उसके कफ़न का इंतजाम करने जमींदार व अन्य लोगों के पास जाते है ताकि पैसे एकत्र हो जाये लेकिन उस पैसे से वह कफ़न भी नही खरीदते बल्कि शराब और पेट भर खाना लेते है।

यहाँ सोचने लायक बात है कि अगर वह दोनों उसके प्रसव के लिए इतना परेशान हो जाते है तो पैसे एकत्र करके उसे अस्पताल पहुँचा देते और जच्चा बच्चा बच जाते है।

मरने के बाद सामाजिक औपचारिकता का कद बहुत बड़ा है, जीते जी किसी ने बुधिया की मदद नहीं की।

प्रेमचंद की एक अन्य कहानी "पंच परमेश्वर'' जिसमें जुम्मन मियाँ अपनी बूढी खाला से कहता है कि वह अपनी सारी जायजाद जुम्मन के नाम कर दें बदले मे वह उनका भरण पोषण करेगा, देखभाल करेगा लेकिन जायजाद अपने नाम लिखवाने के बाद वह मुकर जाता है और खाला को पेट भर रोटी भी नही देता यहीं आज की सच्चाई है बूढ़े वृद्ध जब अपनी सम्पत्ति का बटवारा कर देते या वसियत तब बच्चे उन्हें बोझ समझकर सम्पत्ति लेकर लावारिस मरने के लिए छोड़ देते है।

क़लम के जादूगर उपनाम से मशहूर प्रेमचंद जी ने अपने उपन्यासो, कहानी के माध्यम से तथाकथित सभ्य समाज को निर्वस्त्र कर दिया।

कहाँ कहाँ उनकी नजर नही गयी जो उन्होंने देखा वो लिखा बिना किसी मिलावट के।

आज अक्सर यहीं देखने सुनने को मिलता है कि फलां ने अपने माता पिता को घर से निकाल दिया या उन्हे पीटा, ताले मे बंद कर दिया या फिर बुजुर्ग माता पिता को छोड़कर विदेश चले गये।

प्रेमचंद जी की कहानी बूढी काकी की कथावस्तु भी इसी पर आधारित थी।

वर्तमान समाज धन की लोलुपता मे अंधा हो चुका है, हर जगह भ्रष्टाचार ठगी है जबकि मूल्यों का पतन हो रहा है यहीं चीज उन्होंने "नमक का दरोगा'' नामक कहानी मे बतायी गयी है कि बंशीधर बाबू जो नमक निरीक्षक है वह अवैध कारोबार और भ्रष्टाचार के खिलाफ़ आवाज़ उठाते है।

ओलोपदीन जो भ्रष्टाचारी था उसकी अंत मे जीत होती है जबकि बंशीधर बाबू को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ता है।

वह एक ऐसे साहित्यकार थे जिन्होंने भारतीय समाज की कुनीति, बुरे आचरण की अपनी रचनाओं के माध्यम से कटु आलोचना की।

संस्कृति के झूठे दिखावे के सामने जो पर्दा पड़ा हुआ था उसे उन्होंने हटा दिया।

हमें वो सत्य दिखाया जो पूरी तरह नग्न था जिसे देखकर मन घृणा से भर उठता है हम ऐसे समाज मे रह रहे है जो

अनैतिकताओं से भरा पड़ा है।

उन्होंने मध्य वर्ग, पूंजीवादी, निर्धन तीनों की तत्कालीन दशा का वास्तविक वर्णन किया।

"शतरंज के खिलाड़ी'' में उन्होंने सामंती विलासवाद को दिखाया।

उनकी एक कहानी "ठाकुर का कुआँ'' में छूत अछूत, सामाजिक अन्याय को दिखाया गया है।

कहानी में एक गॉव दिखाया गया है जिसमें तीन कुएँ है। एक ठाकुर का कुआँ, दूसरा साहूकारों का तीसरा अछूतों का। बदकिस्मती से अछूतो के कुएँ मैं जानवर गिरकर मर जाता है।

दूसरी तरफ एक दलित जोखू बीमार है उसकी पत्नि उसे साफ पानी पिलाना चाहती है, ज़ब हिम्मत करके ठाकुर के कुएँ से पानी लेने जाती है तो पकड़ी जाती है, मार खाती है और अंत मैं अपने पति को गंदा पानी पिलाने के लिए विवश हो जाती है।

ये शर्मनाक है हम सबको ईश्वर ने बनाया है तो हममे से कोई अछूत या अलग कैसे है, दलित शोषण का शिकार होता है, उसका आत्मसम्मान पल पल मरता है, प्रेमचंद ने बहुत ही मार्मिक अभिव्यक्ति द्वारा जातपात के दंश को दिखाया है।

इसी प्रकार उनकी एक कहानी घास वाली मैं मुलिया नामक घास बेचनी वाली गरीब महिला को दिखाया गया है जो चैन सिँह की बुरी नियत से बचने और अपने आत्म सम्मान को बचाने का भरसक प्रयास करती है।

दलित, गरीब के लिए खुद को शोषण से बचा पाना और अपने आत्म सम्मान की रक्षा कर पाना एक कठिन कार्य है।

प्रेमचंद के उपन्यास सेवा सदन में नायिका सुमन के माध्यम से दहेज दानव को चित्रित किया गया है कि किस प्रकार लड़कियो का मासूम जीवन दहेज की बलिवेदी पर चढ़ जाता है।

"कहानी दूध का दाम'' भी दलित के साथ होने वाले घनघोर शोषण को कहती है जिसमे समाज के दोहरे मापदंड को दिखाया गया है।

जहाँ एक ओर उनकी कहानी सौत पारिवारिक तनाव और भारतीय दाम्पत्य की पोल खोलती नजर आती है वहीं दूसरी ओर कहानी "गुल्ली डंडा'' बचपन की दोस्ती को बदलते सामाजिक स्तर के साथ परिवर्तित होते दिखा ती है।

अगर हम यहाँ उनकी कहानी चार बेटों वाली विधवा की बात न करें तो ये अन्याय पूर्ण ही होगा, क्योंकि पैसों के लालच मैं ज़ब अपने ही धोखा देते है तो इससे बड़ा कुकृत्य और क्या होगा।

कहानी की नायिका फूलमती के विधवा होने के बाद उसके चारों बेटे सम्पत्ति हड़पने की साजिश करते हैं, ये बात फूलमती को तोड़ देती है और वह आत्महत्या कर लेती है। ये सिर्फ प्रेमचंद का समकालीन समाज नहीं था बल्कि वर्तमान का भी घिनोना चेहरा है कि सगे भाई दौलत के पीछे एक दूसरे की जान ले लेते है।

कभी पति ही अपनी पत्नि के जीवन बीमा के पैसों के लिए ही उसे मार देता है कभी कभी पत्नि ही अपने पति की प्रॉपर्टी अपने नाम कराकर उसे तलाक दे देती है।

आज रिश्ते स्वार्थ के ही वशीभूत है, उनमे अब प्रेम नहीं रहा है।

प्रेमचंद जी ने इस समाज की बुराईयों को गहराई से देखा था।

इन सभी सामाजिक अन्याय को प्रेमचंद ने बखूबी अपनी कलम द्वारा दिखाया है।

"बड़े भाई साहब'' कहानी में कर्म की प्रधानता बतायी।

"दो बैलो की कथा'' में हिम्मत, साहस का महत्व बताया।

ऐसे साहित्यकार बिरले ही होते है जो समाज की दुराचरण, अनीति, अनैतिकता पर अपनी क़लम चला सकें।

उनकी कहानी "अंधेर'' मैं पीड़ित का ही समाज, क़ानून, धर्म द्वारा शोषण दिखाया गया है आज भी देश मैं यहीं स्थिति है, पीड़ित ही कष्ट उठाता है वह ही सबके निशाने पर होता है।

उन्होंने उस समय के ब्रिटिश शासन के अत्याचार के खिलाफ आवाज़ अपने कहानी संग्रह सोजे वतन द्वारा उठायी जिसे बाद मैं अंग्रेजी सरकार द्वारा जला दिया गया था इसमें उन्होंने स्वतंत्रता के लिए लोगों की व्याकुलता और अंग्रेजी नीतियों के प्रति भारतीयों के आक्रोश को जाहिर किया।

उनकी कलम का प्रकाश हर अन्याय को उजाले मैं लाता रहा ताकि समाज अपने स्वरूप को दर्पण मैं देख सके।

प्रेमचंद जी ने हर कटुता को अपने शब्दों रुपि प्रेम से हर लिया था आज फिर ऐसे कलमकार की जरूरत है जो सत्य को लिखकर समाज को आईना दिख ला सकें...सत्य कहने की हिम्मत बिरले ही कर पाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. मुंशी प्रेमचंद का हिंदी साहित्य मे योगदान : चित्रा यादव
2. हिंदी उपन्यास और भारतीय समाज का मध्य वर्ग : देवी, बाला
3. हिंदी उपन्यास के क्षेत्र मे प्रेमचंद का योगदान : प्रो. चन्द्रवंशी
4. न्यू मिडिल क्लास इन इंडिया : गुरु चैन सिंह
5. भारतीय मध्य वर्ग : दास श्याम सुंदर बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी
6. प्रेमचंद कुछ विचार : सरस्वती प्रेस इलाहाबाद
7. प्रेमचंद, टंडन, डॉ प्रताप नारायण : सामयिक प्रकाशन।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

डॉ. बी.आर. अंबेडकर और उनका समतामूलक समाज-इतिहास के परिप्रेक्ष्य में

सावन कुमार
शोधार्थी (इतिहास विभाग)
टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

डॉ. विजय शंकर कौशिक
सहायक आचार्य (इतिहास विभाग)
टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

शोध का सारांश

डॉ. भीमराव आंबेडकर का जीवन और चिंतन भारतीय समाज के इतिहास में परिवर्तनकारी आंदोलन का प्रतीक माना जाता है। वे केवल एक विधिवेत्ता, संविधान निर्माता और राजनीतिज्ञ ही नहीं थे, बल्कि सामाजिक क्रांति के ऐसे प्रणेता थे जिन्होंने भारतीय समाज की असमानताओं और विषमताओं के विरुद्ध संघर्ष करते हुए एक नए समतामूलक समाज की परिकल्पना प्रस्तुत की। उनके विचारों का मूल केंद्र बिंदु था-सामाजिक न्याय, समानता और मानवाधिकार। ऐतिहासिक दृष्टि से यह वह समय था जब भारतीय समाज जातिगत विभाजन और अस्पृश्यता के बोझ तले दबा हुआ था, और आंबेडकर ने इस व्यवस्था को चुनौती देते हुए समाज में परिवर्तन की नई राह प्रशस्त की।

अंबेडकर के विचारों का आधार केवल सैद्धांतिक विमर्श नहीं था, बल्कि उनका निर्माण उनके व्यक्तिगत अनुभवों और सामाजिक यथार्थ के ठोस संदर्भों से हुआ था। दलित परिवार में जन्म लेने के कारण उन्होंने स्वयं उस पीड़ा और भेदभाव को भोगा, जो समाज की गहराई में जड़ें जमाए हुए था। इसलिए उन्होंने भारतीय समाज के इतिहास का विश्लेषण करते हुए यह प्रतिपादित किया कि जाति प्रथा केवल एक सामाजिक संस्था नहीं, बल्कि एक शोषण तंत्र है, जिसने मानवता को बाँटकर उसकी प्रगति को बाधित किया। इस ऐतिहासिक दृष्टिकोण ने उन्हें समानता और बंधुत्व पर आधारित समाज की संरचना के लिए आजीवन संघर्षरत रखा।

शोध के संदर्भ में यह स्पष्ट होता है कि अंबेडकर का समतामूलक दृष्टिकोण न केवल सामाजिक और राजनीतिक विमर्श तक सीमित रहा, बल्कि ऐतिहासिक स्तर पर उन्होंने भारतीय संस्कृति, धर्म और परंपराओं का गहन विश्लेषण प्रस्तुत किया। उन्होंने वैदिक साहित्य, स्मृतियों और धार्मिक ग्रंथों की समीक्षा करके यह दिखाया कि किस प्रकार जातिगत ऊँच-नीच को वैधता प्रदान की गई। आंबेडकर का यह प्रयास था कि इतिहास को केवल ब्राह्मणवादी दृष्टिकोण से नहीं, बल्कि हाशिए के समाजों की दृष्टि से भी देखा जाए। यही कारण है कि उन्होंने इतिहास के अध्ययन को नए सिरे से परिभाषित करने का कार्य किया।

अंबेडकर का समतामूलक समाज का स्वप्न भारतीय संविधान में भी परिलक्षित होता है। संविधान निर्माण के समय उन्होंने न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व जैसे मूल्यों को आधार बनाकर भारतीय लोकतंत्र की नींव रखी। यह उनके ऐतिहासिक दृष्टिकोण का परिणाम था कि समाज की विविधता को मान्यता देते हुए एक ऐसे राजनीतिक ढाँचे की रचना की गई, जिसमें सभी वर्गों को समान अवसर और अधिकार प्राप्त हों। शोध के निष्कर्ष बताते हैं कि अंबेडकर ने समाज के

परिवर्तन को केवल कानून और राजनीति से नहीं जोड़ा, बल्कि शिक्षा, आर्थिक सशक्तिकरण और सामाजिक चेतना को भी आवश्यक माना।

इतिहास के परिप्रेक्ष्य में अंबेडकर की भूमिका यह दर्शाती है कि वे केवल एक व्यक्ति नहीं, बल्कि एक युगदृष्टा थे। उन्होंने अस्पृश्यता उन्मूलन, स्त्री शिक्षा, श्रमिक अधिकार और धार्मिक स्वतंत्रता जैसे मुद्दों को सामाजिक न्याय के व्यापक संदर्भ में रखा। इस दृष्टि से आंबेडकर का समतामूलक समाज केवल दलितों के लिए नहीं था, बल्कि संपूर्ण मानव समाज के लिए एक ऐसी व्यवस्था थी, जिसमें शोषण, अन्याय और भेदभाव का कोई स्थान न रहे। शोध का सारांश यह इंगित करता है कि आंबेडकर ने भारतीय इतिहास की व्याख्या को नयी दिशा देकर उसमें समता और न्याय को केंद्र में रखा।

शोध की कुंजी

सामाजिक न्याय, समानता, मानवाधिकार, चिंतन, ऐतिहासिक, संदर्भ, भारतीय समाज, प्रत्यक्ष, अनुभव, समाधान, सैद्धांतिक, व्यावहारिक, इतिहास, जातिव्यवस्था, भेदभाव, जड़ें, विशाल वर्ग, शिक्षा, अवसर, सम्मान, सामाजिक बुराई, सुनियोजित, शोषण तंत्र, लोकतांत्रिक, अधिकार, महत्वपूर्ण, दलित, श्रमिक, स्त्री, समुदाय, दृष्टि आदि।

शोध की प्रस्तावना

डॉ. भीमराव अंबेडकर का जीवन और विचार भारतीय इतिहास की उन निर्णायक धाराओं में आते हैं, जिन्होंने सामाजिक संरचना को चुनौती दी और उसे नया रूप दिया। भारतीय समाज में जातिगत ऊँच-नीच और अस्पृश्यता की परंपरा इतनी गहराई से रची-बसी थी कि उसने शोषित वर्गों को मानवाधिकार और सम्मान से वंचित कर दिया। अंबेडकर ने अपने निजी जीवन के अनुभवों और व्यापक अध्ययन के आधार पर इस असमानता की जड़ों का विश्लेषण किया। उन्होंने प्रतिपादित किया कि समाज के पुनर्गठन के लिए केवल राजनीतिक आजादी पर्याप्त नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक न्याय की स्थापना भी उतनी ही आवश्यक है। इस प्रकार, यह शोध इस तथ्य की पड़ताल करता है कि आंबेडकर का समतामूलक समाज का विचार भारतीय इतिहास की जटिलताओं का उत्तर कैसे प्रस्तुत करता है।

अंबेडकर ने सामाजिक असमानताओं को समाप्त करने के लिए इतिहास का पुनर्पाठ किया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि परंपरागत भारतीय इतिहास-लेखन में शोषित वर्गों और स्त्रियों की आवाज को अनदेखा किया गया है। उनके अनुसार, जब तक इतिहास को हाशिए पर खड़े समुदायों की दृष्टि से नहीं देखा जाएगा, तब तक समाज का सच्चा रूप सामने नहीं आ सकता। यही कारण है कि आंबेडकर ने प्राचीन ग्रंथों की आलोचनात्मक समीक्षा की और जाति-प्रथा को धार्मिक और सांस्कृतिक संस्थाओं के आधार पर समझाने का प्रयास किया। इस प्रस्तावना में शोध का उद्देश्य यही है कि आंबेडकर का ऐतिहासिक दृष्टिकोण किस प्रकार नए समाज की रचना के लिए सशक्त उपकरण बना।

अंबेडकर का समतामूलक समाज का विचार केवल सामाजिक सुधार तक सीमित नहीं था, बल्कि यह राजनीतिक और संवैधानिक ढाँचे में भी परिलक्षित होता है। संविधान सभा में उन्होंने यह सुनिश्चित किया कि सभी नागरिकों को समान अधिकार, अवसर और स्वतंत्रता मिले। यह संविधान भारतीय इतिहास में पहली बार ऐसा दस्तावेज बना, जिसमें न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को सर्वोच्च मूल्य के रूप में स्थापित किया गया। शोध की यह प्रस्तावना यह इंगित करती है कि आंबेडकर का दृष्टिकोण केवल अतीत का आलोचनात्मक मूल्यांकन नहीं, बल्कि भविष्य के लिए सकारात्मक दिशा भी था।

अंबेडकर ने सामाजिक न्याय के संघर्ष को शिक्षा, श्रम और स्त्रियों की मुक्ति जैसे व्यापक मुद्दों से जोड़ा। उन्होंने यह कहा कि जब तक दलित और वंचित वर्ग शिक्षा, आर्थिक संसाधनों और सामाजिक अवसरों में बराबरी प्राप्त नहीं करेंगे, तब तक समाज में वास्तविक परिवर्तन संभव नहीं होगा। इतिहास के परिप्रेक्ष्य में उनका यह विचार विशेष महत्त्व रखता है, क्योंकि सदियों से वंचित वर्गों को शिक्षा और संसाधनों से वंचित रखा गया था। इस शोध की प्रस्तावना यह प्रमाणित करती है कि

अंबेडकर ने समतामूलक समाज की कल्पना बहुआयामी स्तर पर की थी।

यह शोध न केवल अंबेडकर के विचारों और संघर्षों का अध्ययन है, बल्कि यह उस ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य को समझने का प्रयास भी है जिसमें उनके समतामूलक समाज का सपना जन्मा। भारतीय समाज की असमानताओं, धर्म और राजनीति की परस्पर जटिलताओं, तथा आधुनिक लोकतांत्रिक आदर्शों को जोड़ते हुए आंबेडकर ने जिस समाज-दर्शन की रचना की, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक है। इस प्रकार, शोध की प्रस्तावना यह संकेत देती है कि आंबेडकर का समतामूलक समाज केवल भारतीय इतिहास की चुनौतियों का उत्तर ही नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी मार्गदर्शक है।

शोध के सोपान

डॉ. भीमराव अंबेडकर के समतामूलक समाज की अवधारणा को समझने हेतु शोध का पहला सोपान है उनके जीवन और अनुभवों का विश्लेषण। अंबेडकर का जन्म एक दलित परिवार में हुआ और बचपन से ही उन्हें सामाजिक भेदभाव का सामना करना पड़ा। इन अनुभवों ने उनके व्यक्तित्व को गढ़ा और उन्हें सामाजिक असमानताओं को चुनौती देने के लिए प्रेरित किया। शोध के इस सोपान में यह स्पष्ट किया गया है कि अंबेडकर की विचारधारा केवल सैद्धांतिक विमर्श नहीं, बल्कि सामाजिक जीवन की कठोर वास्तविकताओं पर आधारित थी। यह सोपान यह भी दर्शाता है कि इतिहास का पुनर्लेखन करने का उनका प्रयास व्यक्तिगत पीड़ा से शुरू होकर सामूहिक मुक्ति तक विस्तारित हुआ।

शोध में अंबेडकर के शैक्षिक और बौद्धिक योगदान का अध्ययन है। कोलंबिया विश्वविद्यालय और लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स में अध्ययन के दौरान उन्होंने आधुनिक राजनीतिक विचारधाराओं, सामाजिक सिद्धांतों और आर्थिक नीतियों का गहन अध्ययन किया। इस पृष्ठभूमि ने उन्हें भारतीय समाज की समस्याओं को वैश्विक दृष्टि से समझने में मदद की। इस शोध का सोपान यह इंगित करता है कि आंबेडकर का समतामूलक समाज किसी संकीर्ण दायरे में बँधा नहीं था, बल्कि वह वैश्विक लोकतांत्रिक मूल्यों और भारतीय ऐतिहासिक संदर्भों का समन्वय था।

अंबेडकर की सामाजिक आलोचना और जाति-प्रथा के विरोध से संबंधित है। उन्होंने यह प्रतिपादित किया कि जाति केवल सामाजिक भेदभाव का रूप नहीं है, बल्कि यह आर्थिक और सांस्कृतिक शोषण का भी माध्यम है। शोध के इस सोपान में यह समझाया गया है कि आंबेडकर की दृष्टि में जाति-व्यवस्था भारतीय इतिहास की सबसे बड़ी बाधा थी, जिसने समानता और स्वतंत्रता की धारा को अवरुद्ध कर रखा था। उन्होंने जाति-प्रथा को समाप्त करने और उसके स्थान पर समानता आधारित सामाजिक ढाँचा खड़ा करने का आग्रह किया।

इस शोध में अंबेडकर के संवैधानिक योगदान का विश्लेषण है। भारतीय संविधान का निर्माण करते समय उन्होंने न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व को मूल आधार बनाया। शोध का यह सोपान बताता है कि संविधान केवल एक कानूनी दस्तावेज नहीं था, बल्कि यह सदियों से उपेक्षित और शोषित समुदायों के अधिकारों की पुनर्स्थापना का माध्यम भी था। संविधान सभा में उनके नेतृत्व ने यह सुनिश्चित किया कि भारत का लोकतंत्र सभी वर्गों के लिए समान अवसर और अधिकार प्रदान करे।

अंबेडकर के आर्थिक दृष्टिकोण पर केंद्रित है। उन्होंने भूमि सुधार, औद्योगिक विकास और श्रमिक अधिकारों पर बल दिया। उनका मानना था कि यदि आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना नहीं होगी, तो सामाजिक और राजनीतिक समानता अधूरी रह जाएगी। शोध का यह सोपान यह दर्शाता है कि आंबेडकर का समतामूलक समाज केवल सामाजिक और राजनीतिक स्तर पर नहीं, बल्कि आर्थिक स्तर पर भी परिवर्तनकारी था। इस सोपान से स्पष्ट होता है कि अंबेडकर का लक्ष्य एक बहुआयामी समाज निर्माण का था।

शोध में अंबेडकर के स्त्री-विमर्श और लैंगिक समानता से जुड़ा है। उन्होंने स्त्रियों को सामाजिक और आर्थिक समानता दिलाने का प्रयास किया और हिंदू कोड बिल के माध्यम से विवाह, संपत्ति और तलाक के अधिकारों की वकालत की। शोध का यह सोपान बताता है कि आंबेडकर का समतामूलक समाज स्त्रियों की मुक्ति और उनके स्वतंत्र अस्तित्व के बिना अधूरा

था। उन्होंने इतिहास में स्त्रियों की उपेक्षा को चुनौती दी और उन्हें समान अधिकारों के दायरे में लाने की पहल की।

अंबेडकर के धार्मिक दृष्टिकोण और बौद्ध धर्म की ओर उनके झुकाव से संबंधित है। उन्होंने यह पाया कि हिंदू धर्म में समानता की संभावना नहीं है, क्योंकि उसकी संरचना ही ऊँच-नीच पर आधारित है। इसलिए उन्होंने बौद्ध धर्म को अपनाया, जिसमें करुणा, अहिंसा और समानता जैसे सिद्धांत मौजूद थे। शोध का यह सोपान यह दर्शाता है कि आंबेडकर का समतामूलक समाज केवल सामाजिक और राजनीतिक सुधारों तक सीमित नहीं था, बल्कि यह आध्यात्मिक स्तर पर भी क्रांतिकारी परिवर्तन की प्रक्रिया थी।

शोध में अंबेडकर की प्रासंगिकता और उनके विचारों के वैश्विक महत्व का विश्लेषण है। आज भी जब सामाजिक असमानता, जातिगत भेदभाव और लैंगिक अन्याय जैसी समस्याएँ विद्यमान हैं, तब आंबेडकर का समतामूलक समाज का स्वप्न हमें समाधान की दिशा प्रदान करता है। शोध का यह सोपान यह स्पष्ट करता है कि अंबेडकर का चिंतन केवल उनके समय के लिए नहीं था, बल्कि वह भविष्य की चुनौतियों के समाधान हेतु भी मार्गदर्शक है। उनके विचार इतिहास की धारा को बदलने वाले और आधुनिक समाज की नींव रखने वाले सिद्धांत बन चुके हैं।

शोध का महत्व

डॉ. भीमराव आंबेडकर के समतामूलक समाज पर किया गया शोध ऐतिहासिक और सामाजिक दोनों दृष्टियों से अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारतीय समाज सदियों से जातिगत विषमताओं, अस्पृश्यता और ऊँच-नीच की परंपरा में जकड़ा हुआ था, जिससे समाज का एक बड़ा हिस्सा शिक्षा, आर्थिक संसाधनों और सामाजिक सम्मान से वंचित रहा। इस शोध का महत्व इस बात में निहित है कि यह हमें अंबेडकर की उस वैचारिक यात्रा से परिचित कराता है, जिसमें उन्होंने इन असमानताओं को समाप्त करने के लिए ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समाधान खोजे। यह अध्ययन केवल अतीत का आलोचनात्मक मूल्यांकन नहीं करता, बल्कि यह दिखाता है कि आंबेडकर के विचार वर्तमान और भविष्य के लिए भी कितने प्रासंगिक हैं।

यह भारतीय इतिहास की एक नई व्याख्या प्रस्तुत करता है। परंपरागत इतिहास-लेखन प्रायः शोषित और हाशिए के वर्गों की समस्याओं को अनदेखा करता रहा है। अंबेडकर ने दलितों, श्रमिकों और स्त्रियों की स्थिति को केंद्र में रखकर इतिहास को देखने का आग्रह किया। शोध इस बात पर प्रकाश डालता है कि इतिहास को केवल शासक वर्गों और ऊँची जातियों की उपलब्धियों तक सीमित न रखकर, वंचित वर्गों के संघर्ष और योगदान को भी शामिल करना चाहिए। इस दृष्टि से यह शोध इतिहास-लेखन में एक वैकल्पिक विमर्श की नींव रखता है।

यह शोध संविधान और लोकतंत्र की समझ को गहराई प्रदान करता है। अंबेडकर ने भारतीय संविधान में समानता, स्वतंत्रता, न्याय और बंधुत्व को मूल आधार बनाया, जो उनके समतामूलक समाज के विचार का संवैधानिक रूप था। इस शोध का महत्व यह है कि यह संविधान निर्माण की प्रक्रिया को केवल राजनीतिक घटना न मानकर, ऐतिहासिक असमानताओं के समाधान की दिशा में एक कदम के रूप में प्रस्तुत करता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि आंबेडकर का दृष्टिकोण समाज के पुनर्निर्माण की व्यापक ऐतिहासिक प्रक्रिया का हिस्सा था।

शोध का महत्व सामाजिक न्याय की समकालीन बहसों में परिलक्षित होता है। आज भी जातिगत भेदभाव, लैंगिक असमानता और आर्थिक विषमता जैसी समस्याएँ समाज में विद्यमान हैं। इस संदर्भ में अंबेडकर का समतामूलक समाज का विचार एक जीवंत मार्गदर्शक के रूप में सामने आता है। शोध यह दिखाता है कि अंबेडकर के विचार केवल उनके समय की चुनौतियों तक सीमित नहीं थे, बल्कि वे वर्तमान परिस्थितियों में भी समान रूप से प्रासंगिक हैं। इस प्रकार, यह शोध सामाजिक न्याय और समानता की समकालीन बहसों को ऐतिहासिक आधार प्रदान करता है।

शोध का महत्व वैश्विक दृष्टि से भी उभरता है। अंबेडकर ने भारतीय समाज की समस्याओं को हल करने के लिए पश्चिमी लोकतंत्र, मानवाधिकार और सामाजिक न्याय की अवधारणाओं का अध्ययन किया और उन्हें भारतीय परिस्थितियों के अनुरूप ढाला। शोध यह दर्शाता है कि अंबेडकर का समतामूलक समाज केवल राष्ट्रीय सीमा तक सीमित नहीं था, बल्कि

उसमें वैश्विक मानव मूल्यों का समन्वय था। इससे यह शोध मानवाधिकार और सामाजिक समानता की वैश्विक बहस में भी योगदान देता है।

अंततः, इस शोध का महत्व यह है कि यह हमें न केवल आंबेडकर के विचारों और संघर्षों की गहराई से परिचित कराता है, बल्कि यह भी सिखाता है कि एक ऐतिहासिक व्यक्तित्व किस प्रकार पूरे समाज की दिशा बदल सकता है। आंबेडकर ने इतिहास की धारा को नई दिशा दी और एक ऐसे समाज की परिकल्पना की, जहाँ न्याय और समानता सर्वोपरि हों। यह शोध समाज विज्ञान, इतिहास और राजनीति के छात्रों के लिए ही नहीं, बल्कि हर उस व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण है, जो सामाजिक न्याय और मानवता के आदर्शों को समझना चाहता है।

शोध के उद्देश्य

डॉ. भीमराव अंबेडकर भारतीय समाज की उन महान विभूतियों में गिने जाते हैं जिन्होंने असमानताओं, विषमताओं और शोषण के विरुद्ध जीवन भर संघर्ष किया। उनके चिंतन का मूल आधार सामाजिक न्याय और समानता की स्थापना था। भारतीय समाज लंबे समय तक जाति-आधारित पदानुक्रम और भेदभावपूर्ण संरचना से ग्रस्त रहा है, ऐसे में अंबेडकर ने इन व्यवस्थाओं को चुनौती देकर समान अवसर, शिक्षा और स्वतंत्रता की बात की। शोध के उद्देश्यों में यह जानना भी शामिल है कि उनके विचारों ने किस प्रकार भारतीय लोकतंत्र और संविधान की मूल संरचना को आकार प्रदान किया।

- इस शोध का प्रमुख उद्देश्य अंबेडकर द्वारा प्रतिपादित समतामूलक समाज की अवधारणा को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में समझना और उसका विश्लेषण करना है।
- अंबेडकर के समतामूलक विचार आज भी समकालीन भारत की समस्याओं के समाधान में कितने प्रासंगिक हैं, इसका अकादमिक मूल्यांकन प्रस्तुत किया जाए।
- इतिहासकारों और समाजशास्त्रियों ने अंबेडकर के विचारों को किस प्रकार व्याख्यायित किया है, उसका मूल्यांकन किया जाए।
- शोध का उद्देश्य वर्तमान और भविष्य दोनों संदर्भों में उनके विचारों की उपयोगिता पर प्रकाश डालना है।

शोध का निष्कर्ष

डॉ. भीमराव अंबेडकर के चिंतन और उनके सामाजिक-राजनीतिक प्रयासों का गहन अध्ययन करने पर यह स्पष्ट होता है कि उन्होंने भारतीय समाज में व्याप्त असमानताओं को केवल पहचाना ही नहीं, बल्कि उन्हें समाप्त करने के लिए ठोस वैचारिक और व्यावहारिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए। उनके समतामूलक समाज की अवधारणा जातिगत ऊँच-नीच, अस्पृश्यता और शोषण के विरुद्ध एक सशक्त घोषणा थी। निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि अंबेडकर का जीवन और कार्य भारत के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में केवल सामाजिक परिवर्तन का प्रतीक ही नहीं रहा, बल्कि आधुनिक भारत के लोकतांत्रिक ढाँचे की बुनियाद भी बना। उनके विचारों ने यह स्थापित किया कि किसी भी राष्ट्र की प्रगति समानता, न्याय और बंधुत्व के मूल्यों के बिना संभव नहीं है।

इस शोध का निष्कर्ष यह भी दर्शाता है कि अंबेडकर की दृष्टि केवल वंचित वर्ग तक सीमित नहीं थी, बल्कि उन्होंने सम्पूर्ण समाज को समानता के सूत्र में बाँधने का प्रयास किया। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि यदि समाज में एक भी वर्ग उत्पीड़न का शिकार है तो उस समाज का लोकतंत्र अधूरा है। उनके विचार भारतीय इतिहास में उस महत्वपूर्ण मोड़ की ओर संकेत करते हैं जब सामाजिक क्रांति और राजनीतिक स्वतंत्रता दोनों एक-दूसरे के पूरक बनकर सामने आए। अतः यह कहा जा सकता है कि अंबेडकर का समतामूलक समाज भारतीय इतिहास की उन गहरी जड़ों पर आधारित था जो मानवता, न्याय और समान अवसर के सिद्धांतों को महत्व देती हैं।

निष्कर्ष रूप में यह भी सामने आता है कि अंबेडकर का योगदान केवल उनके समय तक सीमित नहीं है, बल्कि वह

आज भी उतना ही प्रासंगिक है। आज जब समाज अनेक प्रकार की असमानताओं और विभाजनों से जूझ रहा है, अंबेडकर का समतामूलक दृष्टिकोण नई दिशा दिखाता है। उनके विचार यह शिक्षा देते हैं कि केवल संवैधानिक प्रावधान पर्याप्त नहीं हैं, बल्कि समाज की मानसिकता में परिवर्तन लाना भी आवश्यक है। यही कारण है कि अंबेडकर का विचारधारा-संपन्न जीवन और उनका संघर्ष आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का स्रोत बना रहेगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. सागर एस.एल (2000) डॉ. अम्बेडकर संक्षिप्त जीवन परिचय, सागर प्रकाशन, मैनपुरी
2. सर्वेश (2007) अम्बेडकर के विचार, समता साहित्य सदन, नई दिल्ली
3. त्रिपाठी सूर्य नारायण, भारत रत्न बाबा साहब डॉ भीमराव अम्बेडकर, साधना पब्लिकेशन, नई दिल्ली
4. लिमये मधु (1997), बाबा साहब अम्बेडकर एक चिन्तन, आत्माराम एंड संस दिल्ली
5. मेहता चेतन, (1991), युगदृष्टा डॉ. भीमराव अम्बेडकर मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर
6. रतू नानक चंद (2005) बाबा साहब डॉ. अम्बेडकर संस्मरण और स्मृतियां सम्यक् प्रकाशन नई दिल्ली
7. बौद्ध शीलप्रिय (2008), पूना पैक्ट क्यों, क्या और, किसके लिए, सम्यक् प्रकाशन नई दिल्ली

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

उच्च माध्यमिक स्तर पर विभिन्न संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन

कुसुम लता टाक
(शोधार्थी) शिक्षा विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

डॉ. श्रद्धा सिंह चौहान
शोध निर्देशिका (सहायक आचार्या)
श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय,
सी.टी.ई. केशव विद्यापीठ जामडोली जयपुर (राज.)

सारांश

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य उच्च माध्यमिक स्तर पर विभिन्न संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना है। इस अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। इस अध्ययन के लिए 120 शिक्षकों का चयन न्यादर्श हेतु किया गया। शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति जानने हेतु स्वनिर्मित "शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति मापनी" का प्रयोग किया गया। उपकरण से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण मध्यमान, प्रमाप विचलन एवं टी-परीक्षण के द्वारा किया गया। परिणाम में यह पाया कि उच्च माध्यमिक स्तर के शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति की अभिवृत्ति में क्षेत्र एवं संकाय के सदर्भ में सार्थक अंतर है।

मुख्यशब्द- शैक्षिक नवाचार, अभिवृत्ति, उच्च माध्यमिक स्तर।

प्रस्तावना

आधुनिक युग विज्ञान, सूचना तकनीकी तथा परिवर्तन का युग है। इस विकासशील युग में शिक्षा सिद्धान्तों तथा शिक्षण व्यवस्था के प्रति पुरानी धारणाएँ शिथिल पड़ रही हैं। अभिनव प्रयोग को सर्वाधिक उपयुक्त शिक्षण पद्धति माना जाने लगा है। वर्तमान में शिक्षण प्रक्रिया को सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक रूप से कला व विज्ञान दोनों ही रूपों में मान्यता प्राप्त है। आज बाल केन्द्रित शिक्षा प्रणाली में बालक की अभिरुचि, मनोवृत्ति, शारीरिक एवं मानसिक क्षमता के अनुरूप ही शिक्षण कार्य सम्पादित करना होता है। अपारम्परिक शिक्षण साधनों के बढ़ते चरण व लोकप्रियता के फलस्वरूप शिक्षक को अपनी भूमिका बरकरार रखने हेतु शिक्षण की पूर्ण तैयारी आवश्यक है।शिक्षण का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थी के व्यवहार में परिवर्तन लाना होता है। यह तभी संभव है जब शिक्षण नियोजन में ऐसी व्यूह रचना का समावेश हो जिससे विद्यार्थी में जिज्ञासा बनी रहे। व्यूह रचना सोपान में यह निर्णय लेना होता है कि शिक्षण के साथ पाठ की विभिन्न अवस्थाओं में किन युक्तियों, प्रविधियों, सहायक सामग्री का प्रयोग कब, कहाँ, कैसे किया जाए, मूल्यांकन का स्वरूप क्या हो, शिक्षण में रोचकता व निरन्तरता बनी रहे तथा विद्यार्थियों की बोधगम्यता में वृद्धि हो। विज्ञान और टेक्नोलॉजी नवीन ज्ञान के विस्फोट से अनेक नये-नये नवाचार हर क्षेत्र

में अपनाए गए हैं। भारत में शिक्षा के क्षेत्र में इन नवाचार का प्रयोग नया है। आज शिक्षण प्रक्रिया में नवाचार न केवल युग की मांग है, अपितु बालक-अधिगम प्रक्रिया की एक अनिवार्य भी है।

अध्ययन का औचित्य

वर्तमान युग में तकनीकी का प्रभाव जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हमें दिखाई देता है। आज तकनीकी के बिना समाज की कल्पना करना असंभव है। तकनीकी का व्यापक प्रयोग शिक्षा में भी देखने को मिलता है, जिसे नवाचार के नाम से संबोधित किया जाता है। शिक्षा में बदलाव करने से बच्चों को नया सीखने को मिलेगा। नवाचारी शिक्षा से तकनीकी के क्षेत्र को नई ऊंचाइयों तक ले जाया जा सकता है। नवाचारी शिक्षा से बच्चों को वैज्ञानिक दृष्टि से और औद्योगिक दृष्टि से नये नये तरीकों को समझने और सीखने के लिए स्कूलों में लाया जा सकता है। शिक्षा में नवीकरण करने से बच्चों का विकास किया जा सकता है। उनके सोचने और समझने की शक्ति को बढ़ाया जा सकता है और उनके आचार और व्यवहार में भी बदलाव करके उन्हें एक सशक्त पद्धति का आचरण सिखाया जा सकता है। नवाचार के महत्व को ध्यान में रखते हुए ही शोधार्थी ने "उच्च माध्यमिक स्तर पर विभिन्न संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति की अभिवृत्ति का अध्ययन'' करने का निर्णय लिया है।

अध्ययन के उद्देश्य

1 उच्च माध्यमिक स्तर के कला के संकाय ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

2 उच्च माध्यमिक स्तर के वाणिज्य संकाय के ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

3 उच्च माध्यमिक स्तर के विज्ञान संकाय के ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएं

1. उच्च माध्यमिक स्तर पर कला संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति में अंतर नहीं पाया जाता है।

2. उच्च माध्यमिक स्तर पर वाणिज्य संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति में अंतर नहीं पाया जाता है।

3. उच्च माध्यमिक स्तर पर विज्ञान संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति में अंतर नहीं पाया जाता है।

आंकड़ों का विश्लेषण

कला संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक समाचारों के प्रति अभिवृति में अंतर।

समूह	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी-परिक्षण	परिणाम
ग्रामीण शिक्षक	60	191.28	11.04	2.35	अस्वीकृत
शहरी शिक्षक	60	197.16	15.89		

Df=(N1+N2-2), (60+60-2)=118

0.05 सार्थाकता स्थर पर सारणी मान – 1.98

0.01 सार्थाकता स्थर पर सारणी मान – 2.62

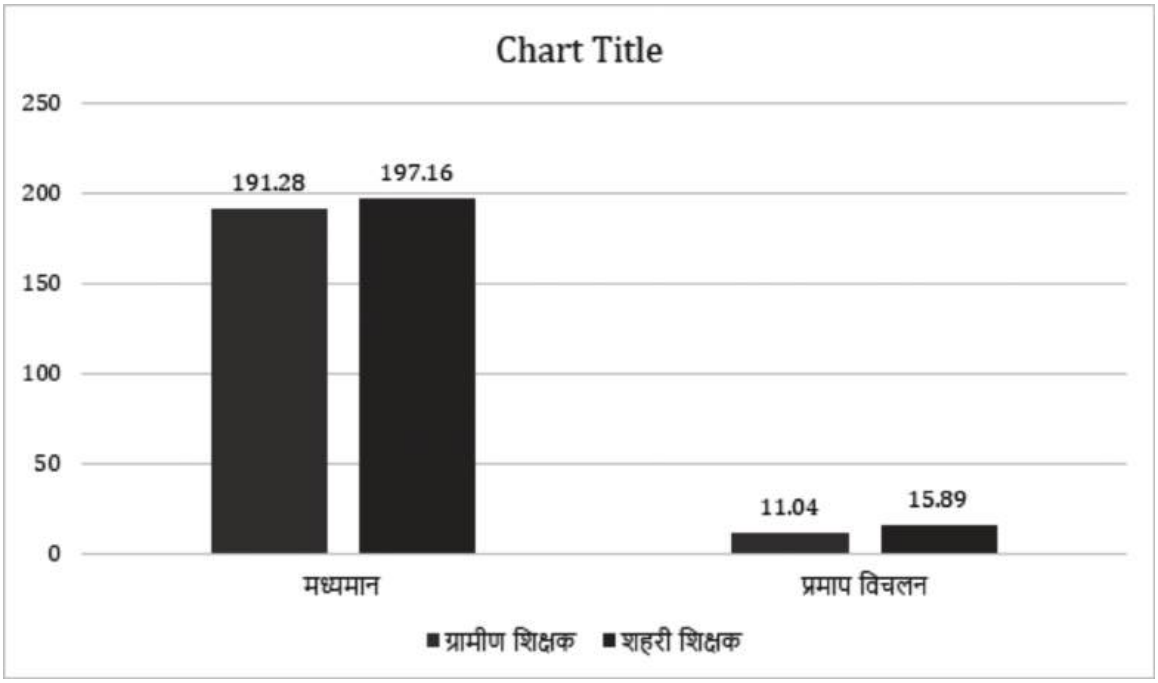

व्याख्या एवं विश्लेषण

उक्त सारणी के अनुसार कला संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमशः 191.28 व 197.16 है, तथा प्रमाप विचलन क्रमशः 11.04 और 15.89 है। मध्यमान एवं प्रमाप विचलन के द्वारा टी-परीक्षण की गणना करने के उपरांत टी-मूल्य 2.35 प्राप्त हुआ है। 118 स्वतंत्रता के अंश पर 0. 05 स्तर पर सार्थकता मान 1.98 एवं 0.01 स्तर पर सार्थकता मान 2.62 है। गणना द्वारा प्राप्त टी का मान 2.35118है, जो कि 0.05 सार्थकता स्तर के सारणी मान से अधिक है। इस आधार पर निर्धारित शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है।अतः स्पष्ट है कि कला संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति में अंतर है।

वाणिज्य संख्या में कार्यालय ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक समाचारों के प्रति अभिवृत्ति में अंतर।

समूह	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी-परिक्षण	परिणाम
ग्रामीण शिक्षक	60	210.78	15.11	2.70	अस्वीकृत
शहरी शिक्षक	60	218.21	14.99		

Df=(N1+N2-2), (60+60-2)=118

0.05 सार्थाकता स्थर पर सारणी मान – 1.98
0.01 सार्थाकता स्थर पर सारणी मान – 2.62

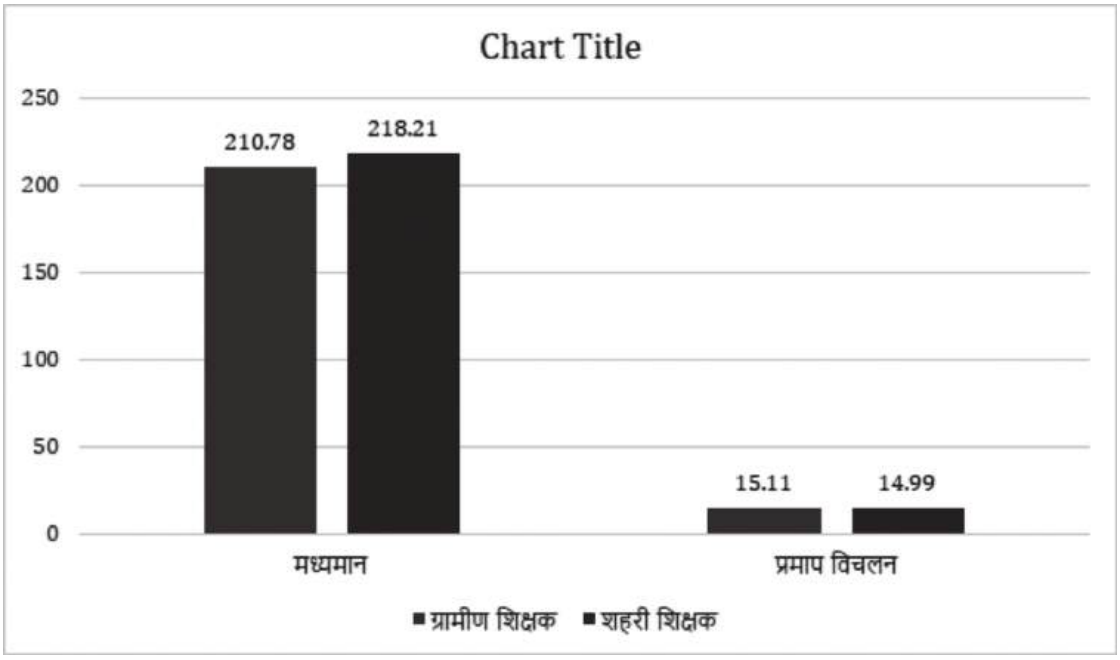

व्याख्या एवं विश्लेषण

उक्त सारणी के अनुसार वाणिज्य संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमशः 210.78 व 218.21 है, तथा प्रमाप विचलन क्रमशः 15.11 और 14.09 है। मध्यमान एवं प्रमाप विचलन के द्वारा टी-परीक्षण की गणना करने के उपरांत टी-मूल्य 2.70 प्राप्त हुआ है। 118 स्वतंत्रता के अंश पर 0. 05 स्तर पर सार्थकता मान 1.98 एवं 0.01 स्तर पर सार्थकता मान 2.62 है। गणना द्वारा प्राप्त टी का मान 2.70 है, जो कि 0.05 एवं 0.01 सार्थकता स्तर के सारणी मान से अधिक है। इस आधार पर निर्धारित शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है। अतः स्पष्ट है कि वाणिज्य संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति में अंतर है।

विज्ञान संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक कर्मचारियों के प्रति अभिवृद्धि में अंतर

समूह	संख्या	मध्यमान	प्रमाप विचलन	टी-परिक्षण	परिणाम
ग्रामीण शिक्षक	60	207.28	17.01	1.98	अस्वीकृत
शहरी शिक्षक	60	213.59	17.94		

Df=(N1+N2-2), (60+60-2)=118
0.05 सार्थाकता स्थर पर सारणी मान – 1.98
0.01 सार्थाकता स्थर पर सारणी मान – 2.62

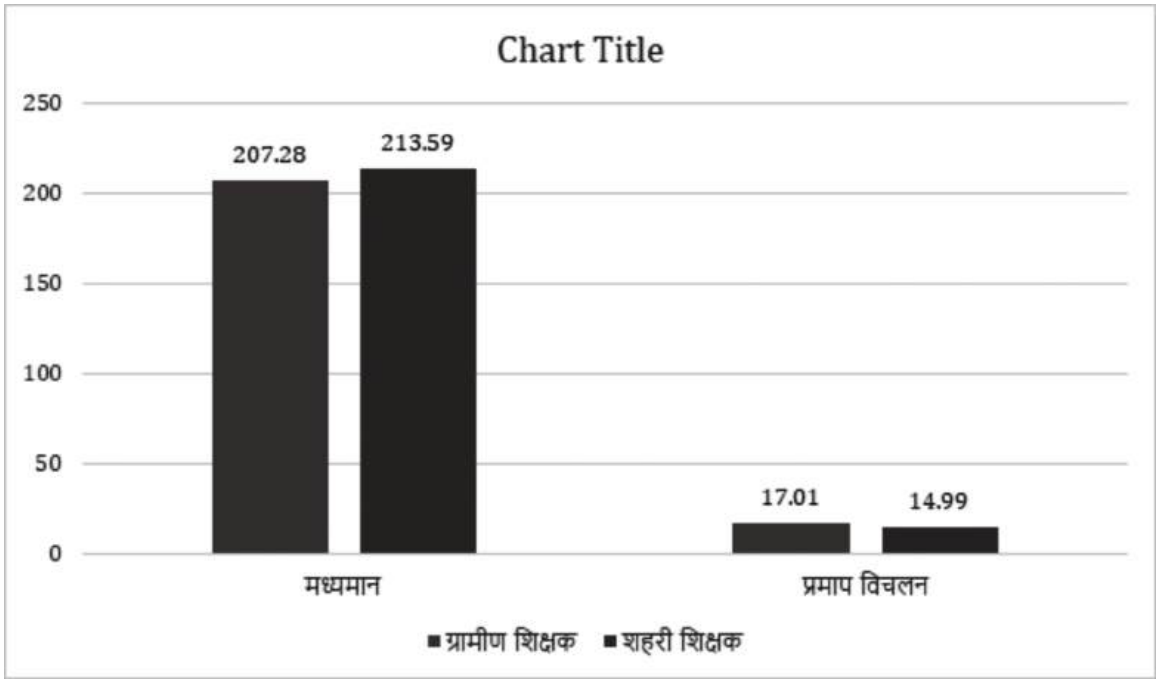

व्याख्या एवं विश्लेषण

उक्त सारणी के अनुसार विज्ञान संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति के प्राप्तांकों का मध्यमान क्रमशः 207.28 व 213.59 है, तथा प्रमाप विचलन क्रमशः 17.01 और 17.94 है। मध्यमान एवं प्रमाप विचलन के द्वारा टी-परीक्षण की गणना करने के उपरांत टी-मूल्य 1.98 प्राप्त हुआ है। 118 स्वतंत्रता के अंश पर 0. 05 स्तर पर सार्थकता मान 1.98 एवं 0.01 स्तर पर सार्थकता मान 2.62 है। गणना द्वारा प्राप्त टी का मान 1.98 है, जो कि 0.01 सार्थकता स्तर के सारणी मान से अधिक है। इस आधार पर निर्धारित शून्य परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है।अतः स्पष्ट है कि विज्ञान संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति में अंतर है।

सुझाव

1. शिक्षण विधियों को स्तर में सुधार करना आवश्यक है और साथ ही नवाचार के प्रयोग को बढ़ावा दिया जाना भी आवश्यक है।

2. ग्रामीण क्षेत्रों विद्यालय में तकनीकी आधारित सुविधाएं जैसे स्मार्ट कक्षाएं, प्रोजेक्टर, उच्च गति इंटरनेट, नियमित कार्यशालाओं आदि का आयोजन किया जाना चाहिए।

3. शिक्षा में बेहतर गुणवत्ता के लिए पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जिसमें नवाचारी विधियों के प्रयोग किया जा सके।

4. विद्यालय में नवाचारी कार्यक्रमों पर कार्यशालाओं का आयोजन किया जाना चाहिए।

संदर्भ सूची

- बिष्ट, भावना (2022) शिक्षक शिक्षा में उभरते रुझान और नवाचारः भविष्य की कक्षा पर अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ क्रिएटिव रिसर्च थोट्स, 10(5), 436-44.

- जीत, योगेन्द्र भाई (2006) शिक्षा में नवाचार और नवीन प्रवृत्तियाँ, आगरा : विनोद पुस्तक मन्दिर।
- पाठक, आरती (2022). सीखने में नवाचार के माध्यम से महिलाओं के सामाजिक आर्थिक विकास पर अध्ययन। द इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन साइकोलोजी, 10(1), 528-531
- शर्मा, सुमन देवी (2023). वर्तमान में शिक्षा के क्षेत्र में नवाचार की भूमिका का अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एज्यूकेशन, मोर्डन मैनेजमेन्ट, एप्लाइड साइन्स एण्ड सोशल साइन्स, 5(1), 97-100.
- सिंह, राजीव रंजन (2019) शिक्षकों हेतु नवाचार की आवश्यकता एवं महत्व पर अध्ययन। जर्नल ऑफ इमर्जिंग टेक्नोलोजी एण्ड इनोवेटिव रिसर्च, 6(5), 487-489
- सूत्रधार, प्रबीर (2023). शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम में नवाचार पर अध्ययन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसीप्लीनरी एजूकेशनल रिसर्च, 12 (1), 37-41.
- त्रिवेदी, आर.एन. एवं शुक्ला, डी.पी. (2008). रिसर्च मैथडोलॉजी जयपुर कॉलेज बुक डिपो।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में शोधार्थियों की डिजिटल सूचना संसाधनों के प्रति अभिरुचि और संतुष्टि : एक समीक्षात्मक अध्ययन

आरती ग्वालेर
शोधार्थी
डॉ. मोहम्मद नासिर
पर्यवेक्षक, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग कलिंगा विश्वविद्यालय,
नया रायपुर (छत्तीसगढ़)

सारांश

वर्तमान शोध अध्ययन मध्यप्रदेश के प्रमुख विश्वविद्यालयों में अध्ययनरत शोधार्थियों द्वारा डिजिटल सूचना संसाधनों के उपयोग और संतुष्टि का समीक्षात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में डिजिटल पुस्तकालयों की भूमिका निरंतर महत्वपूर्ण होती जा रही है, किंतु इन संसाधनों की वास्तविक उपयोगिता शोधार्थियों की पहुँच, व्यवहार, तकनीकी जागरूकता एवं संस्थागत सहयोग पर निर्भर करती है। अध्ययन में यह पाया गया कि यद्यपि अधिकांश विश्वविद्यालयों में ई-पुस्तकें, ई-जर्नल्स, डेटाबेस, शोधगंगा, और एन-लिस्ट जैसी सुविधाएँ उपलब्ध हैं, परंतु इनका उपयोग क्षेत्रीय असमानताओं, नेटवर्क बाधाओं, प्रशिक्षण की कमी और उपयोगकर्ता साक्षरता की विविधता के कारण सीमित है। शहरी विश्वविद्यालयों में संसाधनों का उपयोग अपेक्षाकृत अधिक है, जबकि ग्रामीण परिसरों में शोधार्थी तकनीकी एवं संस्थागत सहयोग के अभाव में डिजिटल संसाधनों का समुचित लाभ नहीं उठा पा रहे हैं। शोधार्थियों की संतुष्टि का स्तर मध्यम पाया गया, जो कि सामग्री की प्रासंगिकता, प्लेटफॉर्म की उपयोगकर्ता सुलभता और तकनीकी सहायता की उपलब्धता पर निर्भर करता है। अध्ययन में यह स्पष्ट हुआ कि डिजिटल संसाधनों के प्रभावी उपयोग के लिए केवल अवसंरचना ही नहीं, अपितु सूचना साक्षरता, प्रशिक्षण, और डेटा-आधारित नीति-निर्माण अत्यावश्यक है। यह शोध नीति-निर्माताओं, पुस्तकालयाध्यक्षों और विश्वविद्यालय प्रशासन को डिजिटल सेवाओं को अधिक समावेशी, प्रभावी और शोधार्थी-केंद्रित बनाने की दिशा में मार्गदर्शन प्रदान करता है।

कीवर्ड्स : डिजिटल सूचना संसाधन, शोधार्थी संतुष्टि, डिजिटल पुस्तकालय, मध्यप्रदेश विश्वविद्यालय, सूचना साक्षरता, नेटवर्क बाधाएँ।

1. प्रस्तावना

वर्तमान युग सूचना और प्रौद्योगिकी का है, जिसमें ज्ञानार्जन एवं शोध की प्रक्रिया में तीव्रता और सुलभता लाने के लिए डिजिटल सूचना संसाधनों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। विश्वविद्यालयों एवं उच्च शिक्षण संस्थानों में अध्ययन और

शोध की गुणवत्ता को सुनिश्चित करने हेतु पारंपरिक पुस्तकालयों के साथ-साथ डिजिटल पुस्तकालय (Digital Libraries) का विकास एक आवश्यक नवाचार के रूप में उभरा है। डिजिटल पुस्तकालय न केवल भौगोलिक सीमाओं को तोड़ते हैं, बल्कि उपयोगकर्ताओं को त्वरित, अद्यतन एवं व्यापक जानकारी उपलब्ध कराने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं (गोस्वामी, 2021)। विशेष रूप से उच्च शिक्षा के क्षेत्र में, डिजिटल सूचना संसाधनों जैसे कि ई-पुस्तकें (e-books), ई-जर्नल्स (e-journals), डेटाबेस, ऑडियो-विजुअल सामग्री एवं ओपन एक्सेस रिपॉज़िटरी ने शैक्षणिक समुदाय को अधिक आत्मनिर्भर एवं अनुसंधान-केंद्रित बनाया है। भारतीय उच्च शिक्षा आयोग (UGC) द्वारा 'एन-लिस्ट' (N-LIST) और 'शोधगंगा' जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से डिजिटल सामग्री की पहुँच को विस्तारित करने के प्रयास किए जा रहे हैं (UGC, 2020)।

मध्यप्रदेश, जो भारत का एक प्रमुख शैक्षणिक राज्य है, वहाँ के विश्वविद्यालयों में डिजिटल पुस्तकालय अवसंरचना का विकास अपेक्षाकृत धीमी गति से हो रहा है। अधिकांश विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में डिजिटल संसाधनों की सीमित पहुँच, प्रशिक्षण की कमी, नेटवर्क संबंधी बाधाएँ और जागरूकता का अभाव देखा जा रहा है (शर्मा एवं मिश्रा, 2022)। शोधार्थियों को डिजिटल संसाधनों की जानकारी होने के बावजूद उनका उपयोग सीमित रह जाता है, जिससे उनकी अकादमिक प्रगति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में डिजिटल सूचना संसाधनों की उपयोगिता, शोधार्थियों की संतुष्टि एवं व्यवहार का सम्यक मूल्यांकन करना इसीलिए अत्यंत आवश्यक है, ताकि नीतिगत सुधारों की दिशा में ठोस कदम उठाए जा सकें। यह अध्ययन इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु एक समीक्षात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जो भविष्य में डिजिटल पुस्तकालयों की प्रभावशीलता बढ़ाने में सहायक सिद्ध हो सकता है।

शोध का उद्देश्य एवं महत्व

डिजिटल सूचना संसाधनों की उपलब्धता और उपयोगिता ने उच्च शिक्षा और शोध के क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन लाया है। विशेष रूप से शोधार्थियों के लिए यह संसाधन अध्ययन, लेखन, संदर्भ सामग्री प्राप्त करने तथा अद्यतन जानकारी तक पहुँचने के एक महत्वपूर्ण माध्यम बन चुके हैं। परंतु, इन संसाधनों की वास्तविक उपयोगिता तभी सार्थक हो सकती है जब उपयोगकर्ता विशेष रूप से शोधार्थी उन्हें पर्याप्त रूप से समझें, अपनाएँ और संतुष्टिपूर्वक प्रयोग करें।

इस शोध का मुख्य उद्देश्य मध्यप्रदेश राज्य के विश्वविद्यालयों में अध्ययनरत शोधार्थियों द्वारा डिजिटल सूचना संसाधनों के उपयोग की प्रवृत्तियों, अभिरुचि तथा संतुष्टि स्तर का सम्यक मूल्यांकन करना है। साथ ही, शोध यह भी विश्लेषित करता है कि डिजिटल संसाधनों तक पहुँच, उपयोगकर्ता प्रशिक्षण, तकनीकी अवसंरचना तथा संस्थागत समर्थन जैसे कारक इन पहलुओं को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

इस शोध के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं :

1. मध्यप्रदेश के प्रमुख विश्वविद्यालयों में शोधार्थियों द्वारा प्रयुक्त डिजिटल सूचना संसाधनों की पहचान करना।
2. शोधार्थियों की डिजिटल संसाधनों के प्रति जानकारी, पहुँच और उपयोग की आवृत्ति का मूल्यांकन करना।
3. डिजिटल पुस्तकालय संसाधनों से संबंधित शोधार्थियों की संतुष्टि का विश्लेषण करना।
4. संसाधनों के प्रभावी उपयोग में आने वाली चुनौतियों एवं बाधाओं को समझना।
5. डिजिटल सूचना सेवाओं की गुणवत्ता सुधार हेतु नीति-निर्माताओं एवं पुस्तकालयाध्यक्षों के लिए सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध का महत्व

यह अध्ययन इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह न केवल शोधार्थियों के व्यवहार और संतुष्टि का वैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है, बल्कि इससे संबंधित डिजिटल साक्षरता, तकनीकी पहुँच, तथा शैक्षणिक संसाधनों की उपलब्धता जैसे मुद्दों को भी उजागर करता है।

मध्यप्रदेश जैसे राज्य में, जहाँ कई विश्वविद्यालय अर्ध-शहरी और ग्रामीण परिवेश में स्थित हैं, वहाँ यह अध्ययन

नीति-निर्माताओं, पुस्तकालय प्रबंधकों और तकनीकी सेवा प्रदाताओं के लिए साक्ष्य-आधारित मार्गदर्शन प्रदान करेगा। इसके निष्कर्षों के आधार पर डिजिटल पुस्तकालय सेवाओं को अधिक सुलभ, उपयोगकर्ता-अनुकूल और प्रभावी बनाया जा सकता है।

इस प्रकार, यह शोध डिजिटल सूचना संसाधनों की प्रभावशीलता को बढ़ाने, शोधार्थियों की उत्पादकता में सुधार लाने और उच्च शिक्षा संस्थानों में नवाचार को बढ़ावा देने की दिशा में एक सार्थक प्रयास सिद्ध होगा।

मध्यप्रदेश का शैक्षिक परिप्रेक्ष्य

मध्यप्रदेश भारत का एक प्रमुख राज्य है, जहाँ उच्च शिक्षा का लगातार विकास हो रहा है। यहाँ अनेक विश्वविद्यालय, महाविद्यालय एवं शोध संस्थान कार्यरत हैं, जो विविध विषयों में उच्च शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। राज्य की भौगोलिक और सामाजिक विविधता के कारण यहाँ के विश्वविद्यालयों में डिजिटल संसाधनों की पहुँच, उपयोग और स्वीकार्यता में भी अंतर देखने को मिलता है। इस खंड में मध्यप्रदेश के प्रमुख विश्वविद्यालयों, उनकी डिजिटल अवसंरचना और डिजिटल नीति की स्थिति का अवलोकन प्रस्तुत किया गया है।

प्रमुख विश्वविद्यालयों का संक्षिप्त परिचय

1. डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

स्थापित : 1946

यह विश्वविद्यालय प्रदेश का एकमात्र केंद्रीय विश्वविद्यालय है और अनुसंधान केंद्रित गतिविधियों के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ ई-पुस्तकें, ऑनलाइन जर्नल्स, और शोधगंगा जैसे ओपन एक्सेस संसाधनों की पहुँच है। विश्वविद्यालय ने हाल ही में 'डिजिटल लर्निंग सेंटर' की स्थापना की है।

2. बरकतुल्लाह विश्वविद्यालय, भोपाल

स्थापित : 1970

राजधानी में स्थित यह विश्वविद्यालय डिजिटल संसाधनों के क्षेत्र में प्रगतिशील है। 'इन्फ्लिबनेट' (INFLIBNET) के एन-लिस्ट कार्यक्रम से जुड़ाव, ई-शोध ग्रंथालय, और पुस्तकालय में वाई-फाई आधारित ई-रीडिंग ज़ोन इसकी विशेषताएँ हैं।

3. देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर

स्थापित : 1964

यह विश्वविद्यालय 'शोधगंगा', 'यूजीसी-इन्फोनेट', और विभिन्न ई-जर्नल डाटाबेस से जुड़ा हुआ है। पुस्तकालय में KOHA लाइब्रेरी मैनेजमेंट सिस्टम का उपयोग होता है। विश्वविद्यालय में हाल ही में 'ई-रीडिंग हब' प्रारंभ किया गया है।

डिजिटल पुस्तकालय अवसंरचना का अवलोकन

मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में डिजिटल पुस्तकालय सेवाओं की अवस्थिति एकरूप नहीं है। जहाँ कुछ विश्वविद्यालयों में उन्नत डिजिटल लाइब्रेरी प्लेटफॉर्म, वाई-फाई नेटवर्क, और प्रशिक्षित पुस्तकालय स्टाफ उपलब्ध हैं, वहीं कई संस्थानों में अभी भी पारंपरिक व्यवस्थाएँ हावी हैं।

सुविधाएँ : अधिकांश विश्वविद्यालयों में ई-जर्नल्स, ई-बुक्स, डेटाबेस (जैसे JSTOR, Springer, IEEE Xplore) की सीमित या आंशिक पहुँच है।

तकनीकी ढाँचा : उच्च श्रेणी के विश्वविद्यालयों में डिजिटल रिपॉज़िटरी और क्लाउड आधारित सेवा मौजूद हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों के परिसर इससे वंचित हैं।

प्रशिक्षण और जागरूकता : छात्रों और शोधार्थियों के लिए डिजिटल संसाधनों पर कार्यशालाएँ या ई-गाइड प्रशिक्षण अभी भी अनियमित हैं।

विश्वविद्यालयों की डिजिटल नीति और संसाधनों की उपलब्धता

अधिकांश विश्वविद्यालयों ने सूचना प्रौद्योगिकी के बढ़ते महत्व को देखते हुए अपनी डिजिटल नीति तैयार की है, परंतु इसके क्रियान्वयन में समानता नहीं है।

नीतियाँ : डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय और देवी अहिल्या विश्वविद्यालय ने डिजिटल रिसोर्स यूज़ पॉलिसी, ओपन एक्सेस इनिशिएटिव और यूजर अवेयरनेस प्रोग्राम लागू किए हैं।

उपलब्धता : विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा समर्थित एन-लिस्ट, शोधगंगा, शोध सिंधु, एवं ई-शोध सिंधु जैसे संसाधनों की पहुँच तो है, परंतु उसका नियमित उपयोग एक चुनौती बना हुआ है।

चुनौतियाँ : धीमा इंटरनेट, तकनीकी स्टाफ की कमी, और सीमित डिवाइस एक्सेस जैसी समस्याएँ संसाधनों की उपलब्धता को बाधित करती हैं।

प्रमुख बिंदुओं की समीक्षा

डिजिटल सूचना संसाधनों की प्रभावशीलता का आकलन केवल उनकी उपलब्धता से नहीं, बल्कि शोधार्थियों की पहुँच, उपयोग की आदतें, तकनीकी बाधाएँ, संतुष्टि, एवं साक्षरता स्तर से जुड़ा होता है। मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में डिजिटल पुस्तकालय सेवाओं की समीक्षा करते समय निम्नलिखित बिंदुओं पर विस्तृत विश्लेषण आवश्यक है :

शोधार्थियों की डिजिटल संसाधनों तक पहुँच

मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में डिजिटल संसाधनों की पहुँच असमान रूप से विकसित है। शहरी विश्वविद्यालयों में शोधार्थियों को अपेक्षाकृत बेहतर इंटरनेट सुविधा, वाई-फाई सक्षम पुस्तकालय एवं कंप्यूटर लैब जैसी सुविधाएँ प्राप्त हैं, जबकि अर्ध-शहरी और ग्रामीण परिसरों में इन सुविधाओं की कमी स्पष्ट रूप से देखी गई है (चतुर्वेदी एवं शर्मा, 2022)। डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय जैसे केंद्रीय संस्थानों में 'ई-गेटवे' और रिमोट एक्सेस सुविधा उपलब्ध है, जबकि कई राज्य विश्वविद्यालयों में रिसोर्सेज केवल परिसर तक सीमित हैं।

उपयोग की आवृत्ति और उद्देश्यों का विश्लेषण

शोधार्थी डिजिटल संसाधनों का उपयोग मुख्यतः निम्नलिखित उद्देश्यों से करते हैं :

- शोध लेखन एवं संदर्भ अध्ययन
- शोध विषय से संबंधित अद्यतन शोध-पत्रों की खोज
- पाठ्यक्रम आधारित ई-सामग्री का अध्ययन
- शोध पत्रिकाओं में प्रकाशन हेतु स्रोतों की खोज

डिजिटल जानकारी प्राप्त करने में तकनीकी और संस्थागत बाधाएँ

तकनीकी बाधाओं में निम्न शामिल हैं :

- धीमा इंटरनेट एवं अनियमित नेटवर्क
- डिजिटल प्लेटफार्मों का जटिल इंटरफ़ेस
- उपकरणों की कमी (मोबाइल/लैपटॉप अनुपलब्धता)

संस्थागत बाधाएँ :

- पुस्तकालयों में प्रशिक्षित तकनीकी स्टाफ की कमी

- शोधार्थियों को संसाधनों के बारे में मार्गदर्शन न मिलना
- ई-रिसोर्सेज तक पहुँच की सीमित अवधि या परिसर-सीमा तक बंद सीमितता

यह स्पष्ट करता है कि संसाधनों की उपस्थिति मात्र पर्याप्त नहीं, सामर्थ्यपूर्ण पहुँच एवं सक्षम संचालन तंत्र भी अनिवार्य है (वर्मा, 2021)।

संतुष्टि के स्तर को प्रभावित करने वाले कारक

शोध में यह पाया गया है कि शोधार्थियों की संतुष्टि निम्नलिखित कारकों से प्रभावित होती है :

- सामग्री की प्रासंगिकता एवं गुणवत्ता
- प्लेटफॉर्म की उपयोगकर्ता-अनुकूलता
- तकनीकी सहायता की उपलब्धता
- स्रोतों की अद्यतनता और व्यापकता
- अविरल सेवा और सहज पहुँच

प्रशिक्षण, उपयोगकर्ता साक्षरता और नेटवर्क मुद्दों की भूमिका

डिजिटल संसाधनों के प्रभावी उपयोग में सूचना साक्षरता (Information Literacy) एक केंद्रीय भूमिका निभाती है।

अध्ययन दर्शाते हैं कि अधिकांश शोधार्थी डिजिटल संसाधनों की पूर्ण संभावनाओं से परिचित नहीं हैं। उन्हें उन्नत सर्च स्ट्रेटेजी, डेटाबेस नेविगेशन, उद्धरण शैली एवं प्लैगरिज़्म अवॉइडेंस जैसे क्षेत्रों में मार्गदर्शन की आवश्यकता है (INFLIBNET, 2021)।

प्रशिक्षण कार्यशालाओं और डिजिटल ओरिएंटेशन प्रोग्राम की नियमितता न होने से यह साक्षरता और भी कमज़ोर होती है। नेटवर्क की समस्या, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, शोधार्थियों को ऑनलाइन संसाधनों से जोड़ने में एक बड़ी बाधा बनी हुई है।

अंतराल और अनुसंधान की संभावनाएँ

डिजिटल सूचना संसाधनों के संदर्भ में मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में अब तक हुए अध्ययनों में कई महत्वपूर्ण बिंदुओं को संबोधित किया गया है, किंतु इसके बावजूद अनेक शोध अंतर (research gaps) शेष हैं, जो गहन अध्ययन की अपेक्षा रखते हैं। डिजिटल पुस्तकालयों की संरचना, उपयोगिता और शोधार्थियों की संतुष्टि के व्यापक मूल्यांकन हेतु निम्नलिखित अंतरालों और संभावनाओं को रेखांकित किया जा सकता है :

1. मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में क्षेत्रीय भिन्नताएँ

मध्यप्रदेश जैसे बड़े और विविधतापूर्ण राज्य में विश्वविद्यालयों की भौगोलिक स्थिति उनके डिजिटल संसाधनों की पहुँच और उपयोग को स्पष्ट रूप से प्रभावित करती है।

शहरी विश्वविद्यालयों (जैसे इंदौर, भोपाल) में संसाधन अपेक्षाकृत बेहतर हैं वहाँ इंटरनेट की गति, तकनीकी स्टाफ, और अवसंरचना मजबूत है।

अर्ध-शहरी या दूरस्थ विश्वविद्यालयों (जैसे रीवा, छिंदवाड़ा, सतना) में इन सुविधाओं की भारी कमी देखी जाती है।

इन क्षेत्रीय असमानताओं पर केंद्रित तुलनात्मक अध्ययन अभी सीमित हैं, जिससे नीति निर्माण में समावेशिता की कमी बनी हुई है।

2. ग्रामीण बनाम शहरी परिसरों में डिजिटल संसाधनों का उपयोग

ग्रामीण परिसरों में अध्ययनरत शोधार्थियों के समक्ष अनेक व्यवहारिक बाधाएँ आती हैं :

- सीमित इंटरनेट कनेक्टिविटी
- डिजिटल डिवाइस की अनुपलब्धता
- साक्षरता एवं प्रशिक्षण का अभाव

इसके विपरीत शहरी परिसर सुविधाओं की दृष्टि से अधिक सक्षम हैं। वर्तमान में इन दोनों श्रेणियों के उपयोगकर्ताओं के बीच डिजिटल विभाजन (digital divide) को लेकर गहन अध्ययन उपलब्ध नहीं है। ऐसे तुलनात्मक विश्लेषण न केवल संसाधनों की स्थिति स्पष्ट करेंगे, बल्कि यह दर्शाएँगे कि कौन-से परिसर डिजिटल रूप से 'समावेशी' बन रहे हैं और कौन पीछे छूट रहे हैं।

गहन उपयोगकर्ता अनुभव आधारित अध्ययन की कमी

अधिकांश अध्ययन केवल मात्रात्मक आँकड़ों (quantitative data) जैसे उपयोग की आवृत्ति, संसाधनों की उपलब्धता आदि पर केंद्रित हैं, जबकि शोधार्थियों के गुणात्मक अनुभव जैसे–

- उपयोग करते समय आने वाली समस्याएँ
- तकनीकी सहायता की स्थिति
- सामग्री की प्रासंगिकता और उपयोग में सहजता
- मनोवैज्ञानिक संतुष्टि पर अधिक विस्तृत और सघन अध्ययन का अभाव है।

फोकस ग्रुप डिस्कशन (FGD), केस स्टडी, और उपयोगकर्ता साक्षात्कार (user interviews) आधारित अध्ययनों की यहाँ अत्यधिक आवश्यकता है।

डेटा-संचालित निर्णय प्रणाली हेतु आवश्यकता

मध्यप्रदेश के अधिकांश विश्वविद्यालयों में डिजिटल पुस्तकालय सेवाओं के मूल्यांकन हेतु कोई नियमित डेटा संग्रह या विश्लेषण प्रणाली विकसित नहीं की गई है।

- उपयोगकर्ता लॉग, सर्च पैटर्न, डाउनलोड व्यवहार, समय-व्यय आदि की निगरानी करने वाले उपकरणों की कमी है।
- इससे नीति-निर्माता यह नहीं जान पाते कि कौन-से संसाधन उपयोग हो रहे हैं, किन पर निवेश की आवश्यकता है, और क्या सुधार जरूरी है।

निष्कर्ष

मध्यप्रदेश राज्य में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में डिजिटल पुस्तकालय संसाधनों का उपयोग धीरे-धीरे सशक्त होता जा रहा है, परंतु अब भी यह विकास समान रूप से संतुलित और प्रभावी नहीं हो पाया है। राज्य के प्रमुख विश्वविद्यालयों जैसे डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय, बरकतुल्लाह विश्वविद्यालय, एवं देवी अहिल्या विश्वविद्यालय ने यद्यपि डिजिटल सूचना संसाधनों की स्थापना एवं विस्तार की दिशा में ठोस पहल की है, फिर भी यह सुविधाएँ सभी शोधार्थियों तक समरूप रूप से नहीं पहुँच पा रही हैं।

मध्यप्रदेश में डिजिटल पुस्तकालय संसाधनों की वर्तमान स्थिति का सार

डिजिटल संसाधनों की भौतिक उपलब्धता में वृद्धि हुई है, किंतु उपयोगकर्ता-सुलभता और नियमित प्रयोग अभी भी चुनौतियाँ हैं।

अधिकांश विश्वविद्यालयों में ई-जर्नल, ई-बुक, शोधगंगा, और एन-लिस्ट जैसे प्लेटफार्म उपलब्ध हैं, किंतु इनका प्रभावी उपयोग एक सीमित वर्ग तक सीमित है।

प्रशिक्षण, तकनीकी सहायता, नेटवर्क और उपकरणों की सुलभता जैसे आधारभूत कारकों का अभाव, शोधार्थियों को डिजिटल सूचना संसाधनों से वंचित कर रहा है।

शोधार्थियों की संतुष्टि की सीमा और उसे बढ़ाने की संभावनाएँ

अध्ययन में यह सामने आया कि शोधार्थियों की संतुष्टि का स्तर मध्यम से कम है। संतुष्टि मुख्यतः निम्नलिखित बातों पर निर्भर करती है :

- संसाधनों की प्रासंगिकता और अद्यतनता
- तकनीकी बाधाओं का न होना
- प्रशिक्षित मार्गदर्शन और सहज इंटरफेस
- परिसर के बाहर से रिमोट एक्सेस की सुविधा

संतुष्टि को बढ़ाने की संभावनाएँ इस बात में निहित हैं कि

- उपयोगकर्ताओं को तकनीकी रूप से दक्ष बनाया जाए,
- नियमित रूप से डिजिटल साक्षरता कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ,
- और ई-संसाधनों की उपयोगिता को विषयवार प्रशिक्षण से जोड़ा जाए।

नीति निर्माताओं और पुस्तकालय प्रबंधन के लिए अनुशंसाएँ

1. सर्वसमावेशी डिजिटल नीति तैयार की जाए जो शहरी एवं ग्रामीण विश्वविद्यालयों की भिन्न आवश्यकताओं को संबोधित करे।

2. प्रत्येक विश्वविद्यालय में डिजिटल सूचना साक्षरता केंद्र (Digital Literacy Cell) की स्थापना की जाए।

3. संसाधनों की निगरानी हेतु डेटा-आधारित उपयोग विश्लेषण प्रणाली अपनाई जाए ताकि यह जाना जा सके कि कौन-से संसाधन अधिक उपयोगी हैं।

4. शोधार्थियों के लिए नियमित कार्यशालाएँ, यूज़र गाइड, और वन-टू-वन सहायता की व्यवस्था हो।

5. विश्वविद्यालयों को केंद्र सरकार एवं यूजीसी द्वारा चलाए जा रहे ई-संसाधन कार्यक्रमों से अधिक सक्रिय रूप से जोड़ा जाए।

समापन :

इस प्रकार यह अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि मध्यप्रदेश में डिजिटल पुस्तकालय संसाधनों का विकास हो रहा है, परंतु शोधार्थियों की संतुष्टि, पहुँच और उपयोगिता के संदर्भ में अभी भी कई संरचनात्मक और क्रियान्वयनात्मक सुधारों की आवश्यकता है। यह शोध न केवल इन अंतरालों को उजागर करता है, बल्कि एक व्यावहारिक समाधान का मार्ग भी प्रशस्त करता है जिससे उच्च शिक्षा में डिजिटल संसाधनों का अधिकतम उपयोग संभव हो सके।

संदर्भ

- विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC). (2023). राष्ट्रीय डिजिटल पुस्तकालय नीति.
- जैन, पी. एवं राजपूत, आर. (2022). डिजिटल पुस्तकालय संसाधनों की प्रभावशीलता का अध्ययनः मध्यप्रदेश के संदर्भ में. भारतीय पुस्तकालय विज्ञान समीक्षा, 60(2), 93'102.
- INFLIBNET Centre- (2021)- e-Resources Usage Trends in Indian Universities-

- गोस्वामी, एस. (2021). डिजिटल पुस्तकालय का विकास एवं उच्च शिक्षा में इसकी भूमिका, भारतीय पुस्तकालय विज्ञान जर्नल, 58(2), 114-121.
- विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC). (2020). एन-लिस्ट कार्यक्रम रिपोर्ट. नई दिल्ली : यूजीसी सूचना प्रकोष्ठ.
- शर्मा, आर. एवं मिश्रा, पी. (2022). मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में ई-संसाधनों की उपलब्धता एवं उपयोग का अध्ययन. शिक्षा और सूचना प्रौद्योगिकी, 6(1), 33-41.
- विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (न्ळब) रिपोर्ट : शोधगंगा कार्यक्रम, 2022
- इन्फ्लिबनेट केंद्र, गांधीनगर : एन-लिस्ट और ई-संसाधन प्लेटफॉर्म रिपोर्ट, 2021
- पांडे, एस. एवं चतुर्वेदी, ए. (2023). मध्यप्रदेश में डिजिटल पुस्तकालय सेवाओं का तुलनात्मक अध्ययन. भारतीय सूचना प्रौद्योगिकी जर्नल, 10(1), 45-52.
- चतुर्वेदी, ए. एवं शर्मा, एस. (2022). मध्यप्रदेश के उच्च शिक्षण संस्थानों में ई-संसाधनों की पहुँच एवं व्यवहार अध्ययन, शिक्षा जर्नल, 5(3), 67-74.
- वर्मा, पी. (2021). डिजिटल पुस्तकालयों में शोधार्थियों की संतुष्टि : एक तुलनात्मक विश्लेषण. भारतीय पुस्तकालय समीक्षा, 59(1), 39-46.
- INFLIBNET Centre- (2021)- User Orientation Report on e-Resources Access - Use, Gandhinagar-
- गुप्ता, एम. (2023). डिजिटल विभाजन और उच्च शिक्षा में असमानतारू मध्यप्रदेश का एक केस स्टडी विश्लेषण. शैक्षणिक अनुसन्धान पत्रिका, 11(2), 58-66.
- INFLIBNET Centre (2022)- Digital Resource Utilization Report- Gandhinagar
- पाण्डेय, आर. (2021). शोधार्थियों के डिजिटल व्यवहार का गुणात्मक अध्ययन. भारतीय पुस्तकालय शास्त्र, 9(1), 22-29

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

महिला सशक्तिकरण में मानवाधिकारों की भूमिका : एक अध्ययन

डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा
शोध निर्देशक : (सहायक प्रोफेसर)
कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

कविता
शोधकर्त्री :
कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

प्रस्तुत शोधकार्य में महिला सशक्तिकरण में मानवाधिकारों की भूमिका : एक अध्ययन किया गया है। इस शोधकार्य का प्रमुख उद्देश्य महिलाओं की वर्तमान समय में स्थिति का पता लगा कर, महिलाओं को सशक्त बनाने हेतु संवैधानिक प्रावधानों का अध्ययन करना तथा महिला सशक्तिकरण की वास्तविकता का अध्ययन करना है।

Key Word :- महिला सशक्तिकरण, मानवाधिकार।

प्रस्तावना

किसी भी समाज एवं राष्ट्र कि स्थिति को वहां की महिलाओं की दशा को देखकर ही आंका जा सकता हैं। नारी का आदर करना और उसके हितों की रक्षा करना भारतीय संस्कृति की सदियों पुरानी परंपरा रही है। यहां विद्या का आदर्श सरस्वती में, धन का लक्ष्मी में, पराक्रम का आदर्श महामाया में, सौन्दर्य का आदर्श रति में और पवित्रता का आदर्श गंगा के रूप में माना जाता है। इतना ही नहीं भारतीयों ने सर्वशक्तिमान् ईश्वर को भी जगजननी के रूप में देखा हैं। भारतीयों के सभी आदर्श नारी के रूप में देखने का मिलते है जो इस तथ्य के द्योतक है कि प्राचीन भारतीय नारी की स्थिति बहुत अच्छी थी। परंतु यह एक विडम्बना ही है कि प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक भारतीय नारी की स्थिति अत्यंत विरोधाभासी रही है।

तत्कालीन समाज मे महिला को एक पुत्री, पत्नी, माता एवं विधवा के रूप में समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। स्त्री माता के रूप में पिता से अधिक पूजनीय थी। यजुर्वेद में एक स्थान पर उल्लेख किया गया हैं कि ''जब तक मनुष्य लोग श्रेष्ठ विद्वानों, उतम विदुषी माता और प्रसिद्ध पदार्थो को प्राप्त नहीं होते, तब तक सुख की प्राप्ति और दुःखों की निवृति करने को समर्थ नहीं होते।'' भारतीय परम्परा में महिला का पत्नी के रूप में महत्वपूर्ण स्थान हैं। इस काल में महिला की पत्नी के रूप में महत्ता के बारे में ऋग्वेद में बताया गया हैं कि ''वास्तव में पत्नी की निष्ठा और पवित्रता केवल अग्नि से तुलना करने के योग्य है, शुद्ध अग्निदेव और पतिव्रता स्त्री ही पूजने योग्य हैं।'' गृहस्थ जीवन में पत्नी को पूर्णरूप से सम्मान प्राप्त था। पत्नी गृहस्थी का केन्द्र बिंदू थी। इस संदर्भ में अथर्ववेद में वर्णन मिलता हैं कि ''हे दुल्हन'' ईश्वरीय कृपा से वेद का ज्ञान तुम्हारे सामने हो, तुम्हारे पीछे हो, तुम्हारे मस्तिष्क के केन्द्र में हो और उसके अंत में भी हो। वेदों के ज्ञान को प्राप्त करने के बाद आप अपने जीवन का संचालन कर सकती हो। आप उदार हो, अच्छे स्वास्थ्य और भाग्य की अग्रदूत हो, और महान गरिमा के साथ रहती हो और आप अपने ज्ञान से अपनी पति का गृह प्रकाशित करो।'' अतः पत्नी के रूप में वह पति की सहोदरा थी, जिसमें वह पति के साथ प्रत्येक कार्य में स्वतंत्रापूर्वक सम्मिलित होती थी।

शोध अध्ययन का महत्व

आधुनिक काल में भारतीय समाज में व्याप्त कुरीतियों के खिलाफ आवाज उठने लगी। अनेक समाज सुधारक 19वीं शताब्दी में उत्पन्न हुये जिन्होनें हिंदू धर्म में सुधार कार्य कर देश में नई राष्ट्रीय चेतना जागृत करने के लिये अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य किये। इन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों के खिलाफ अपनी आवाज उठाई। इनमें राजा राममोहन राय द्वारा स्थापित ब्रह्म-समाज, स्वामी दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित आर्य-समाज आदि महत्वपूर्ण थे। राजा राममोहन राय द्वारा स्थापित ब्रह्म-समाज ने सामाजिक सुधार के क्षेत्र में विभिन्न कुरीतियों यथा बाल-विवाह, विधवा विवाह इत्यादि का विरोध किया गया। राजा राममोहन राय तत्कालीन समाज में प्रचलित सती-प्रथा के कटटर विरोधी थे। तत्कालीन समाज में धार्मिक अंधविश्वास पर आधारित 'सती-प्रथा' का उद्भव सारे उत्तर भारत में हो गया था जिसके विरूद्ध राजा राममोहन ने संघर्ष किया। राजा राममोहन राय ने अपने बड़े भाई जगमोहन की मृत्यु पर उनके भाई की पत्नी को उनकी चिता पर जलते हुये देखा तो इस घटना का प्रभाव राममोहन राय के हृदय पर ऐसे पड़ा कि उन्होनें इस प्रथा को समाप्त करने का दृढ़ निश्चय ले लिया। यह किंवदन्ती सही हो या न हो, पर राजा राममोहन राय इस बर्बर रीति के घोर विरोधी थे।

समस्या कथन :-

महिला सशक्तिकरण में मानवाधिकारों की भूमिका : एक अध्ययन

सीमांकन :-

प्रस्तुत शोधकार्य को भारत के राजस्थान राज्य के विभिन्न जिलों तक सीमित रखा गया है।

अनुसंधान प्रविधि :-

प्रस्तुत शोधकार्य में शोधकार्य से सम्बन्धित सूचनाओं को संग्रहित करने हेतु शोधकर्त्री द्वारा विश्लेषणात्मक, ऐतिहासिक, वर्णात्मक एवं तुलनात्मक शोध पद्धतियों का प्रयोग किया गया है। शोध के लिये प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही स्त्रोतों से सामग्री का चयन किया गया है।

शोध अध्ययन के उद्देश्य :-

1. महिलाओं की वर्तमान समय में स्थिति का अध्ययन करना।
2. महिलाओं को सशक्त बनाने हेतु संवैधानिक प्रावधानों का अध्ययन करना।
3. महिला सशक्तिकरण की वास्तविकता का अध्ययन करना।

निष्कर्ष

मानव सभ्यता के इतिहास में विभिन्न सभ्यताओं का उद्भव हुआ जिनमें कुछ का अस्तित्व रह गया एवं कुछ काल की गर्त मे समा गयी। उन्हीं सभ्यता में भारतीय सभ्यता विश्व की पुरातन एवं व्यवस्थित सभ्यता हैं जिसमें उच्च कोटि की सामाजिक एवं पारिवारिक व्यवस्था संरचित हैं। समाज की सबसे छोटी ईकाई 'परिवार' है, जहां से ही एक समृद्ध राष्ट्र के महत्वपूर्ण कारकों का संचालन होता हैं। पारिवारिक व्यवस्था में स्त्री एवं पुरूष की बराबर की भागीदारी समान महत्व रखती हैं। सृष्टि के सृजन एवं मानवीय सभ्यता के विकास में महिला एवं पुरूष दोनों का ही समान सृजनात्मक भूमिका रही है। भारतीय समाज की जनसंख्या का आधा भाग महिलाओं का हैं अतः भारतीय समाज को पूर्ण रूप से समझने के लिये समाज में महिलाओं की स्थिति भूतकाल में क्या थी, वर्तमान परिदृश्य में क्या हैं एवं भविष्य में कैसी होगी इसका ज्ञान होना भी आवश्यक है। अतः प्रस्तुत शोध के प्रथम अध्याय में महिला की स्थिति को जानने के लिये अध्याय को वैदिक काल, महाकाव्य काल, मध्यकाल एवं आधुनिक काल में विभक्त किया गया हैं। उपरोक्त कालों से संबधित साहित्य का अध्ययन करके महिलाओं की वास्तविक स्थिति को जानने का प्रयास प्रस्तुत अध्याय में किया गया। भारतीय परिप्रेक्ष्य में महिलाओं की प्रस्थिति में विभिन्न उतार-चढ़ाव आये हैं भिन्न-भिन्न कालों में उसकी भिन्न महत्ता थी। भारत में आदिकाल से ही महिला को सम्मान की दृष्टि

से देखा जाता आया हैं लेकिन दुर्भाग्य से हमारे मूल्यों में इतना ह्रास हो गया है कि बहुत से लोग महिला को एक हाड़-मांस का पुतला समझने लगे हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ. जयशंकर मिश्र, (1986), प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास (चतुर्थ संशोधित संस्करण), बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, पृ.सं. 417
2. डॉ एस.एल.नागौरी, (1992), मध्यकालीन भारत, 1000 ई. से 1761 ई. तक, (प्रथम संस्करण), श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, पृ.सं. 12
3. डॉ. किशोरी प्रसाद, (1981), मध्यकालीन उत्तर भारतीय सामाजिक जीवन के कुछ पक्ष, (प्रथम संस्करण), बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, पृ.सं. 154
4. डॉ. मनोहरसिंह राणावत (अनु.),(सं), (1996), मुहणोत नैणसी री ख्यात, (द्वितीय संशोधित संस्करण), नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, जयपुर, पृ.सं. 55
5. कार्तिक चंद्रदत्त, (1993), राजा राममोहन राय, जीवन और दर्शन, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.सं. 73

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

अगम बहै दरियाव : किसान जीवन का महाकाव्य

आन्नपूर्ण भोसले
शोध छात्रा, हिंदी विभाग, कर्नाटक राज्य अक्कमहादेवी महिला विश्वविद्यालय, विजयपुर, कर्नाटक
anubhosale83@gmail.com, Mob. : 9901969820
डॉ. अमरनाथ प्रजापति
शोध पर्यवेक्षक, सहायक आचार्य, हिंदी विभाग,
कर्नाटक राज्य अक्कमहादेवी महिला विश्वविद्यालय, विजयपुर, कर्नाटक

परिचय

भारतीय सभ्यता और संस्कृति के हृदय में यदि कोई कालजयी चरित्र बसा है तो वह है किसान। उसे मात्र एक व्यवसायिक घटक या कृषि क्षेत्र का कर्मी मानना उचित नहीं होगा। किसान वास्तव रूप में एक महाकाव्य का चरित्र है वह नायक जिसका जीवन अपने आप में एक बृहद और अनवरत गाथा है। यह गाथा है किसान की सहनशक्ति और संघर्ष की, जो सदियों से इस मिट्टी पर लिखा जा रहा है। वह सुबह के सूरज उगने से पहले अपने खेत खलिहान में जाकर अपने जीवन लडाई को आरंभ करता है। वह राम की बांती मर्यादा पुरुषोत्तम है। अर्जुन की तरह लाक्षधर है जो सिर्फ अपनी फ़सल को देख पता है। युधिष्टिर की तरह धर्म का पालन हार है, जो अपनी मेहनत से सभी का पेट भरने का प्रयास करता है। संतोखी, पहलवान, पांडे बाबा, भगवान पांडे जैसे कई किसानों कि संघर्ष और सहनशक्ति की गाथा है 'अगम बहे दरियाव'। इसका अर्थ है एक एसा अथाह दरिया (नदी) जिसका परवाह कभी रुकता नहीं। यह लेख इसी महाकाव्य की द्वंद्व का खोज करेगा, जहाँ किसान जीवन की गहरी त्रासदी और अद्‌भुत परक्रम का साथ साथ का बहाव है। प्रस्तुत उपन्यास में संतोखी और चक्रधारी के बीच खेत के लिए चल रही कानूनी संघर्ष है। उत्तम जीवन की आशा में ट्रेक्टर खरीदकर ऋण के जाल में फसकर आत्महत्या करने वाले पण्डे बाबा की गाथा है। उत्तम किसान पुरस्कृत पहलवान जो अपनी बेटी की शादी के लिए बेटे की पढाई के लिए पैसों का इंतजम न कर पाने की और अपने फसल को कम दाम में बेच आने की त्रासदी है। इसलिए लेखेक कहते है यह उपन्यास एक वर्ग, एक जाती, एक समुदाय की बात नहीं सभी वर्ग के लोग इसके हिस्सेदार है।

बीज शब्द : जाती, वर्ग, ऋण, किसान, फ़सल, आत्महत्या, परिवार, उचित मूल्य, बैंक।

बनकटा गाँव की सामाजिक जीवन, रीति-रिवाज, हास परिहास, वर्ग भेद, वर्णभेद, लोकगीत आदि समस्त भौतिक सांस्कृतिक एवं वास्तविकता इस में प्रस्तुत है। सवर्ण सत्ता के लिए छत्रधारी और विद्रोही जी के बीच में निरंतर लड़ाई चलती रहती है। साथ ही खेती को लेकर छत्रधारी और निम्न जाती के संतोखी के बीच में निरंतर क़ानूनी लड़ाई चलती रहती है। शोषित किसान संतोखी के जमीन को शोषणकारी छत्रधारी अपने नाम कर लेता है। इस विषय की क़ानूनी लड़ाई 28 साल तक अदालत में चलती है। दलित, भूमिहीन किसान अन्याय के खिलाफ कोर्ट में लड़ने का सहस दिखता है। हर बार अपने पैसे के बल से छत्रधारी कोर्ट का फैसला अपने नाम करवाता ही आता है। संतोखी भी जनता था कि न्याय व्यवस्था उसके

खिलाफ है। फिर भी वह कहता है "आपसे नहीं राजा,अन्याय से लड़ूँगा। लड़ूंगा नहीं तो दुनिया को कौन सा मुँह दिखाउँगा"?[1] यह संतोखी के व्यक्तिगत संघर्ष को सामूहिक चेतना और अस्मिता की लड़ाई में बदल देता है। हमारा कानून न्याय तो देता है किंतु समय बहुत लगाता है। इससे शोषित व्यक्ति अधिक थक जाता है। यह क़ानूनी संघर्ष को अगम बहै दरियाव में न्याय की धरा अगम है, जिसे पार करने के लिए संतोखी को पूरी जिंदगी झोंक देनी पड़ती है। जब 28 साल बाद संतोखी को न्याय मिला वह खेत जोतने चलता है तो छत्रधारी का भतीजा उसे बंदूक दिखाकर डरता है। संतोखी पुलिस थाने में विनती करता है और कहता है—"सरकार हम हर अदालत में जित चुके है, वे नाजायज कब्ज़ा कर रहे हैं एक बार हमारे ऊपर दया करें हुजुर"।[2] पुलिस तो पैसोंवाले अमीरों की जेब में होती है वे संतोखी को ही डांटकर भेज देते है। जीते हुए केस की कब्जे के लिए संतोखी अपनी कब्ज़ा दिलाने के अर्जी तहसील, पुलिसथाना, एस.डी.एम, मुख्यमंत्री तक को आवेदन पत्र भेजता है। फिर भी उसको कब्ज़ा नहीं मिलाता। आवेदन मिलने पर थाने का इंचार्ज बुलाकर कहता है— "तू एक दरखास्त और लिख दे कप्तान साहब के नाम, सिर्फ तुझे कब्जा दिलाने के लिए एक थाना और खोल दें"।[3] संतोखी को कानून जमीन पर हक़ तो दिलवाई। किंतु पुलिस उसको कब्ज़ा दिलाने में असमर्थ रही। संतोखी को न्याय मिला लेकिन जंगू जैसे भागी के न्यायालय में, जंगू संतोखी को जमीन का कब्ज़ा दिलाता है यह बात हमारे व्यवस्था पर लांछन है।

शिवमूर्ति ने अगम बहै दरियाव में भागवत पांडे का जीवन ग्रामीण भारत के कर्ज में डूबे किसान कि त्रासदी की मार्मिक स्थिति को दर्शाता है। भगवत पांडे अपने बेटे की इच्छा को पूर्ण करने के लिए कर्ज लेकर ट्रेक्टर खरीद कर देते है। उम्मीद थी खेती के बहार से काम आयेंगें तो थोड़ी आमदनी बडने में मदद मिलेगी। किंतु ट्रेक्टर खरीदने के बाद भी उनका जीवन नहीं बदला। किसान जीवन में कोई कुशी नहीं आई, इसके बजाय वह व्यवस्था के वित्तीय झाल में फासता चला जाता है। जिसका परिणाम पांडे बाबा को जमीन गवाने की स्थिति में लाकर खड़ा कर देता है। इसके आलावा अपने दूसरे बेटे को पुलिस में नौकरी दिलाने के लिए एक लाख की रिश्वत भी देते है। किंतु सरकार बदलने के कारण नौकरी भी गई और पैसे भी। इसी बीच बैंक की क़िस्त रुख जाती है। परिस्थिति इतनी भयानक आती है की क़िस्त न भर पाने के कारण तहशील से पांडे बाबा को काल कोठरी में बंद कर देते हैं। सरकार द्वारा ऋण माफ़ी की घोषणा हुई, किंतु गाईड लाइन के हिसाब से पांडे बाबा की ऋण की अवधि इसमें नहीं बैठी और ऋण माफ़ी नहीं हो सका। सरकारी योजनाएं होती ही ऐसे। आखिर व्यवस्था के शिखार पांडे बाबा की जमीन कुकी हो ही गई। उनकी जमीन माटी के मोल बिक गई। पुरखों की जमीन इस प्रकार नीलाम होता देखा तो सहा नहीं गया पांडे टूट गया। कर्ज और जमीन गवाने की विवशता तथा अवसाद ने पांडे बाबा को आत्महत्या के कगार पर ला खड़ा किया। उन्होंने उसी महुए के पेड़ से फाँसी लगा ली, जिस पर वे कभी बचपन में झुला करते थे। उनके हाथ में एक पुर्जी थी जिसमें लिखा था—

श्री गणेशाय नमः।।

" कुल कर्जा लिया था 4,00,000 रु.

खर्च लगा 18 000 रु.

नीलामी तक कुल जमा 5,91,280 रु.

बकाया शेष ऋण था 4,07,712 रु."[4]

यह आत्महत्या इस बात का सूचक था कि पांडे सीधे-सीधे फाँसी लगाना नहीं चाहते थे,लेकिन अवसाद और भ्रम की स्थिति में उन्हें अनैच्छिक रूप से फाँसी लग गई। पांडे बाबा की आत्महत्या ग्रामीण किसानों की दुखद समापन है। उनकी आत्महत्या यह सोचने पर मजबूर करता है कि क्या किसान मरकर भी इस कर्ज की समस्या समस्या से मुक्ति पा सके?

उपन्यास में पहलवान नामक एक और प्रमुख पात्र द्वारा शिवमूर्ति जी ने धैर्य से समस्या से छलांग मारने का प्रयास करवाते नज़र आते हैं। पहलवान बेटी के लिए वर खोज रहा है, बेटे को इंजीनियरिंग की पढ़ाई करा रहा है। जब मुंशी ने किस्त के लिए कार्यालय के सामने पहलवान को जबरन बिठाया तो उसे बहुत शर्मिंदगी महसूस होती है। जब वह अपना धान सरकारी क्रय केंद्र पर बेचने के लिए आता है तो केंद्र के कर्मचारियों और पहलवान के बीच में कहा सुनी हो जाती

है। "एक तो सरकार समर्थन मूल्य इतना कम तय करती है की किसान की लागत मूल्य नहीं निकलती फिर आप मनमानी कटौती करके लौटते हैं सरकार जब अपनी जेब भरने के लिए रुपये हमसे लेता है तो फिर पाँच किलो की कटौती क्यों करते है।"[5] पहलवान इंचार्ज के हर सवाल का सटीक से सटीक जवाब देता है।इसका फलस्वरूप यह होता है कि इंचार्ज उसके माल को घटिया साबित करके प्रति क्विटाल नौ किलो कटौती का प्रस्ताव देकर वहाँ से प्रस्थान कर जाता है। इस सन्निवेश को हम अलग अलग नजरिए से देखेंगे तो किसान राज्य और बाजार का सूक्ष्म दस्तावेज तैयार हो सकता है। बहुस्थारीय इस व्यवस्था में किसान के उत्पादन में अलग-अलग जगह पर कटौती की जाती है। जब कोई किसानों से सवाल जवाब करता है तो बदले में पाता है की उसके आस-पास खड़े किसान उनके आपमान देखकर मुस्कुराने लगते हैं।इससे यह साफ अभिव्यक्त होता है कि हम किसानों में ही एकता की कमी है। जब हमारे देश में एकता आती है तो जातीय और न्याय के मामलों में। इसी कारण अधिक किसान आंदोलन सफल के शिखर को छू नहीं पाते हैं।

इस उपन्यास में गन्ना किसान एवं चीनी मिल के बारे में विस्तृत चर्चा की गई है। चीनी मिल और किसान के बीच का टकराव इस वजह से होता है कि मिले किसानों का गन्ना तो लेती है किंतु पैसों का भुगतान करने में तीन-चार साल लगा देती है।जब किसानों को मूल्य देने का समय आता है तो हाईकोर्ट में अपनी याचिका दाखिल कर देते हैं।वजह यह था राजकीय लालच में सरकार ने किसानों के वोट बटोरने के लिए गन्ने का अधिक मूल्य तय कर दिया था। इतना अधिक मूल्य मिल मालिक देना नहीं चाहते थे। यही प्रकरण हाईकोर्ट में दर्ज होता है फैसला यह आता है कि "राज्य सरकार को गन्ने का मूल्य तय करने का अधिकार नहीं है उसका आदेश था कि केंद्र सरकार द्वारा निर्धारित मूल्य दिया जाए।"[6] इस पर पुनर्विचार करने के लिए समिति का गठन होता है कानून भी आम लोगों का साथ खेल खेलता है हाईकोर्ट के एक पीठ द्वारा आदेश होता है और दूसरी पीठ उसी आदेश को रद्द कर देती है। यह सब मिलाकर कह सकते है की किसान के लिए यह त्रासदी का समय होता है। मिल के मालिक भी किसानों के साथ तिकड़म खेल खेलते रहते है। पहले वह मिल से दूर गाँव के गन्ना उठाता है, किसानों को पर्ची बांटा जाता है, कई बार यह होता हैं की सैकड़ों बीघा गन्ना खेत में खड़ा रहता है बाद में मिल द्वारा या घोषणा होती है कि गन्ना खरीदने से इनकार करती है क्योंकि गर्मी में ग्लूकोज की जगह सुक्रोस की उत्पत्ति अधिक होती है। इससे चीनी का उत्पादन कम हो ऐसे हालात में किसान उस गन्ने को दूसरे उत्पादन में भी उपयोग नहीं कर पाता और गन्ने को जला देता हैं।"तैयार फ़सल में आग लगाना जैसे जवान बेटे के सर पर मोर बाँधने के मौके पर उसे कफन ओढ़ाना .... लेकिन करना पड़ा रहा है।"[7] गन्ना पैदा करने वाले किसानों की इस दुर्गति पर पहलवानीन का मत कुछ इस प्रकार था आगे से गन्ना बोना बंद, लू और धूप में गड़ाई, सिंचाई करिए, कटाई करिए, बुआई करिए। मज़दूरों से मिन्नत करिए, पर खरीद सेंटर पर ट्रॉली लेकर भूखे-प्यासे दो-चार दिन काटना भुगतान के लिए धरना प्रदर्शन करना लाठी खाना तैयार फसल को खेत में जलान; नहीं पालना ऐसे जी का जंजाल! धान, गेहूं, बोकर ही राजी रहेंगे।"[8]

'अगम बहै दरियाव' में किसानों की समस्याओं की विभिन्न पहलुओं के माध्यम से दर्शाया गया है। खेलवान नामक किसान के माध्यम से यह बात सामने लाने का प्रयास करते है किसानों के दुःख की सबसे बड़ा कारण है उनकी उत्पन्न का सही मूल्य न मिलना। सरकार द्वारा तय किया गया समर्थन मूल्य अक्सर किसान की लागत से कम होता है, जिसके कारण खेती घाटे का पेशा बन जाती है। किसान की मेहनत से पैदा किया गया अनाज गल्ला व्यापारी के लिए अमीरी का कारण बनता है, जबकि किसान स्वयं गरीब होता जाता है। पूंजीपति व्यवस्था और गल्ला व्यापारीयों की साख बनी है। वह राजनीती और नौकरशाही किसानों को केवल 'वोट बैंक' और 'दुधारू गाय' की तरह देखती है। धान खरीदी केंद्र पर किसानों का सीधा शोषण दर्शाया गया है। उनसे पल्लेदारी वसूली की जाती है और प्रति क्विन्ताल दस्तूरी (अवैध कटनी) काटी जाती है। यह दिखता है कि किस प्रकार छोटे से छोटे हिस्सों में भी किसान ठगा जा रहा है। इसका शिखार स्वयं पहलवान भी है।

संक्षेप में कहे तो 'अगम बहै दरियाव' भारतीय ग्रामीण जीवन के एक बड़े हिस्से का आईना है। जहाँ किसान एक त्रासदी झेलता हुआ नायक के रूप केंद्र में आता है। जो किसान विरोधी सरकारी नीतियों, पूंजीवादी शोषण और पुरानी सामंती तथा जातिगत संरचनाओं के जटिल जाल में फँसा हुआ है। उपन्यास किसानों की आत्महत्या, उनके सम्मान की कमी, रिसाव जैसे

वर्तमान समस्याओं की जड़ों को भी टटोलता है। हमारे न्याय व्यवस्था पर भी प्रश्न उठाता हुआ नज़र आता है। किसानों के प्रति समाज का भी अपना दायित्व है। इसीलिए जनता भी किसानों एवं उनके उपजों की और उदासीन भाव प्रदर्शन न करके उनकी सहायता करने का कार्य करें किसानों को मिलों द्वारा तुरंत ही उत्पादन मूल्य का भुगतान की व्यवस्था होना चाहिए। किसानों द्वारा खरीदे गए कृषि सहायक उपकरणों को कम ब्याज पर बैंक द्वारा लोन देने की व्यवस्था जारी होनी चाहिए। यह अत्यंत आवश्यक है ताकि और कोई भागवत पांडे आत्महत्या ना कर सके। जिस प्रकार अगम बहै दरियाव.... किसानों के जीवन में संकटों का बहाव निरंतर चलता रहा उसकी जगह पर उनके सही समर्थन मूल्य देकर खुशियों का बहाव बहेगा तो उत्तम होगा।

संदर्भ ग्रंथ

1. शिवमूर्ति- अगम बहै दरियाव, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, दूसरा संस्करण, 2024 पृ.सं. 17
2. वही – 15
3. वही - 296
4. वही– 373
5. वही - 510
6. वही - 533
7. वही - 539
8. वही– 415
9. डॉ. प्रवेश कुमार त्रिपाठी(सं)– शिवमूर्ति एक मूल्यांकन,विकास प्रकाशन, कानपुर
10. नरेश गोस्वामी- अगम बहै दरियाव सत्ता की संरचना का आख्यान, समालोचना, 13 सितंबर 2024
11. P.C. Bodhµ FARMERS' SUICIDES IN INDIA, A POLICY MALIGNANCY
12. शिवमूर्ति– आखरी छलांग, नया ज्ञानोदय पत्रिका, जनवरी 2008
13. शिवमूर्ति– पुस्तक समीक्षा अगम बहे दरियाव 28 जुलई 2024

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

भारत में महिला अधिकार विधान एवं संरक्षण : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा
शोध निर्देशक : (सहायक प्रोफेसर)
कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

सरिता पूनिया
शोधकर्त्री :
कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

प्रस्तुत शोधकार्य में भारत में महिला अधिकार विधान एवं संरक्षण सम्बंधी विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। प्रस्तुत शोध का मुख्य उद्देश्य भारत के प्राचीनकाल, मध्यकालीन युग एवं आधुनिक युग में महिलाओं की क्या दशा रही का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है तथा भारतीय संविधान में प्रदत्त मौलिक अधिकारों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है।

Key Word : महिला अधिकार, विधान एवं संरक्षण।

प्रस्तावना

मानव अधिकार की चर्चा का आरम्भ मानव अधिकारों की व्याख्या से कर सकते है, जहाँ मानव अधिकार व्यक्ति की उन स्थितियों की घोषणाएं है जो उसके जीवन के लिए ही आवश्यक नहीं है वरन उसके सर्वांगीण विकास के लिए भी अनिवार्य भी है। यह मानव अधिकारों की व्यापक व्याख्या है जिसमें उसके जीवन के अधिकारों से जुड़े प्रश्न तो है ही, साथ में उन आवश्यकताओं का उल्लेख भी है जो उसके विकास के लिए आवश्यक है जिनमें स्वास्थ्य, शिक्षा और जीवन की मूलभूत आवश्यकताएं सम्मिलित हैं।

मानव अधिकार मानव को भले जन्म से ही प्राप्त हो किन्तु मानव अधिकार का मार्ग मनुष्य को बिना ज्ञान के इस अतिश्योक्ति जैसा होगा कि ईश्वर तो है किन्तु दिखाई नहीं देता। दुनिया का अस्तित्व प्रकृति की संरचना व इसके निर्माण से है संसार में चौरासी लाख योनियाँ है जिसमें से मानव मात्र ही ऐसा प्राणी है जिसे सोचने-समझने और ज्ञान जैसी अद्भुत शक्ति से नवाजा गया है।

शोध अध्ययन का महत्व

भारतीय संविधान में महिलाओं को एक नागरिक के रूप में कई मौलिक अधिकार प्रदान किये गये। लेकिन प्रदत्त मौलिक अधिकारों से कया महिलाओं की स्थिति में सुधार हुआ है या नहीं या फिर महिलाओं की स्थिति को सुधारने हेतु प्रदत्त मौलिक अधिकारों में संशोधन की आवश्यकता है। इसी तथ्य को दृष्टिगत रखते हुए प्रस्तुत शोधकार्य का महत्व दृष्टिगोचर हो रहा है।

समस्या कथन :-

भारत में महिला अधिकार विधान एवं संरक्षण : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

अनुसंधान प्रविधि :-

किसी भी क्षेत्र में अनुसंधान का कार्य करने के मार्ग में सबसे विशिष्ट समस्या ''अध्ययन विषय चयन'' की है। यही वह मार्मिक स्थल है जहाँ निर्देशक के कुशल निर्देशन की आवश्यकता होती है।

एफ. एस. सी. नार्थराय ने ठीक कहा है - ''अनुसंधान कार्य उस जहाज की तरह है जो कि एक टूर के गंतव्य स्थल की ओर जाने के लिए बन्दरगाह से चलता है, परन्तु यदि आरम्भ में ही दिशा निर्धारण के सम्बन्ध में थोड़ी सी भूल हो जाए तो उसके भटक जाने की सम्भावना अधिक रहती है चाहे उस जहाज का निर्माण कितनी कुशलता से क्यों न किया गया हो उसका कप्तान कितना ही योग्य क्यों न हो। विषय के चुनाव के लिए अनुसंधानकर्ता की रूचि एवं उसकी उपयोगिता के सम्बन्ध में भी सचेत रहना चाहिये।''

शोध अध्ययन के उद्देश्य

(1) प्रस्तुत शोध का उद्देश्य इस धरती पर मानवता के उदय के प्रमाणीकरण के अवशेष से लेकर भारतीय संविधान में मानव अधिकार के संवैधानिक एवं सामाजिक संरक्षण को मद्देनजर रखते हुए भारत में महिलाओं की ऐतिहासिक एवं आधुनिक समय में विभिन्न क्षेत्रों में मिले संरक्षण का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया करना है।

(2) भारत के प्राचीनकाल, मध्यकालीन युग एवं आधुनिक युग, इन युगों में महिलाओं की क्या दशा रही का विश्लेषनात्मक अध्ययन करना है।

निष्कर्ष

प्रस्तुत शोध के विश्लेषणात्मक अध्ययन में मानव को गरिमापूर्ण एवं सम्मानीय जीवन का अधिकार जीने के लिए मानव अधिकारों के प्रति जागरूकता पर जोर दिया है। मानव अधिकार का अर्थ, उद्‌भव, विकास से लेकर राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के समस्त पहलुओं का विवेचन किया गया है।

मानव तथा नागरिकों के फ्रांसीसी घोषणा, मैग्नाकार्टा, स्वतन्त्रता की अमेरिकी घोषणा में भी इन अधिकारों का अस्तित्व पाया जाता है। ये अधिकार प्राचीनकाल से स्थापित मूल्यों के ही प्रतिबिम्ब है जिन्हें भारत एवं विश्व के सभी देशों के संविधान, दस्तावेजों एवं समझौतों में सिविल एवं प्रसंविदा, अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, अमेरिकी एवं अफ्रीकी दस्तावेजों यूरोपियन अभिसमयों में भी इन अधिकारों की झलक देखी जा सकती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. रत्तू, कृष्ण कुमार, भारतीय दलित और मानवाधिकार, बुक एनक्लेव, जयपुर, 2002, पृष्ठ - 1
2. नेमा, जी.पी. एवं शर्मा, के.के., मानवाधिकार सिद्धान्त एवं व्यवहार, जयपुर, कॉलेज बुक डिपो, नई दिल्ली, 2004, पृष्ठ - 69, 77
3. चतुर्वेदी, अरुण, भारत में मानव अधिकार, जयपुर, पंचशील प्रकाशन, 2005, पृष्ठ - 01, 02, 21
4. एच.ओ. अग्रवाल, मानव अधिकार, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद, 2008, पृष्ठ - 9, 8
5. सिंह, कृष्ण वल्लभ, मानवाधिकारों के आयाम, पब्लिकेशन्स प्राइवेट लि0 लक्ष्मीनगर, दिल्ली, 2006, पृष्ठ - 7

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

मोहनदास नैमिशराय का उपन्यास 'महानायक बाबासाहब डॉ. आम्बेडकर' डॉ. बाबासाहब आंबेडकर- संघर्षशील महानायक

डॉ. विजय सदामते
हिंदी विभाग, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर (महाराष्ट्र)
मो. नं.- 9552409452

मोहनदास नैमिशराय रचित 'महानायक बाबासाहब डॉ. आम्बेडकर' जीवनपरक महाकाव्यात्मक उपन्यास है। प्रस्तुत उपन्यास का प्रकाशन सन् 2012 में धम्म चौरिटेबल ट्रस्ट, दिल्ली द्वारा प्रकाशित प्रस्तुत उपन्यास का केंद्रीय केंद्रीय है– डॉ. बाबासाहब अम्बेडकर। महाकाव्य के उदात्त एवं महानायक की भाँति इस विवेच्य उपन्यास का नायक धीरोदात्त एवं कालजयी चरित्र है। सही अर्थ में मोहनदास नैमिशराय जी ने महानायक के रूप में वैश्विक प्रतिष्ठा प्राप्त की है। संपूर्ण उपन्यास में विवेच्य उपन्यास का शीर्षक तथा कथानायक को दि गई "महानायक" की उपाधि की सार्थकता बल्कि उनके महाकर्तृत्व के कितने ही उदाहरण तथा साक्ष्य पाये जाते है।

विवेच्य उपन्यास की शुरुआत भगवान बुद्ध के निम्नलिखित धम्मपद से होता है–

"खुशबू
फूलों की सुगंध
केवल उधर जाती है,
जिधर
हवा ले जाती है।
परंतु
अच्छे कामों की सुगंध
उधर भी जाती है,
जिधर की हवा है,
और उधर भी
जिधर की हवा नहीं।"

वस्तुतः उपर्युक्त धम्मपद में महानायक के अद्वितीय एवं अपूर्व कार्य तथा किर्ति का उद्घोष है। वास्तव में डॉ. बाबासाहब आंबेडकर मानव जाति के मुक्तिदूत थे। सदियों से पीड़ित, दमित, शोषित आम आदमी के मसीहा थे। धम्मपद से प्रारंभ होनेवाला यह उपन्यास 'महानायक' बाबासाहब डॉ. आम्बेडकर जाति, धर्म, पंथ, संप्रदाय, नस्ल तथा वर्गों के सीमाओं को लांघता हुआ महानायक के कार्य क्षेत्र को प्रेषित करता है। यह महानायक अपने कार्यों की खुशबू से मानो हजारों वर्षों से पीड़ित, शोषित दमित और महार जाति के गौरवशाली इतिहास को समाज के सामने जीवंत रूप में दृश्यमान करता है। डॉ. बाबा साहब आम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल 1891 को महू छावनी (मध्यप्रदेश) में हुआ, जिसका नाम भीमराव रखा गया। उनके पिताजी

रामजी सकपाल सूबेदार चौदह वर्ष तक हेडमास्टर रहे फिर वे फौज में भती हुए। फ़ौज में रहते हुए किसी दलित की उस दौर में सबसे बड़ी उपलब्धि थी। पिता इसी उपलब्धि प्रतिबद्धता तथा ज़िम्मेदारी ने डॉ. आंबेडकर को हिमालय से भी ऊँचा बना दिया।

डॉ. आम्बेडकर आरंभ से ही स्वाभिमानी थे। दलित जाति में मैट्रिक होने वाले वे पहले विद्यार्थी थे। डॉ. आम्बेडकर ने तीन महापुरुषों को अपना आदर्श एवं प्रेरणा स्रोत बताया है। उनसे पहले कबीर, दूसरे महात्मा ज्योतिबा फुले और तीसरे थे भगवान गौतम बुद्ध। कबीर ने उन्हें भक्तिभावना प्रदान की, महात्मा ज्योतिबा फुले ने उन्हें ब्राह्मणवाद के खिलाफ़ संघर्ष करने के लिए प्रेरित किया तथा शिक्षा और आर्थिक विकास का संदेश भी दिया। भगवान गौतम बुद्ध से उन्हें मानसिक और दार्शनिक आधार मिला, उन्हीं से दलितों के उद्धार का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। यही वजह है कि डॉ. बाबासाहेब आंबेडकर ने आगे चलकर बौद्ध धर्म का स्वीकार किया साथ ही लाखों दलितों का सामूहिक धर्म परिवर्तन किया।

हिंदू धर्मग्रंथ का विधिवत अध्ययन से आंबेडकर जी ने अन्य समाज और अपने समाज की समानताओं और असमानताओं का गहराई से अध्ययन किया। उन्होंने वर्ण और जाति के आधार पर समाज में व्याप्त अस्पृश्यता तथा व्यवहार के पीछे के कारणों का एवं मानसिकताओं की खोज की। उच्चवर्ग के समान दलितों को समान अधिकार दिलाने के उद्देश्य से हिंदू समाज से जातीय ऊँच नीचता, अस्पृश्यता खत्म करने की मुहिम चलाई। धर्म की दुहाई देकर दलितों का शोषण किया जा रहा था। वर्णव्यवस्था एवं जाति भेद की जड़ 'मनुस्मृति' ग्रंथ का 25 दिसंबर1927 में दहन कर दलितों के संघर्ष के इतिहास में अविस्मरणीय प्रसंग को दर्ज किया है। मनुस्मृति के स्थान पर एक नया धर्म ग्रंथ चुनने की मांग की गई थी। एक और डॉ बाबासाहब अम्बेडकर हिंदू धर्म एवं धर्म ग्रंथों को ही दलितों के बहिष्कृत करने का एकमात्र कारण सिद्धि करते हैं वहीं दूसरी ओर गाँधी जी हिंदू धर्म और धर्मग्रंथों को दासभाव से स्वीकार करते हैं। गाँधीजी आरंभ में हिंदू धर्म और वर्ण व्यवस्था की कट्टर समर्थक थे यानी लकीर के फकीर थे। उन्होंने कहा भी; "मैं पहले हिंदू बाद में भारतवासी" लेकिन बाबासाहब ने कहा था, "वे पहले ही भारतवासी हैं और बाद में मैं भी" वास्तव में डॉ अंबेडकर राष्ट्रों को ही सर्वोपरि मानते थे। वे मानते थे कि देश है तो हम सब लोग है। यदि देश नहीं होगा तो हम कहाँ होंगे।

हिंदू धर्म और वर्णव्यवस्था के बारे में एक स्थान पर विरोधभासी बल्कि विडंबनापूर्ण वर्णन करते हुए मोहन दासनैमिशराय रॉय लिखते हैं की "जहाँ कुएं की मुंडेर पर कुत्ता तो पेशाब कर सकता है, पर उसे कुएं से दलित पानी नहीं खींच सकते थे। वही नाइ जिसका धर्म कुत्ते, बिल्ली, भेड़, भैस के बाल काटने में भ्रष्ट नहीं होता इस था, मात्र अपने उउस्तरे को किसी दलित के बालों से छुआ भी दे तो पल भर में उसका धर्म भ्रष्ट हो जाता था। ऐसा रहा हिंदू धर्म" वास्तव में यह उपन्यास इन सभी समस्याओं से रूबरू होने वाले महानायक की कथा है, जिसके सिर पर एक दिन स्वतंत्र भारत के संविधान लिखने की जिम्मेदारी दी गई। भारत का संविधान लिखकर करोड़ों भारतवासियों के मुक्ति दूत तथा महानायक कहलाई। वास्तव में प्रस्तुत उपन्यास में जितने की विचार उपदेश तथा संदेश आए हैं वे सभी उस महानायक के हैं जो कभी भी न सत्ता का लालची रह और न ही धनाष्ठ वर्ग का चटूकार बना। यह विचार उस महापुरुष के हैं, जिसका संघर्ष जीवन दलितों, पिछड़ों तथा महिलाओं के स्वतंत्रता, समानता के लिए समर्पित रहा है। इन सभीजनों के मानवीय अधिकारों को प्राप्त करने के लिए आजीवन संघर्ष करता रहा है।

डॉ. बाबासाहब अंबेडकर जी के अपने निजी अनुभव कम दर्दनाक नहीं है। पिता और भाई मृत्यु के बाद जब सारी जिम्मेदारी उनके कंधों पर आ पडी। उन्होंने कई स्थानों पर नौकरी के लिए आवेदन दिया लेकिन, एक दलित को भला कौन नौकरी देता। सिर्फ कहने को अंग्रेजों का शासन था, लेकिन चलती सवर्ण जातियों की थी। अंग्रेजों के शासन में वे गुलाम भी थे और दरबारी भी। दलित समाज इन गुलामों के गुलाम थे। डॉ. बाबसाहब आंबेडकर के विचारों से दलितों का इस प्रकार का स्तरीकरण कर दिया गया है कि वे अपनी अमानवीय अवस्था का कभी कोई शिकवा तथा शिकायत ही नहीं करते। समाज के अन्य वर्गों की तरह अपनी हालत सुधारने के लिए उनपर यह बल डालने डालने के लिए कि उन्हें भी मनुष्य समझा जाए, उनके साथ भी मानवीयता बरती जाए, उनके साथ भी इंसानों जैसा व्यवहार किया जाए। यह बात छोड़िए दलितों ने अपनी

हालत में सुधार लाने कि कल्पना तक नहीं की। दलितों के दिलो-दिमाग में गुलामी इतनी गहराई से घर कर बैठी थी कि उनके दिमाग यह कभी नहीं सूझता कि वे अपनी ऐसी अमानवीय स्थिति में बदलाव एवं परिवर्तन ला सकते है। इस उपन्यास का महानायक जनमानस से न्यूनताबोध तथा मानसिक गुलामी दूर करने की सक्रीय पहल की। सच में डॉ. बाबासाहब आंबेडकर स्फूर्तिदायी और ऊर्जावान व्यक्तित्व थे।

भारतीय समाज में वर्णव्यवस्था और जातिव्यवस्था इतनी व्याप्त थी कि कोई भीं दलित व्यक्ति किसी भी सवर्ण हिंदू के सामने से गुजर नहीं सकता था। यहाँ तक कि दलित की परछाई पड़ने से सवर्ण हिंदू अपवित्र हो जाता। पहली बार डॉ. आंबेडकर के प्रयासों से पूरे विश्व के लोगों को जानकारी मिली कि भारत में ऐसे भी लोग रहते है, जिन्हें देखना, छूना और यहाँ तक उनकी परछाई भी पड़ जाना पाप माना जाता है। ऐसी विषमतवादी समाज में समता, बंधुता स्थापित करने के लिए महानायक ने प्रयास किए। छत्रपती शहू महाराज ने डॉ. आंबेडकर के बारे में कहा था कि "मेरा विश्वास है कि डॉ. आंबेडकर तुम्हारा उद्धार किए बगैर नहीं रहेंगे और एक वक्त ऐसा आएगा जब वे पूरे देश के नेता होंगे।"

डॉ. आंबेडकर एक सजग एवं दायित्वशील पत्रकार रहे है। उनका 'मूकनायक' समाचार पत्र समाज में जागृति लाने के लिए काफी योगदान देता रहा। इसमें उन्होंने हिंदू समाज के बारे में लिखा है– "हिंदू समाज एक मीनार है और हर एक जाति एक-एक मंजिल है। लेकिन ध्यान देने की बात है कि इस मीनार में सीढ़ियाँ नहीं है। एक मंजिल से दूसरी मंजिल तक जाने का रास्ता नहीं है। जिस मंजिल पर आपको जन्म होता है, उसी मंजिल पर आपको मारना है।" अंग्रेजों कि गुलामी से दलितों को जितना कष्ट होता था उससे कई अधिक गुना कष्ट सवर्णों कि गुलामी से होता था। डॉ. बाबासाहब आंबेडकर जी ने 17 मई के 'बंबई प्रदेश बहिष्कृत परिषद' के अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण देते हुए कहा था- "राष्ट्र कि दासता और अस्पृश्यजनों की गुलामी की तुलना करते हुए सिद्ध होता है कि राष्ट्र कि गुलामी से अस्पृश्य समाज की गुलामी हालत बहुत ज्यादा दर्दनाक है।" डॉ. आंबेडकर तर्कशुद्ध दलीले आमजन में अंजन डालने का कम करती है।

डॉ. आंबेडकर तर्कशुद्ध विचारों के प्रभावी वक्ता थे। धर्म परिवर्तन विषयक उनके विचार इसकी पुष्टि कराते है। गांधीजी से स्वयं उन्होंने कहा था–"जिस धर्म में मुझे तुच्छ और पतित माना जाता हो, उस धर्म को मैं अपने लिए अपने गौरव क्यों मानूँ?" उन्होंने घोषणा की- "मैं हिंदू पैदा अवश्य हुआ हूँ परंतु हिंदू के रूप में मरूँगा नहीं।" हर एक को यह स्वीकार स्वीकार करना पड़ेगा कि धर्म परिवर्तन के अतिरिक्त कोई चारा नहीं। जिस प्रकार भारत को स्वराज्य या स्वाधीनता की आवश्यकता है उसी प्रकार अछूतों को हिंदू धर्म त्यागने की आवश्यकता है। धर्म मनुष्य के लिए है, मनुष्य धर्म के लिए नहीं। तुम इस संसार से संगठित और सफल होना चाहते हो तो जो धर्म तुम्हें इंसान ही नहीं समझता या तुम्हें पीने योग्य पानी भी लेने नहीं देता या तुम्हें अपने धर्म स्थानों पर प्रविष्ट ही नहीं होने देता, वह धर्म कहलाने का अधिकारी नहीं है। जो धर्म तुम्हें शिक्षा से वंचित करता है और तुम्हारी सांसारिक जीवन में बाधा डालता है, उसे धर्म कहा ही नहीं जा सकता। जो धर्म अपने अनुयायियों को पशुओं के साथ छूने की आज्ञा तो देता है, परंतु पुरुषों के स्पर्श को पाप और अधर्म कहता, वह धर्म नहीं अपितु एक उपहास है, हास्यास्पद है। भारत का संविधान लिखनेवाले डॉ. बाबासाहब आंबेडकर के इन विचारों से अनेक दलितों को प्रभावित किया और प्रेरित भी।

डॉ. बाबासाहब आंबेडकर दलित जाति के हित एवं कल्याण में हर समय सजग रहते थे। पश्चिम पाकिस्तान से भारत आये अस्पृश्य शरणार्थियों को, पूर्व पंजाब में मुसलमानों द्वारा छोड़ी गई जमीन दी जाए, यह सुझाव डॉ. बाबासाहब ने नेहरू को दिया था। पंजाब के दलित लोगों की समस्याओं पर, उनकी औरतों की इज्जत पर होनेवाले आत्याचारों पर बाबासाहब ने उन्हें करारा जवाब दिया था।

14 अक्तूबर, 1956 का दिन डॉ. आंबेडकर ने बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने के लिए निश्चित किया था। वे बौद्ध धर्म को इसलिए स्वीकार कर रहे हैं कि भारतीय सभ्यता का ही अंग है। मैंने इस बात ध्यान रखा है कि मेरे धर्म परिवर्तन से भारत भूमि के इतिहास और संस्कृति, परम्पराओं को कोई हानि न पहुँचे। भारतीय बौद्ध धर्म के पुनजीवन के इतिहास में वही दिन स्वर्ण अक्षरों में दर्ज हुआ था। यानि भारतीय अस्पृश्यों कि मुक्ति का दिन। बौद्ध धर्म के इतिहास में एक ही दिन पाँच लाख

मानव सतधम्म की शरण में आये। वास्तव में यह रक्तहीन सामाजिक क्रांति थी, जिसने जाति-विहिन समाज स्थापित किया, जिसमें चतुर्वर्ण्य जाति-व्यवस्था और अस्पृश्यता को कोई स्थान नहीं था। यह एक अभूतपूर्व रक्तहीन राजक्रांति थी, जिसके प्रणेता डॉ. आंबेडकर जी थे।

डॉ. आंबेडकर जी एक युगद्रष्टा एवं युगसृष्टा थे। नागपुर में बौद्ध धर्म की दीक्षा लेने के बाद अपने अपने गाँव आये नवदीक्षितों ने मरे हुए जानवर फेंकना, उनका मांस खाना, बंद कर दिया। विदर्भ में कोतवाली काम को छोड़ दिया। लोगो ने अपने घर की देवी देवताओं की मूर्तियाँ, पोथियाँ, मालाएँ आदि सब घर से बाहर निकालकर फेंक दिये। नवदीक्षितों ने सवर्णो की गुलामी के प्रतिक्रिया स्वरूप सभी काम करना छोड़ दिया। जैसे—मौत की खबर पहुंचाना, सवर्ण हिंदू के घरों में लकड़ी फोड़ना, उनके शादी ब्याह में सिर्फ भोजन के लिए काम करना, त्योहारों के अवसर पर उनके घरों में भोजन मांगने जाना आदि। वास्तव में डॉ. आंबेडकर के विचारों से प्ररित होकर दलित समाज में परिवर्तन हुआ। वे मुक्त हुए अमानवीय प्रथाओं और परंपराओं से हीन एवं तिरस्कृत कामों से लोगों को मुक्ति दिलाई।

विवेच्य उपन्यास के महानायक के जीवन- कार्य तथा विचारधारा विषयक "दलाई लामा" के विचार इस महानायक को युगदृष्टा, युगसृष्टा महामानव की कोटी में चरितार्थ करता है। दलाई लामा ने डॉ. आंबेडकर को बोधिसत्व कहकर संबोधित किया और कहा- "इन्हीं के द्वारा बौद्ध धर्म अपनी जन्मभूमि में वापस आ पाया है।" डॉ. बाबासाहब आंबेडकर धर्मांतर के बाद सिर्फ सात सप्ताह जीवित रहे। उन सात सप्ताहों में बौद्ध धर्म का इतना विस्तार हुआ, जितना सात सदियों में भी नहीं हो सका।

निष्कर्ष रूप में इतना ही कह सकते है कि मोहनदास नैमिशराय जी विवेच्य उपन्यास के माध्यम से महामानव डॉ. बाबासाहब आंबेडकर के युगद्रष्टा, युगसृष्टा एवं बोधिसत्व चरित्र को न्याय देने में सफल सिद्ध हुए है। नैमिशराय जी ने डॉ. बाबासाहब आंबेडकर जी के संपूर्ण जीवन को हमारे सम्मुख उपस्थित किया है। विवेच्य उपन्यास का शीर्षक "महानायक बाबा साहब डॉ. आंबेडकर" और कथनयाक डॉ. बाबासाहब आंबेडकर को दी गई "महानायक" उपाधि सार्थक सिद्ध हुई है।

संदर्भ

1. महानायक बाबा साहब डॉ. आम्बेडकर- मोहनदास नैमिशराय।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका

निहारिका शुक्ला
प्रो. राजीव कुमार

शोध सार :- शिक्षा ही वह हथियार है जो महिलाओं को अपने अधिकारों को समझने, आत्मनिर्भर बनने तथा समाज को मजबूत बनाने में सक्षम बनाता है। यह शोध पत्र महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका पर केंद्रित है। शिक्षा द्वारा महिलाओं की अर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक दशा कैसे बदलती है, प्रस्तुत शोध में इसी विषय का विश्लेषण किया गया है। विभिन्न आँकड़ो और अध्ययनों के आधार पर यह शोध पत्र बताता है कि कैसे शिक्षा महिलाओं के जीवन में सकारात्मक बदलाव लाती है और समाज में समता को बढ़ावा देती है।

मुख्य शब्द :-महिला, सशक्तिकरण, शिक्षा

प्रस्तावना :-किसी भी राष्ट्र का चहुमुखी विकास तभी सम्भव है जब स्त्री-पुरूष दोनों समान गति से विकास पथ पर अग्रसर हो। महिलाएं समाज का आधा हिस्सा है। जिस समाज में स्त्रियों की दशा सम्मानजनक एवं प्रगतिशील होती है, वह समाज उतनी ही विकसित माना जाता है। सशक्त महिला व समाज ही राष्ट्र की उन्नति में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते है। अतः सामाजिक व आर्थिक विकास की संकल्पना महिलाओं के विकास व सशक्तिकरण के बिना अधूरी है। देश के प्रथम प्रधानमंत्री पं0 जवाहरलाल नेहरू ने भी महिलाओं के विकास को प्राथमिकता देते हुए कहा था कि - ''यदि आपको विकास करना है तो महिलाओ का उत्थान करना होगा। महिलाओं का विकास होने पर समाज का विकास स्वतः ही हो जायेगा।''

भारतीय समाज में महिलाओं की उन्नति के प्रमाण हमें वैदिक साहित्य से प्राप्त होता है। वैदिक युग में भारतीय समाज में महिलाओं को पुरूषों के समान शिक्षा, धर्म, राजनैतिक, सम्पत्ति व उत्तराधिकारी के अधिकार प्राप्त थे, किन्तु मध्य युग में पितृसत्तात्मक समाज होने के कारण महिलाओं की स्वतन्त्रता का हनन हुआ। तब स्त्री और पुरूष के मध्य समानता न के बराबर रही। यही वस्तु स्थिति स्वतन्त्रता प्राप्ति तक चलती रही, किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात और स्वतन्त्रता के पूर्व भी कुछ आयोगों द्वारा स्त्री शिक्षा को बढ़ावा देने के कारण समाज में स्त्रियों की दशा में कुछ सुधार हुआ और वर्तमान समय तक आते-आते स्त्री शिक्षा पर बहुत सारे कार्य हुए। जिसके कारण न केवल स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन मिला, अपितु शिक्षा के कारण ही महिला सशक्तिकरण बढ़ा इस प्रकार वैदिक युग से लेकर वर्तमान युग तक महिलाओं के सशक्तिकरण में शिक्षा का अतुलनीय योगदान दिया है।

महिला सशक्तिकरण का अर्थहै महिलाओं में आत्म सम्मान, आत्मनिर्भरता व आत्मविश्वास होना, वास्तव में इसका अर्थ है महिला को प्रत्येक क्षेत्र में अग्रसर बनाना। महिलाओं व पुरूषों के वैद्यानिक, राजनैतिक, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में उनके परिवार, समुदाय, समाज एवं राष्ट्र की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में निर्णय लेने की स्वायत्ता बराबर हो।

साहित्य समीक्षा :- सुधीर कुमार श्रीवास्तव (1985) ने 'महिला सशक्तिकरण में महिलाओं की भूमिका' नामक अपने अध्ययन में बताया कि महिलाएं तभी सशक्त हो सकती है, जब शिक्षा के माध्यम से उनमें जागरूकता लाई जाये।

रंगनाथ एन. सन्तोष राव के अच्युत एण्ड श्रीनिवास (2011) के शोध 'शिक्षा में लिंग असमानता' में पाया गया कि शैक्षिक असमानताओं महिलाओं के अधिकारो में सबसे बड़ी बाधा है। उनके सामाजिक एवं आर्थिक पिछड़ेपन का कारण अशिक्षा है।

अहमद, नवी एण्ड सिद्दीकी मो0 आबिद (2006) के शोध 'आर्थिक और सामाजिक रूप से कमजोर वर्ग का शिक्षा द्वारा सशक्तिकरणः प्रतिबद्धता और चुनौतियों में यह पाया कि जो महिलाएं आर्थिक और सामाजिक रूप से उच्च स्तर की होती है उनका मनोवैज्ञानिक सुरक्षात्मक स्तर उन महिलाओं से बेहतर होता है जो गरीब और अनपढ़ है।

यूनिसेफ, विश्व बैंक तथा नेशनल सैंपल सर्वे जैसी कई एजेन्सियों ने अपने अध्ययन में येपाया है कि शिक्षा के माध्यम से महिलाओं की स्थिति में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ। शिक्षित महिलाओ की आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक भूमिका सशक्त हुयी है।

उद्देश्य :- इस शोध पत्र के उद्देश्य निम्नलिखित है -

- शिक्षा के द्वारा महिलाओं में आये हुए परिवर्तन का अध्ययन करना।
- महिलास शक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका का अध्ययन करना।
- शिक्षा के द्वारा महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध परिणाम एवं चर्चा :- महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका महिलाओं को शिक्षित किये बिना सशक्तिकरण के बारे में सोचना एक गलत अवधारणा है, क्योंकि महिला शिक्षित होने पर ही अपने अधिकारों को प्राप्त करने के लिए जागरूक होगी। भारतीय जनगणना 2011 के अनुसार महिलाओं की संख्या देश की कुल आबादी का 48.2% है। समाज के इतने बड़े भाग की उपेक्षा कर भारत को विकसित राष्ट्र होने के दिखा स्वप्न को त्यागना होगा। महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका निम्नलिखित है -

लक्ष्ययुक्त शिक्षा की व्याख्या :- महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। जिस प्रकार शरीर को भोजन की आवश्यकता है उसी प्रकार मानसिक विकास के लिए शिक्षा आवश्यक है। अगर नारी ही शिक्षित नही होगी तो वह न तो सफल गृहणी बन सकेगी और न कुशल माता। अगर एक माँ ही अशिक्षित होगी तो वह अपने बच्चो का सही मार्गदर्शन करके उनका मानसिक विकास कैसे कर पाएगी और एक स्वस्थ समाज का निर्माण एवं विकास सम्भव नहीं हो सकेगा।

महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करने में सहायक :- महिला सशक्तिकरण में शिक्षा का अन्य महत्वपूर्ण कार्य महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति जागरूक करने में है। शिक्षा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा महिलाएं जागरूक बन सकती है और शिक्षित महिला को अपने कानूनी एवं सामाजिक अधिकारों की पूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। शिक्षा के द्वारा ही महिलाएं वर्तमान में राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक व विज्ञान, चिकित्सा, सेवा आदि सभी क्षेत्रों में विकास के पथ पर अग्रसर है। आज ऐसा कोई भी क्षेत्र नहीं बचा है जिसमें महिला भागीदार न हो। शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण कार्य महिलाओं के स्वतन्त्र निर्णय लेने की क्षमता के विकास में सहायता करना है। शिक्षा के द्वारा ही महिलाओं में आत्मविश्वास बढ़ा है जिससे वह अपने द्वारा लिए गये निर्णयों एवं उनके द्वारा होने वालेप्रभावों के विषय में भली प्रकार से विचार कर सकती है। शिक्षा महिलाओं को आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनाने में पूर्ण रूप से सहायक है। शिक्षा समाज में व्याप्त विभिन्न कुरीतियों, जो महिला सशक्तिकरण में बाधक है, उनको समाप्त करने में सहायक होती है। जैसे- बाल विवाह, कन्या भ्रूण हत्या, लिंग भेद, असमान व्यवहार आदि। शिक्षा समाज की सोच बदलने का मुख्य साधन है। किसी भी समाज की उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि उस समाज की स्त्रियां सशक्त हो, उन्हें सम्मान की दृष्टि से देखा जाए। वर्तमान समय में शिक्षा के द्वारा जागरूकता फैलाये जाने के कारण समाज की सोच में परिवर्तन हुआ है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि महिलाओं का सशक्तिकरण तब तक सम्भव नहीं है जब तक उन्हें आर्थिक स्तर पर सशक्त नहीं किया जायेगा। किसी देश की प्रगति और वास्तविक स्थिति का यदि अध्ययन/निरीक्षण करना हो तो वहाँ महिलाओं की शिक्षा का स्तर देखना चाहिए। महिलाओं को सशक्त, स्वावलम्बी व आत्मविश्वासी बनाने में शिक्षा का योगदान महत्वपूर्ण है। महिला सशक्तिकरण से न केवल महिलाओं

को अपितु सम्पूर्ण समाज एवं देश को लाभ होगा।

शोध निष्कर्ष :- निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि महिलाओं की भागीदारी के अवसर तो है लेकिन समान अवसर प्राप्त करने हेतु उन्हें अभी और संघर्षो की लम्बी यात्रा करनी पड़ेगी। प्राचीन काल से ही हमारे देश में अपाला, बोषा, मैत्रेयी, गार्गी जैसी बुद्धिमती स्त्रियां तत्कालीन समाज व राष्ट्र का गौरव बढ़ा चुकी है और इतिहास इनका प्रमाण है। इसी तरह वर्तमान समय में अनेक स्त्रियां अपने शिक्षित होने के कारण ही देश का गौरव बढ़ा रही है। अतः यह कहा जा सकता है कि ''शिक्षा ही वह धन है जिससे स्त्री समाज का विकास व सशक्तिकरण सम्भव है।'' शैक्षिक सशक्तिकरण निःसन्देह सभी आयामों का आधार कहा जा सकता है जिसके द्वारा महिलाओं को शिक्षित करके विभिन्न क्षेत्रों में क्रियाशील, विवेकशील तथा प्रभावशील बनाना सम्भव होगा। इक्कीसवीं शताब्दी में हमें इस लक्ष्य को शत्-प्रतिशत् प्राप्त करना है। हमें देश की प्रत्येक महिला को न केवल शिक्षित और जागरूक बनाना है बल्कि उसे सम्मानजनक स्थिति तक लाना है। समाज के समग्र विकास के लिए महिलाओं को जीवन के प्रत्येक आयाम में समान अधिकार मिलना चाहिए।

महिला सशक्तिकरण के लिए सुझाव :- स्वामी विवेकानन्द का कहना है कि -

''महिलाओं की दशा में सुधार न होने तक विश्व का कल्याण उसी प्रकार असम्भव है, जिस प्रकार पक्षी का एक पंख से उड़ना।'' उनका महिला शिक्षा-सशक्तिकरण के लिए इनकी दशा में सुधार लाना अति आवश्यक है। महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए निम्नलिखित सुझाव उपयोगी सिद्ध हो सकते है। महिलाओं के साथ मैत्रीपूर्ण एवं नैतिकपूर्ण व्यवहार होना चाहिए। जार्ज हर्बट के शब्दों में - ''एक अच्छी माता सौ शिक्षकों के बराबर होती है। इसलिए उसका हर हालत में सम्मान करना चाहिए।

महिलाओं की दुर्दशा का मूल अशिक्षा रहा है अतः लड़कियों एवं महिलाओं को शिक्षित करने के प्रयास सरकारी एवं सामाजिक दोनों स्तरों पर तीव्र गति से होने चाहिए।

संविधान के भागतीनमें प्ररत्व मूलाधिकारों का प्रभावी ढंग से क्रियान्वयन किया जाये, जिससे महिलाओं का सर्वागीण विकास हो सके।

कार्यालयों में महिलाप्रकोष्ठों की स्थापना की जाए जिससे महिलाओं को किसी कार्य के लिए इधर-उधर भटकना न पड़े। इन प्रकोष्ठो में महिला कर्मचारियों की नियुक्ति की जानी चाहिए जिससे महिलाओं को असुविधा न हो।

महिलाओं के प्रति सामाजिक मानसिकता में बदलाव लाने के प्रयास होने चाहिए जागरूकता अभियान चलाए जाने चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- पाठक, पी.डी. (2007-08), 'भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएं अग्रवाह पब्लिकेशन, आगरा।
- सिंह सीमा (2010) 'पंचायती राज और महिलाओं का सशक्तिकरण प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।
- सिंह रामा (2013), महिला सशक्तिकरण, नेहा पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
- भारत सरकार (2015 मार्च), कुरूक्षेत्र मा0 सं0 कि मं0 प्रकाशन रामकृष्ण पुरम, नई दिल्ली।

Web Access :

- https://www.worldbank.org/en/hepic/girls.education.
- https://unesco.org/themes/education.
- https://eparilib.nic.in.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

పాల్కురికి సోమనాథుని రచనలు – సామాజిక దృక్పథం

"కులరహిత సమాజంకోసం కలంపట్టిన తొలి తెలుగు అభ్యుదయ కవి"

ఉపోద్ఘాతం

తెలుగు సాహిత్య చరిత్రలో నన్నయ, తిక్కనల మధ్య కాలాన్ని (క్రీ.శ.1100–1225) శివకవి యుగంగా పేర్కొంటారు. శైవమత వ్యాప్తి కొరకు కవిత్వం వెలసిన యుగమిది. శైవ కవిత్రయంగా,నన్నెచోడుడు,పాల్కురికి సోమన,యథావాక్కుల అన్నమయ్యలను పేర్కొంటారు. 'శైవ పండితత్రయంగా' శ్రీపతి పండితుడు, శివలెంక మంచన పండితుడు, మల్లికార్జున పండితులను పేర్కొంటారు. శివ కవుల్లో శైవమతాభిమానం, దేశియ కవితాభిమానం, శైలి స్వేచ్ఛ ముఖ్య లక్షణాలు, మార్గ కవితకు భిన్నంగా శైవ కవులు దేశి సాంప్రదాయాన్ని పాటించి ప్రాచుర్యం కల్పించారు.

సంఘ సంస్కరణ ఉద్యమం

తెలుగునాట సాంస్కృతిక పునరుజ్జీవన ఉద్యమాల పేరుతో సంఘ సంస్కరణలకు తీవ్ర ప్రయత్నాలు జరిగాయి.సమాజంలో కరుడుగట్టుకుపోయిన మూఢాచారాలు, మూఢనమ్మకాలు, కులమత భేదాలు, ఆర్థిక అసమానతలు మొదలైన రుగ్మతలను తొలగించే ప్రయత్నమే సంస్కరణ అవుతుంది. మనిషి సంఘజీవి. సమాజంలో ఉన్న రకరకాల నమ్మకాల నుండి బయట పడేయటమే సంస్కరణ అవుతుంది. ప్రాచీన కాలం నుండి చార్వాక మతం కొంత మేరకు ఈ దిశగా తొలి అడుగు వేసింది. శివ కవులు మతం ఆధారంగానే కొంత సంస్కరణలకు ప్రయత్నించారు. ఆ తర్వాత అన్నమయ్య, భక్త రామదాసు, వేమన, వీరబ్రహ్మం వంటివారు సంస్కరణ భావాలను ప్రచారం చేశారు. ఆధునిక కాలంలో పాశ్చాత్య విద్య వల్ల ఈ ఉద్యమం కార్యరూపం ధరించింది. రాజారామమోహనరాయ్, ఈశ్వరచంద్ర విద్యాసాగర్ వివేకానంద, రఘుపతి వెంకటరత్నంనాయుడు, కందుకూరి, గురజాడ, అంబేద్కర్ వంటివారు సంస్కరణ ఉద్యమాలకు సారథ్యం వహించారు.

పాల్కురికి సోమనాథుడు

శివ కవుల్లో పాల్కురికి సోమనాథుడు ప్రథమ గణ్యుడు. నన్నెచోడుడు శివకవి మాత్రమే. సోమన వీరశైవకవి. పాల్కురికి సోమన కవితారీతులే శివకవి యుగం నాటి రచనా లక్షణాలుగా

చెప్పవచ్చు. గణపతిదేవుడు పరిపాలించిన కాకతీయ సామ్రాజ్యంలో క్రీ.శ.1240 ప్రాంతానికి చెందిన కవి సోమనాథుడు. వీరి జన్మస్థలం ఓరుగల్లు (వరంగల్లు) కు 30 కిలోమీటర్ల దూరంలో ఉన్న పాల్కురికి అనే గ్రామం. ఇప్పుడు పాలకుర్తి అని వ్యవహరిస్తున్నారు. ఆ ఊరిలో ఉన్న సోమేశ్వరుని అనుగ్రహంతో జన్మించడంవల్ల ఇతనికి సోమనాథుడు అనే పేరు పెట్టారు. తల్లి శ్రియాదేవి, తండ్రి విష్ణురామిదేవుడు. కరస్థలం విశ్వనాథయ్య సోమనాథుని కవితా గురువు. గురు లింగార్యుడు శివదీక్షా గురువు సోమనాథుడు 8 భాషల్లో పాండిత్యం ఉన్నవాడు. నాలుగు భాషల్లో కావ్య రచన చేయగలడు. సంస్కృతాంధ్ర, కర్ణాటక భాషల్లో రచనలు చేశారు. వీరి రచనలన్నీ శైవమత ప్రచారానికి ఉపయోగపడినవే. ఆయన రచనలన్నీ స్వతంత్రాలే..

పాల్కురికి సోమనాథుని రచనలు

అనుభవసారం, వృషాధిప శతకం, చతుర్వేదసారం, చెన్నమల్లు సీసాలు అనేవి సోమనాథుని పద్య రచనలు. బసవ పురాణం, పండితారాధ్య చరిత్ర ద్విపద రచనలు. ఇవే కాక రుద్రభాష్యం, సోమనాథ భాష్యం, బసవ రగడ, సద్గురు రగడ, పంచ ప్రకార గద్య, నమస్కార గద్య, అక్షరాంక గద్య, బసవోదాహరణం, బసవలింగ నామావళి మొదలైన లఘు కృతులెన్నో రచించాడు.

శైవ మతాభిమానం

పాల్కురికి సోమన మొదలైన శివకవులకు శైవ మతాభిమానం ఎక్కువ. శివభక్తిని బోధించడానికి కవిత్వాన్ని సాధనంగా గ్రహించారు. శైవేతర దైవాన్ని వీరు కీర్తించరు. అలాగే ఎవరైనా ఇతర దైవాలను హేళన చేసే కూడా ఊరుకోరు. ఇదే సోమనలో కనిపించే సంఘ సంస్కరణవాదం. పాల్కురికి సోమన గ్రంథాలన్ని పూర్తిగా శివమయాలు.శైవేతరులను శివభక్తులుగా మార్చడానికి సోమన రచనలు ఉద్దేశింపబడినట్లు చెప్పవచ్చు. శైవమత స్థాపకుడైన బసవేశ్వరుని జీవిత చరిత్రను "బసవపురాణం'గా రచించాడు. ఆవేశంతో శివభక్తిని బోధిస్తూ ద్విపద ఛందస్సులో రచనలు చేశారు. తన వ్యక్తిగత విషయాల పట్ల సోమన ఎంత తీవ్రంగా స్పందించాడో అనుభవసారంలోని ఈ క్రింది పద్యం ద్వారా తెలుసుకోవచ్చు.

"భువిలో శివదీక్షితులగు శివభక్తుల పూర్వజాతి జింతించుటరౌ
రవ నరక భాజనంబా శివు బాషాణంబుగాగా జింతించు క్రియన్"

అలాగే బసవ పురాణంలో బసవుల్ని ఈశ్వరునిగా భావించి చెప్పిన పంక్తులు చాలా ఉన్నాయి. ఈ క్రింది పంక్తులు సోమన వీరశైవమతాభిమానాన్ని ప్రకటిస్తాయి.

"బసవాయనగ విన్న బాసలాండేల!
పసులకునైనను ప్రబలదే భక్తి!
బసవాయని జాలు బాసలాడేల!
వెసగాలు కార్చిచ్చు వెన్నెల గాదే!

సంఘ సంస్కర్త – సోమన

భారతీయ సమాజంలో అనాది కాలం నుండి రకరకాల మతాలు, కులాలు, ప్రాంతాలు, వర్గ భేదాలు ఉన్నాయి. ఇందులో బౌద్ధం, జైనం, హిందూ మతాలు ప్రధానమైనవిగా చెప్పవచ్చు. బౌద్ధ, జైన మతాలు బాగా ప్రాచుర్యం పొందాయి. అందులో హిందూ మతంలో వైష్ణవం, శైవ మత శాఖలు ఏర్పడ్డాయి. విష్ణువుని కొలిచేవారు వైష్ణవులు, శివుణ్ణి కొలిచేవారు శైవులు. ఈ రెండు శాఖలో ఉన్నత కులస్థులదే పైచేయిగా ఉండేది. అందులో ప్రధానంగా బ్రాహ్మణులదే పెత్తనం. వారు ఏది చెబితే అదే వేద వాక్కుగా ఉండేది. అలాంటి సందర్భంలో 13వ శతాబ్దంలో శైవ కవులు, శైవమత వ్యాప్తి కోసం స్వీయ రచనలు చేశారు. దేశీయమైన ఛందస్సులో, ప్రజల భాషలో అందరికీ అర్థమయ్యే రీతిలో రచనలు చేశారు. క్రింది కులస్థుల కథలను కథావస్తువులుగా, పాత్రలను సమాజానికి పరిచయం చేశారు. కులం గూర్చి సోమన రచనలు మడివేలు మంచయ్య, ముగ్ధ సంగయ్య, చెన్నయ్య, కన్నప్ప, బెజ్జమహాదేవి, గోడ గూచి మొదలైన క్రింది కులస్థుల కథలను శైవమత ప్రచారం కొరకు బసవ పురాణంలో సోమన చెప్పారు.

కులాలపై నిరసన

శివకవుల్లో కులాలపై తిరుగుబాటు ధోరణే కనబడుతుంది. కులాలు, వర్ణాలు, మతాలు అనాదిగా లేవని అవి దైవ నిర్ణయాలు కావని వారి నమ్మకం. వీరశైవ మతాన్ని అనుసరించే క్రమంలో సోమన కులతత్వంపై నిరసనను వ్యక్తపరిచే క్రింది విషయాన్ని గమనించవచ్చు.

"చనువేద చోదిత జాతులు రెండు
వినుము ప్రవర్తకమును నివర్తకము
భవకర్మ సంస్కారి భువి ప్రవర్తకుడు
శివకర్మ సంస్కారి భువి నివర్తకుడు
సన్నుత వేదార్థ చరితంబులుండ
మొన్న బుట్టిన కులంబుల మాటలేల"

(బసవ పురాణం – ప్రథమాశ్వాసం – పుట 181)

బ్రాహ్మణాధిక్యతపై వ్యతిరేకత

నాటి సమాజంలో బ్రాహ్మణులకు తామే అగ్రకులస్థులమనే భావన ఉండేది. వారి నివాసాలు కూడా ప్రత్యేక అగ్రహారాలుగా పిలువబడేవి. అగ్రహారాల్లోకి నిమ్న కులస్థులను రాకూడదని ఆక్షేపించేవారు. సోమన తన రచనల్లో చాలా సందర్భాల్లో కులాల మధ్య.నున్న స్పర్థాలను చూపించారు. ప్రత్యేకంగా బ్రాహ్మణులపై వ్యతిరేకత – శివభక్తులు ఎక్కువ ఉండేది. బసవడు వడుగు వదలని తండ్రితో వాదించడంలో "బ్రాహ్మణుడేనియు భక్తుడెట్లగును?" (బ.పు – ప్రథమాశ్వాసం – పుట 18) అని ప్రతి బ్రాహ్మణుడు భక్తుడు కాలేడని, భక్తుడు అయితే బ్రాహ్మణుడు అనే కులచట్రంలో ఇరుక్కోడని భక్తి ప్రధానంగా బ్రాహ్మణ తత్వాన్ని సోమన వ్యతిరేకించాడు.

దళిత ప్రస్తావన

దళితులంటే సమాజంలో అట్టడుగు ప్రజలని, అణగతొక్కబడ్డవారని అర్థం. అణగతొక్కబడడం అనేది అనేక రకాలుగా గింటుంది. ఆర్థిక, సామాజిక, సాంఘిక, రాజకీయ, కుల, వర్ర, వర్గ, ప్రాంతాలవారిగా తొక్కబడిన వారెవరైనా దళిత జనం అనవచ్చు. కాని కేవలం కులాన్ని బట్టి అణగతొక్కబడిన వారినే దళితులు అని వ్యవహరిస్తున్నారు. వీరినే నిమ్నజాతులు, హరిజనులు అని అంటారు. దళితులకు కావ్య గౌరవం కల్పించి, వారి ఉద్ధరణకు దోహదం చేసినవారు శైవకవులే. పాల్కురికి సోమన తన రచనల్లో దళితుల ప్రస్తావన చేశాడు. శైవుల కుల, వర్తవ్యవస్థను నిరసించడంవల్ల వైష్ణవులు వారిని అంటరానివారుగా, మాలలుగా భావించేవారు. ఉదా॥ కళ్యాణ కటకంలోని బ్రాహ్మణులు, బొజ్జలునితో బసవడు శైవులను పెద్ద భక్తులని కాళ్ళపడుతాడు. వారు తిని విడిచింది తింటాడని చెబుతూ

"కతలేల కళ్యాణ కటకమంతయును
బ్రదితంబు మాలల పాలయ్యె"

(బసవ పురాణం – సప్తమాంకం పుట 180)

కులాతీత భక్తితత్వం

భారతదేశంలో కులవ్యవస్థ కుష్ఠురోగం లాగా, క్యాన్సర్లాగా సమాజాన్ని భ్రష్టు పట్టిస్తున్నాయి. అట్టి భయంకరమైన కులవ్యాధి నుండి సమాజాన్ని మళ్లించడానికి శైవమతంలోకి అన్ని

కులాలవారిని ఆదరించారు. అందరిలోను ముగ్ధమైన భక్తితత్వాన్ని కల్పించారు. ఆ కోవలో ముగ్ధ సంగయ్య కథ ఒకటి. భక్తి ఉద్యమంలో వ్యసనపరులుదుర్మార్గులను కూడా ఆదరించారు. మహాభక్తుడైన ముగ్గ సంగయ్య వ్యసనపరుడు. అతని మూఢభక్తిని చాటి చెప్పారు. అలాగే రుద్రపశుపతి కథ. ఇతను కూడా జంగమ కులస్తుడు. శివుని కొరకు తలను ఇవ్వడానికి సిద్దపడవాడు. ఇతనిలో కూడా మూఢభక్తితత్వం కనబడుతుంది. భక్త కన్నపు గిరిజనుడు. శివుని కొరకు తన కండ్లను ఇచ్చాడు. అలా మడివేలు మంచయ్య, చెన్నప్ప కథ, సూరసాని, బెజ్జమహాదేవి, సిరియాలుని కథల్లో కులం కంటే ముగ్గమైన భక్తితత్వం కులాతీత భక్తి తత్వం దాగి ఉంటుంది. పైన చెప్పిన వారందరు ప్రవర్తనలో కులాచారం కాని, శాస్త్ర నియమాలు కాని కనబడవు. కేవలం భగవంతుడైన శివుడు, భక్తి మాత్రమే ఉంటుంది.

శైవమత తత్వం

పాల్కురికి సోమన వివిధ రచనల్లో ఆనాటి మత పరిస్థితుల్ని వివరించారు. కాకతీయ యుగంలో ఆంధ్రదేశంలో ప్రాచీనమైన బౌద్ధ, జైన మతాలు క్షీణించిన తర్వాత, శైవ-వైష్ణవ మతాలు వ్యాప్తి చెందాయి. బౌద్ధం రెండుగా చీలి హీనయానం నశించి, మహాయానం హిందూ ధర్మంలోకి విలీనమైంది. జైనమతం మాత్రం బలవత్తరంగా ఉండింది. కాకతీయులు కూడా జైనులుగానే ఉన్నారు. తర్వాత బసవేశ్వరుడు స్థాపించిన వీరశైవ మతాన్ని అనుసరించారు, వీరశైవులు వేద ప్రమాణాలను నిరసిస్తూ, ఇతర మతాలను ద్వేషిస్తూ వారిని భవులుగా పేర్కొంటూ భక్తిని ప్రచారం చేశారు. వీటన్నింటిని సోమన సాధారణ జనానికి చేరువైన భాషలో శాస్త్రీయంగా కాకుండా వాదనల్లో కథాకల్పనల్లో సమన్వయించి ప్రదర్శించాడు. "శైవులు శ్రుతి ఏక ఏవరుద్రో" అని శివుడొక్కడే అని చాటుతారు. వైష్ణవులు విష్ణువును ఇందుగలడందు లేడనడానికి సమానంగా సోమన శివుడు సర్వాంతర్యామి అనిఈ క్రింది ద్విపదల్లో వివరించారు.

"సకలము గపట నాటక సూత్రములను
ప్రకటించం చైతన్యభావంబు శివుడు
అందునణోరణీయా ననజొచ్చి
సందులేకున్నట్టి శంభుండు శివుడు
నూపుల లోపలి నూనియట్లు
భావింప గాష్టంబు పావకునట్లా...

.....

(బసవ పురాణం – పుట 159–160)

అని నువ్వుల్లో మొదలుకొని చివరకు చెట్టు పుట్ట వరకు అన్నిటా శివుడు గలడని పేర్కొన్నారు.

బానిసత్వం

సోమన రచనల్లో అక్కడక్కడా దాసి, బానిస అనే పదాలు పేర్కొన్నాడు. ఇది మధ్యయుగాల కాలం నుండి సమాజంలో ఉన్నట్లు తెలుస్తుంది. కల్లిదేవయ్యగారి కథల్లో "తమ దాసి యర్థ్యపణ్యములకు బోవు సమయంబున" అనడంలో శైవులు తమ ఇండ్లల్లో దాసిలను ఉంచుకునేవారని, దానిని సోమన నిరసించాడు. దాసిలు కూడా దైవ చింతన కల్గి ఉండేవారు. పని చేయడానికే బానిసలు పుట్టారనే భావన సమాజంలో ఉంది. బానిసలు తాము చేసేపనికి మాత్రమే కర్తలు గాని ఫలకర్తలు కారు. అయితే సోమన దీనిని తీవ్రంగా నిరసించారు. బానిసలను శివునితో సమానంగా గౌరవించారు.

"పనిసేయనోపక బానిస కొడుక
చనలింగధారియై చనుదే దడవ
బానిస కొడుకడు భావింబులేక
తానీశు డనుచు బాదంబుల గడగ"

(బసవ పురాణం – పుట 119)

వేశ్యావృత్తి పట్ల గౌరవం

మధ్యయుగంలో రూపొందిన దేవదాసి వ్యవస్థ వేశ్యల రూపకల్పనకు కారణమైంది. కాకతీయుల కాలానికి వేశ్యలు సంఘంలో గౌరవప్రదమైన స్థానంలో ఉండడంతో పాటు వారు వెలయాలు అని అనిపించుకునే వృత్తిపరమైన స్థితిలో కూడా ఉన్నారు. బసవడు పడుగు పలదని వారిస్తూ బ్రాహ్మణ (వైదిక) మతాన్ని శైవమతాన్ని "కులసతి యట్లు నిశ్చల యుక్తి, భక్తి వెలయాలియట్టుల విప్రమార్గంబు" (బసవపురాణం–18) మతాన్ని వెలయాలుగా, భక్తిమార్గ శైవమతాన్ని కులసతిగా పోల్చి వర్ణించాడు.

వేశ్యలతో తాము పొందిన సుఖాన్ని గూర్చి కూడా ఒకరితో ఒకరు బాహాటంగా చెప్పుకునేవారు. ముగ్ధ సంగయ్య బసవనితో పల్కిన పలుకులే అందుకు ఉదాహరణ.

"బసవ! యేమని చెప్ప భర్గుడే యెరుంగు

నెనగ లంజెరిక మీ నీ రాత్రి సేత
నీవును మాతోడ రావైతిగాని– వేపునంతకు నొక్క విధమైన సుఖము"
(బసవపురాణం – తృతీయాశ్వాసం – పుట 54)

అని పాల్కురికి సోమన ఆనాటి సమాజంలో వేశ్యల వృత్తి ప్రవృత్తిని చక్కగా వివరించారు. వారికి సంఘంలో చులకన భావన లేకుండా చేసి కావ్యాల్లో వారి గురించి రాసి కావ్య గౌరవం కల్పించాడు.

స్త్రీలకు గౌరవం

నిజంగా సంఘ సంస్కర్త అంటే పాల్కురికి సోమననే పేర్కొనాలి. ఎందుకంటే అనాది కాలం నుండి పురుష ఆధిక్యతే ఎక్కువగా ఉండేది. స్త్రీ వంటింటికి మాత్రమే పరిమితమయ్యేది. అలాంటిది సోమన 13వ శతాబ్దిలో తన రచనల ద్వారా శైవభక్తురాండ్ల గూర్చి గొప్పగా ముగ్ధమైన భక్తి భావాలను వారిచేత చెప్పించాడు. స్త్రీ అబల కాదు సబల అని నిరూపించడానికి దేవాలయాల్లోనూ, సామాజిక చైతన్యంలోనూ స్త్రీల యొక్క భక్తి తత్వాన్ని చాటిచెప్పాడు.

(1) బెజ్జమహాదేవి కథ

ఈ కథ ముగ్ధ భక్తుల కథలలో ఒకటి. ముగ్ధ భక్తుల కథలన్నీ కూడా మనలను ఆలోచింపచేస్తాయి. స్త్రీలు శివపూజ నొసర్చుటకు అర్హులుకారని పూర్వం ఉండేది. కాని సోమన దానిని ఖండిస్తూ స్త్రీలు కూడా శివపూజలు చేయవచ్చని వారికి సమాజంలో గౌరవం ఉండాలనే ఉద్దేశంతో ఈ కథను చెప్పాడు. బెజ్జమహాదేవి శివదీక్ష నందిన శివభక్తురాలు. ఆమె శివునికి తల్లి లేదని, తల్లితండ్రులు లేని పిల్లలకుండే ఇబ్బందులు ఎలా ఉంటాయో అని ఈ పాత్ర చిత్వరా సోమన సమాజానికి చూపించాడు. తల్లి లేని శివునికి తానే తల్లియై శివుని మాతృసేవలు అందించింది.

"తల్లి గల్గిన నేల తపసి గానిచ్చు?
తల్లి గల్గిన నేల తల జడల్గట్టు?
తల్లి యున్న విషంబు త్రావనేలిచ్చు?
తల్లి యుండిన తోళ్ళ దాల్పనేలిచ్చు?
తల్లి పాముల నేల ధరియింప నిచ్చు?
తల్లి బూడిద యేల తాబూయనిచ్చు?
(బసవ పురాణం – తృతీయాశ్వాసం 560 పద్యం)

అని పాల్కురికి సోమన మాతృ హృదయ ఆవేదనను బెజ్జమహాదేవి కథ ద్వారా సమాజానికి తెలియచేశాడు.

ముగింపు

ప్రాచీన కవియైన, ఆధునిక కవియైన ప్రజల జీవితాన్ని ప్రజల జీవద్భాషల్లో రచన చేయడం – అది తెలంగాణ కవులకే సాధ్యం. సోమన తన కావ్య రచన ద్వారా ప్రజలలో శివభక్తిని పెంపొందించాడు. శివభక్తుల చరిత్రను రచించాడు. వీరు సంస్కృత, కన్నడ, తెలుగు భాషలలో గ్రంథ రచన చేశారు. కావ్యాలే కాకుండా రగడలు, గద్యలు, శతకాలు, ఉదాహరణలు అనే పేరుతో కావ్యాలను సోమన రచించి శివభక్తిని ప్రచారం చేశాడు. ప్రాచీన కాలంలో లాగా కాకుండా స్త్రీలు, శూద్రులు, పంచములు, శివభక్తిని, శివదీక్షకు దూరంగా లేకుండా చేశారు. సర్వసామాన్య మానవులను సమానంగా ఆదరించాడు. కుల, వర్గ, లింగ భేదాలు లేకుండా అందరిని సమానంగా శైవమత స్వీకారానికి అవకాశం కల్పించారు. బ్రాహ్మణుల యొక్క కర్మ సిద్ధాంతాలను నిరసించాడు. బ్రాహ్మణాధిక్యతను శివకవులు తమ కావ్యాలలో నిరసించారు. మాలలు, మాదిగలు, వితంతువులు, కంసాలి, మంగలి, చాకలి మొదలైనవారిని శివభక్తులుగా మార్చారు. ఈ విధంగా సోమన తన రచనల ద్వారా సర్వమానవ సమానత్వాన్ని శైవమత ప్రచారం చేశారు. సంఘ సంస్కర్తగా తనవంతు కృషి చేశారు.

గ్రంథ సూచిక

1. **బసవ పురాణము** – పాల్కురికి సోమనాథుడు రచించిన ద్విపద కావ్యం.
2. **తెలుగు సాహిత్య చరిత్ర** – డాక్టర్ ద్వా. నా. శాస్త్రి

–Dr.Adapa.Kedari,
Telugu Lecturer,
Y.V.N.R Government Degree College,
Kaikaluru,Eluru District,
Phone Number :9542943322
E-Mail Id:adapakedari71@gmail.com

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

गोंड जनजातियो में 750 का योगदान
(सीधी जिले के विशेष संदर्भ)

बबिता सिंह मरकाम
शोधार्थी (अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा, म॰प्र.)
Email-id babbimarkam2506@gmail.com
Mob- 8120366694

शोध शारांश : प्राचीन जनजातियों में गोंड जनजाति भारत की प्रथम तथा मध्य प्रदेश की दूसरी सबसे बड़ी जनजाति समूह है। तथा समूह के आधार पर ये सबसे बड़ी जनजाति है। ये जनजाति गोत्र व्यवस्था पर आधारित है जिनकी संख्या कुलचिहों के आधार पर 750 पाई जाती है। जो बारह भागो में विभाजित कर सुव्यवस्थित किया गया है। प्रत्येक गोत्रधारी को एक पशु, एक पक्षी और एक वनस्पति चिन्हित किया गया है इस प्रकार ये 750 के तीन गुना 2250 जीव जन्तु और वनस्पति का रक्षण और भक्षण होते है जिससे ये प्रकृति के अत्यत निकट मानी जाती है। यह रीति रिवाज में अत्यंत सम्पन्न है। इसीलिए इस जनजाति का अध्ययन मेरे द्वारा किया जा रहा है। ये सामाजिक प्रथाओ को आत्मसात करती है।

शब्द कुंजी - गोंड, प्रकृति, गोत्र भूभाग, रिश्ता, पाड़ी, फड़ापेन, संजोरपेन, पारी कुपार लिंगों, पोखर, उरई, कुलचिन्ह।

प्रस्तावना – गोंडवाना भूभाग मे गोंडी संस्कृति, मानव समुदाय का मुख्य धर्म प्रकृति पूजा की मान्यता इस सृष्टि के निर्माण से है। इस समाज का पृथ्वी में पाये जाने वाले जलचर, थलचर, नभचर पशु पक्षी और पेड़ पौधों से इनका अटूट रिस्ता रहता है। ये इससे अपना तन -मन धन से संबंध बताते है। क्योंकि इनका संबंध गोत्रसमूह (पाड़ी) के आधार पर होता है। इसलिए प्राचीन समय से ही गोंड जनजातियों का वर्णन देखने सुनने को मिलता है। यह जनजाति इहिहास मे गोड़वाना राज्य से संबन्धित मानी जाती है। इस संसार मे प्राकृतिक शक्ति सर्वोच्च मानी जाती है जिसे गोडियन समुदाय अर्थात गोंड समाज के लोग फड़ापेन ख्बड़ादेव, के नाम से मानते आ रहे है। ये प्राकृतिक शक्ति पर अटूट विश्वास करते है। इसी लिए ये इसकी पूजा उपासना आस्था भक्ति से करते आ रहे है। इसे संजोरपेन, फड़ापेंन कह कर भी संबोधित करते है। गोडों का कथा साहित्य लिखित नहीं बल्कि परंपरा से सहेज कर रखा हुआ है। फेरसापेन उनके मुख्य देव है इसलिए उन्हें वे बड़ादेव मानते हैं। उन्हें वह सृष्टि का निर्माण करने वाला ईश्वर कहतें हैं। पारी कुपार लिंगो ने इस समुदाय को 750 गोत्रों मे विभाजित किया है। ये शुभ अंक है जो गोंड समुदाय से जुड़ी विभिन्न जानकारियों और सांस्कृतिक पहचान को दर्शाता है।

सात का अर्थ - जिसमें 7 अंक आत्मा के गुणो-- ज्ञान, पवित्र, प्रेम, शांति, खुशी, आनन्द, शक्ति, विवाह के सात वचन, सात फेरे और सात महासागर, सात जन्म, इंद्रधनुष के सात रंग, सात अनाज का कूप, सात नदियों का पानी साथ ही गोंडी समुदाय के लोग सात सगाओ को परिभाषित करने वाले सप्तरंगी ध्वज होता है, जिस पर सात दिनो का सप्ताह बना होता है, सात पर्वतीय मालाए भी प्रतीक है।

पाँच का अर्थ --- 5 अंक शरीर और उसके पाँच तत्वों आकाश, धरती, पानी, आग और हवा से जुड़ा रहता है। ये

तत्व सभी जीवधारियों को पोषित करते है। जिससे जीवधारियों का जन्म एवं विकास होता है। पांचवे दिन ही नवजात शिशु को बाहरी वातावरण मे लाया जाता है। मृत्यु के बाद शरीर को जलाने या दफनाने के पूर्व भी चीता या गड्ढा के 5 चक्कर लगाये जाते है। खुदे हुये गड्ढा मे दफनाने के बाद आए हुये सभी व्यक्तियों द्वारा 5-5 मुट्ठी मिट्टी डालने की रस्म पूरी जाती है। गोंड समाज के लिए पारी कुपार लिंगो ने 5 वंदनीय एवं पूजनीय तत्व बताया है—

1- सगा वन घटक युक्त सामुदायिक व्यवस्था

2-गोटुल अर्थात शिक्षा तथा संस्कार केंद्र

3-मुठवा याने गोंडी पुनेम सार (गोंडी धर्म) के ज्ञाता

4- पेंनकंडा अर्थात सर्वोच्च शक्ति का उपासना स्थल

5- पुनेम अर्थात धर्म।

इन पाँच वंदनीय सतवों को आदर्श मानकर उनके अनुसार चलने से सगा जीवो का कल्याण साध्य किया जा सकता है। पाँच वस्तुओ के समूह को गोंडी मे एक गण्डा कहते है। पाँच द्वीपो के समूह को गोंडी मे गण्डाद्वीप कहा गया है। पानी के अंदर के पाँच द्वीप जिसे सिंगारद्वीप कहा जाता है। गोंडी भाषा मे सइग + आर + द्वीप = सिंगारद्वीप। पाँच खंडो के संयुक्तिकरण से गण्डा बनकर गंडोद्वीप की रचना हुई जो एक अद्‌भुत प्राकृतिक धरोहर है। यह मुख्य रूप से गोंड बाहुल्य क्षेत्रो मे ही माया जाता है। उरई का पेड़ मुख्य रूप से इस लिए लगाया जाता है क्यो कि यहा शरीर को दुर्गंध होने से बचा है साथ ही साथ ये मृत शरीर के दफनाने के कुछ दिनो बाद शरीर मे उपस्थित तत्वो के अपघटन के कारण उसमे नवशक्तिया उत्पन्न होती है यही शक्ति आगे चल कर इस धरा के अंदर पानी की धारा मे मिल कर पोखर तथा कूओ और नदियो तथा मिट्टी के माध्यम से अन्य लोगो के पास पहुचती है।

शून्य का अर्थ

शून्य (0) अंक निंराकर का प्रतीक है। यह पृथ्वी पर स्वम ही विकसित होता है जिसका कोई आकार नहीं होता है , इसका अर्थ यह लगाया जाता है कि हमरी धरा गोल है ठीक उसी प्रकार जन अंडाणु का निषेचन होता है इसके बाद शिशु माँ के गर्भ मे आता है तो उसका आकार शून्य होता है धीरे धीरे जब बच्चे का विकास होता है है तो माँ का पेट भी गोल आकार का हो जाता है जिसे धरा का रूप मान कर संबोधित किया जाता है। साथ ही इसी धरा मे हमारा जीवन तथा मृत्यु का निर्धारण होता है। इसी कारण इन अंको को बहुत ही शुभ माना जाता है। अर्थात उसका कोई विशेष आकार नही होता है। इन अंकों सात + पाँच को जोड़ने पर 12 अंक प्राप्त होता है। जो 12 ज्योतिर्लिंग और 12 गोत्र समूह से जोड़ा जाता है। ये 2250 प्रतीकों के रहस्य को भी उजागर करता है।

सीधी सिंगरौली मे गोत्र व्यवस्था

मध्य प्रदेश के पूवी भाग जहा गोंड जनजातियों की संख्या बहुतायत मे पायी जाती है। यहा सम्पूर्ण 750 गोत्र नही पाए जाते है। यहा मुख्य रूप से 6 समूह के गोत्रधारी ही पाये जाते है। विवाह की प्रक्रिया इसी के आधार पर संचालित किए जाते है जबकि बालाघाट, सिवनी, बैतूल परिक्षेत्रों मे देवव्यवस्था के आधार पर वैवाहिक संबंध बनाए जाते है। सीधी सिगरौली में वैवाहिक सन्बध पूर्णरुपेन गोत्र व्यवस्था पर आधारित है। तदनुसार छ्ह गोत्रधारी समूह अपने गोत्र समूह को छोड़ कर शेष पाँच समूह में किसी भी गोत्र मे विवाह कर सकते है। क्योकि एक समूह के सभी गोत्र उनके पट्टेदार अर्थात वे सभी आपस मे भाई- बहन माने जाते है। जैसे —एक समूह मे मरकाम, पोया, पोयाम, नेटिया, कुशरो, सोरी आदि। ये सभी अपने गोत्र समूह मे लड़के या लड़की से विवाह नहीं कर सकते। जो सामाजिक व्यवस्थानुसार पूर्णत वर्णित है क्योकि ये एक ही रक्त समूह के माने जाते है। रीवा सीधी, सतना सिंगरौली तथा छत्तीसगढ़ मे इसे सामाजिक अपराध भी माना जाता है। इस संबंध में अपराध करने वाले लोगो को समाज से बहिष्कृत कर दिया जाता है और एक दो पीढ़ी बीत जाने के बाद सामाजिक दंड

के साथ उन्हे सामाजिक नियमों के अनुसार शामिल किया जाता है।

रीवा सीधी सिंगरौली शहडोल और छत्तीसगढ़ मे प्रचलित गोंड वंश की गोत्रावली (गोत्र व्यवस्था)

जन्मगढ़ा –राय सिंगौरगड़ा गोत्र –कुरुम	जन्मगढा-मंडला गोत्र –आंडिल	जन्मगढ़ – देवगढ़ गोत्र –पहुप	जन्मगढ़ – धमधागढ़ गोत्र –सांडिल	जन्मगढ़ हीरागढ़ गोत्रकाशी
1.आयाम 2.ओइमा 3.ओची 4 . केराम 5.झिकराम 6.टेकाम 7.डंडावाची 8.तोलगाम 9.धुर्वे 10.धुरायाम 11.नेताम 12.पुशाम 13.मरपाची 14.शिवराम 15.सिंदराम संदराम 16.लेडाम 17.सारियाम 18.झुकराम	1.आरमोर 2.करपेती 3.कोलिहा 4.कंगाली 5.खुरसेगा 6.घेड़ाम 7. पेन्द्रो[पेन्द्राम] 8.भलावी 9.भादिया 10.मसकोले 11.मरावी 12.मसराम 13.श्याम 14.सरुता 15.सलगाम 16.सरोते 17.मलावी 18 .सुरसेगा	1.आर्मो ,अरमों 2. उईके ,उइका 3.उरपेती ,उर्वेती 4.ओरकरे ,बरकड़े 5. ओढ़े , ऊददे 6.ओलाड़ी 7.कोराम 8.जगत धुरुआ 9. निरा 10.पावले 11.पोटा 12.मरापो	1.कुशरो कुशराम ,कुशरे 2.मरकाम ,मार्को ,मार्के 3.पोया ,पोयाम ,पैगाम 4.नेटिया , नेटी 5.सिरसो 6.सोरी	1.ओटी 2.चिरको 3.पोटी 4.सलाम

750 गोत्रों (कुरा) का महत्व-- गोंड समाज मे गोत्रों का निर्धारण मे गोंडी गुरु पारी कुपार लिंगो द्वारा किया गया है। हर गोत्र के लिए एक पशु ,एक पक्षी,एक पेड़ (वनस्पति) चिन्हित किया गया है। तदनुसार इसी लिए गोत्रों को चिन्हित या आवंटित किया गया है। किसी भी जानवर या पौधो को संबन्धित गोत्र का व्यक्ति नुकसान नहीं पहुचा सकता है। बल्कि वे उनकी रक्षा करेते है। जबकि अन्य गोत्रधारी वाले व्यक्ति उनका सेवन कर सकते है। अर्थात 750 गोत्रों मे सभी गोत्रों को

मिला कर 750 का तीन गुना 2250 प्रकार के जानवरो पक्षियो तथा वनस्पति का रक्षण तथ भक्षण साथ मे करते आ रहे है। जिससे प्रमाणित होता है ,कि इस समाज के लोग प्रकृति का संतुलन बनाये रखने के लिए इस व्यवस्था को बनाए है।अर्थात वे प्रकृति के लिए कुछ भी कर सकते है। जैसे कि टेकाम गोत्र का व्यक्ति वनस्पति मे सागौन,पक्षी मे लाल पीतते और पशु मे कछुआ की रक्षा करते है। ठीक उसी तरह ताराम गोत्रधारी मे ताड़ का पेड़, बकुला पक्षी और जानवरो मे घोड़े की रक्षा करते हुये अन्य गोत्रधारियों को आवंटित पशु पक्षियो एवं वनस्पतियों का भक्षण करते है। ऐसे ही प्रकृति का संतुलन बना रहता है। इसी तरह सभी गोत्रों के निर्धारण किया जाता है।

अध्ययन का उदेश्य ---गोंडवाना भू -भाग मे पारी कुपार लिंगो के द्वारा स्थापित गोत्र व्यवस्था को सुचारु रूप से पालन करते हुये प्राकृतिक अंग के रूप मे अन्य समाजो को जागृत करने का काम करते है। जिसके माध्यम से इस संसार मे सभी जीव जन्तु एवं वनस्पतियों का संतुलन स्थापित किया जा सके। मेरे द्वारा इस अध्यायन का उदेश्य है कि गोंड जनजाति का सामाजिक यह व्यवस्था जो प्रकृति पर आधारित है किन्तु इस आधुनिकता के दौर मे विलोपित होती जा रही है। इस शोध के माध्यम विलुप्त होती जा रही इस समुचित सामाजिक एवं प्राकृतिक व्यवस्था को अपने अपने स्तर से प्रयासरत रहते हुये कायम रखा जा सके। ताकि प्राकृतिक संतुलन बिगड़ने न पाये। और हम सबो को प्रकृति का सेवा निरंतर मिलता रहे।

निष्कर्ष -- अंत मे उपयुक्त विवेचना के आधार पर यह कहा जा सकता है, कि गोंड जनजातियों को गोत्र व्यवस्था मे ऐतिहासिकता के साथ साथ सेवा जनकल्याण प्राकृतिक धर्म पालन की बात बताई गई है। और 750 गोत्रों के महत्व के बारे मे बताया गया है। जो अपनी विशेष सामाजिक धार्मिक मान्यताओ की पहचान को बनाए रखा है। जिससे उनकी मूलभूत संस्कृति संस्कारो परंपराओ धरोहर रीति रिवाजो को बचाए रखने मे मदद मिलती है। गोंड मूलतः प्रकृति आधारित धर्म को पुनम के अनुयायी हैं। आदिवासी जनों की मान्यता है कि इस देव परंपरा /संस्कृति में बूढ़ादेव उनके कुल गोत्र/कुनबा का पहला व्यक्ति है, जो बूढ़ा होकर अपना भौतिक देह त्याग चुका है। उसकी जीवात्मा को अपने कुल/कुनबा/पूर्वज/देव के रूप में साजा के झाड़ के मूल में स्थापित कर दिया गया है। कि गोंड जनजाति का सामाजिक यह व्यवस्था जो प्रकृति पर आधारित है किन्तु इस आधुनिकता के दौर मे विलोपित होती जा रही है

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. इनवाती श्री केहर सिंह (2005 अप्रैल), 'गोंदी धर्म का शुंभाक 'गोडवाना दर्शन'
2. यादव नीतू , अप्रैल 2019 मध्य प्रदेश के गोंड जन जातीय ' शोध पत्र
3. मरकाम श्री फते बहादुर सिंह गोंडी धर्म दर्शन एंव संस्कृति संस्कार
4. भदोरिया श्री सीताराम, 2002, आदिवासियो का संक्षिप्त सामाजिक इतिहास 'रानी दुर्गवती प्रकाशन जबलपुर
5. कंगाली श्री मोती रावण, 2005, गोडवाना का सांस्कृतिक इतिहास
6. मरकाम श्री फते बहादुर सिंह मरकाम 2017 आदिवासी विधि विवाह संस्कार, गोड़वाना विकास मण्डल
7. कुमारे श्री आत्माराम, गोड़ियन मुक्ति ग्रंथ 'आदर्श प्रिंट छिंदवाड़ा
8. बडकड़े श्री बारेलाल 2018, कोया पुनेम गोड़ियन गाथा 'गोडवाना संस्कृति एंव रीति -रिवाज
9. कंगाली श्री मोती रावण 2003 " पारी कुपार लिंगो गोंडी पुनेम दर्शन ' गोंडी पुनेम महा संघ
10. देवगढ़ एवं नागपुर के गोंड शासक,डॉ भा. रा.अंधारे , हिन्दी-मराठी प्रकाशन,नागपुर
11. महाकौशल गोंडवाना का भूला बिसरा इतिहास(पौराणिक काल से आधुनिक युग तक) सुरेश पटवा, वंश पब्लिकेशन भोपाल(म प्र)
12. गोंडवाना की जमा पूंजी, संपादक -ऊषा किरण आत्राम ताराम, हिन्दी मराठी प्रकाशन, नागपुर

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

कबीर समाज सुधारक के रूप में

ललित कुमार
एम. ए. तृतीय सत्र हिन्दी एव अन्य भारतीय भाषा विभाम, जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
राया सुचानी बांग्ला जम्मू - कश्मीर
फोन नंबर- 9797761146
Ward No- 3 Samba-184121

शोध सार- समाज सुधारक के रूप में विख्यात संत काव्याधर के प्रमुख कवि कबीर का नाम हिन्दी साहित्य में बड़े आयर के साथ लिया जाता है। कबीर समाज सुधारक पहले कवि बाद में है। उन्होंने समाज में व्याप्त रूढ़िया तथा अंधविश्वास पर करार व्यंग्य किया है। उन्होंने धर्म का सम्बंध सत्य से जोड़कर समाज मे व्याप्त रूढ़िया परंपरा का खंडन किया है। कबीर के मानव जाति को सर्वश्रेष्ठ बताया है तथा कहा है कि इसमे से कई भी ऊंचा या नीच नहीं है। उन्होंने समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों व बुरीयों को दूर करने का प्रयास किया है। कबीर ने मानव जाति को एक अच्छा संदश दिया है।

मुख्य शब्द- निरक्षर, भक्ति, अज्ञानता, दार्शनिक, उपवास आदि।

हिन्दी साहित्य जगत बहुत पुराना है। इस जगह के दूसरे चरण भक्तिकाल तथा स्वर्णयुग के नाम से भी जाना जाता है। इस युग के दो धाराएँ प्रचलित थी। पहला सगुणधारा के अंतर्गत में राम काव्यधारा व कृष्ण काव्यधारा और दूसरा निर्गुणधारा के अंतर्गत संत काव्यधारा व सूफी काव्यधारा शामिल थे। प्रस्तुत शोध लेखन का विषय संत काव्यधारा के प्रमुख समाज सुधारक कवि कबीरदास है। संसाररूपी सागर में बहुत सारे रत्नों का जन्म हुआ। हमारा प्यारा भारतवर्ष तो रत्नों से भरा हुआ है। उन्हीं महान रत्नों में से एक थे संत कबीरदास वे पहले एक समाजसुधारक थे, बाद में कवि तथा भक्त। कबीरदास का जन्म सन् 1398 ईस्वी में मन जाता है। उनका जन्म और माता-पिता को लेकर बहुत विवाद है लेकिन यह स्पष्ट है कबीर जुलाहा थे। उन्होंने अपनी कविता में इस बात का जिक्र कई बार किया है। कबीर अपनी ब्रम्ह को निर्गुण और सगुण से परे मानते थे और उनका कहना था—

"हम निर्गुण तुम सगुण जाना''

इस प्रकार वे स्वय को सगुनोपासना की पद्धति से अलग कर लेते है उनका ब्रह्म न तो वेद ग्रंथ लिखित ईश्वर है न कुरान लिखित खुदा।

कबीरदास को पढ़ना लिखना नहीं आता था। वे निरक्षर थे पर वे एक महान सुप्रसिद्ध दार्शनिक थे। उनका कहना है-

"मसि कागद छुईऊ नहीं कलम गहयो नहीं हाथ"

कबीरदास धर्म के नाम पर होने वाले दंगों का खंडन किया है। उन्होंने ने भगवान का निवास स्थान अपने मन में ही बताया है।

"कस्तूरी कुंडली बसे, मृग ढूँढे बन माहि।
ऐसे घटि-घटि राम है, दुनिया देखे नाहि।"

कबीर कहते है हिरण कस्तूरी की खुशबू को जंगल में ढूंढता फिरता है। जबकि कस्तूरी की वह सुगंध उसकी अपनी नाभि में व्याप्त है। परंतु वह जान नहीं पाता। उसी प्रकार भगवान कण-कण में व्याप्त है परंतु मनुष्य उसे तीर्थो में ढूंढता फिरता है।

हिंसा का विरोध –संत कवि कबीरदास हिंसा का विरोध करते है उन्होंने उन लोगों से नफरत है जो जीवों को खाते है–

"बकरी पाती खात है, ताकि काढ़ी खाल।
जो नर बकरी खात है, तिनको कोन हवाल।"

कबीर कहते है कि बकरी हरी पतियों को खाती है फिर भी उसकी खाल उधड़ी जाती है तब भला सोचिए जो व्यक्ति बकरी को खाते है उसल क्या होगा?

जाती पाति का विरोध –कबीर ने जाती पाती का विरोध किया है वे समान मे व्याप्त वर्ण व्यवस्था तथा जाती –पाती के भय भाव मे सुधार करना चाहते थे।

"जात पात पूछे न कोई,
हरि को भजे सो हरि का होई।"

कबीरदास जाती विभाजन का विरोध करते है वे खाते है कि जाती पाती को कोई नहीं पूछता हम एक ही ईश्वर कि संतान है।" हरि का यमतलब जीबन मे सदकरम , सदशिक्षा से नाता जोड़ना है।

मूर्ति पूजा का खण्डन–कबीर ने मूर्ति पूजा का खण्डन किया है–

"कबीर पाहन पूजे हरि मिले, तो मैं पूजू पहार।
घर की चाकी क्यों नाहि पूजे पीसी खाय संसार।"

कबीर कहते हैं कि यदि पत्थर की पूजा करने से भगवान मिलते है तो मैं पहाड़ की चक्की को नहीं लेता। उसकी जगह कोई घर की चक्की को नहीं पूजता जिसकी अनाज को पीसकर सभी लोग अपना पेट भरते है।

लोक कल्याण की भावना –कबीर समाज की कल्याण के लिए लोक मंगल की भावना को प्रोत्साहित करते है। समाज में सुधार के लिए लोक कल्याण की कामना करते हुए वे कहते हैं कि संसार में यदि कोई आप का मित्र नहीं हैं तो दुश्मन भी न हो। मानव को स्वार्थी की भावना को छोड़कर उच्च तथा आदर्श जीने का उपदेश देता है–

"कबीर खड़ा बाजार में, मांगे सब की खैर,
न काहू सो दोस्ती, न काहू सो बैर।"

पाखंड का खण्डन –कबीर समाज के पाखंडवाद पर व्यग्य करते हुए कहते हैं जो दिन भर तो व्रत रखते है परंतु पत को गाय का मास खाते है। मैं नहीं समझ पाता की इसमे ईश्वर कैसे खुश होते है। उन्होंने समाज मे व्याप्त पाखंड का खण्डन किया है–

"दिन भर रोजा रहत है, रात हनत दे गाय,
यह तो खून व बन्दगी, कैसे खुशी खुदाय।''

कबीर दस कहते है कि लम्बे समय तक हाथ मे माला घुमाने से मन कि चंचलता शांत नहीं होती, बल्कि सच्चा बदलाव तो मन के अंदर से आता है, इसलिए बाहरी माला फेरने के बजाय मन के मोतियों को बदलने कि आवश्यकता है।

"माला फेरत जुग भया, फिरा न मन का फेर,
कर का मनका डार दे, मन का मनका फेर।"

निष्कर्ष

कबीर एक महान संत, कवि, समाज सुधारक थे वे हर जगह मे सुधार लाना चाहते थे। कबीर ने आपनी सुधक्कड़ी

भाषा विरोध समावेश से समड़ी मे फेली कुरीतियों तथा केवीचाये का जोर-तोर खण्डन किया। कबीर जीवन को एक ही तरीके समानता के आधार पर देखते थे। वे राम रहीं के नाम पर चल रहे भेदभाव तथा उनके बिय कुरीतियों को भरने का प्रयास किया। कबीर समाज सुधारक के साय ही एक क्रांतिकारी थे। जिन्होंने निडर भावना से समाज में चल रहे कुरीतियों पर आपने विचार व्यक्त किए। कबीर समाज को प्रेम की धार तथा एक नई दिशा देने का प्रयास किया। वे समाज तथा धर्म के नाम पर व्याप्त पाखंड, अंधविश्वास, हिंसा व मूर्ति पूजा का विरोध किया। संत कबीर का सम्पूर्ण साहित्य समाज को एक सही पथ दिखाकर उस पर चलने के लिए प्रेरणा देते है।।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. श्याम सुंदर दास, कबीर ग्रंथवाली पृष्ठ 112
2. श्याम सुंदर दास, कबीर ग्रंथवाली
3. माता प्रसाद , कबीर ग्रंथवाली, पृष्ठ 65
4. शिव कुमार शर्मा पृष्ठ 14
5. बीजक पृष्ठ 388
6. जयदेव सिंह, कबीर वाणी , पीयूष पृष्ठ 133
7. डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी कबीर पृष्ठ 77-78

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

किन्नर विमर्श : सामाजिक पहचान और आधुनिक संदर्भ में संभावनाएँ

Dr. Anupama
Assistant Professor, Department of Hindi
Mount Carmel College, Autonomous,
#58, Palace Road, Abshot Layout,
Vasanth Nagar, Bangalore-560032.
Phone Number-8105566341, Email.Id- pa.anupama09@gmail.com

शोध सार

भारतीय समाज विविधता से परिपूर्ण है। यहाँ धर्म, भाषा, संस्कृति और समुदायों की भिन्नता में भी एकता का भाव देखा जाता है। इसी विविधता में एक विशिष्ट पहचान रखता है किन्नर समुदाय। यह समुदाय प्राचीन काल से लेकर आज तक सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन में विशिष्ट भूमिका निभाते आए हैं। किन्नरों का उल्लेख प्राचीन धार्मिक ग्रंथों, महाकाव्यों और लोक-कथाओं में मिलता है। जहाँ एक ओर वह धार्मिक अनुष्ठानों और लोक-संस्कृति में आशीर्वाद देनेवाली शक्ति के रूप में पूजित हैं, वहीं दूसरी ओर उन्हें सामाजिक भेदभाव और उपेक्षा का भी सामना करना पड़ा है। उनका जीवन संघर्षों से भरा रहा है लेकिन हाल के वर्षों में उनके सशक्तीकरण की दिशा में कई महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं। समाज, सरकार और विभिन्न संगठनों को मिलकर यह सुनिश्चित करना होगा कि, किन्नर समुदाय को न केवल अधिकार मिले, बल्कि वे सम्मानजनक जीवन भी जी सके। जब तक सामाजिक मानसिकता में बदलाव नहीं आता, तब तक कानून और योजनाएँ भी सीमित प्रभाव ही डाल पायेंगी।

प्रस्तावना

भारतीय समाज में 'किन्नर' शब्द का प्रयोग प्राचीन काल से ही एक विशेष समुदाय के लिए किया जाता है। सामान्यतः किन्नर उन्हें कहा जाता है जो न तो पूरी तरह पुरुष होते हैं और न ही पूरी तरह स्त्री। अर्थात् किन्नर ऐसे व्यक्ति होते हैं जो जैविक रूप से पुरुष या महिला के पारंपरिक लक्षणों से पूरी तरह फिट नहीं होते, या जो स्वयं को पुरुष या महिला के रूप में पहचान नहीं करते। वे अक्सर ट्रांसजेंडर, इंटरसेक्स या अन्य लिंग पहचानवाले व्यक्ति होते हैं। भारत में 'किन्नर शब्द' आमतौर पर उन लोगों के लिए प्रयोग होता है, जो एक विशिष्ट सामाजिक और सांस्कृतिक समुदाय से जुड़े होते हैं, जिसे हिजड़ा समुदाय भी कहा जाता है, जिसकी अपनी परंपराएँ, नियम और जीवनशैली होती है। भारत सरकार ने वर्ष 2014 में सर्वोच्च न्यायालय के ऐतिहासिक 'नालसा बनाम भारत सरकार' (NALSA Vs Union of India) फैसले के तहत किन्नरों को 'तीसरे लिंग' (Third Gender) के रूप में संवैधानिक मान्यता प्रदान की। इस प्रकार किन्नर केवल एक जैविक परिभाषा तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पहचान से जुड़ा हुआ एक व्यापक समुदाय है। सदियों

से वे लोकविश्वास, आस्था और सामाजिक रीति-रिवाज़ों का हिस्सा रहे हैं। फिर भी उन्हें समाज में सम्मान और समानता प्राप्त करने की प्रक्रिया संघर्षपूर्ण रही है।

किन्नर के पारंपरिक पहचान एवं सामाजिक भूमिका

भारतीय इतिहास और पौराणिक साहित्य में किन्नरों का उल्लेख सम्मानजनक रूप में मिलता है। रामायण में वर्णन हैं कि, जब श्रीराम वनवास के लिए अयोध्या छोड़कर गए, तो उनके साथ किन्नर भी गए। भगवान राम ने उन्हें आशीर्वाद दिया और विशेष दायित्व सौंपा। महाभारत में शिखंडी का पात्र तीसरे लिंग की पहचान का प्रमाण है, जिसने कुरुक्षेत्र युद्ध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। पुराणों में किन्नरों को गंधर्व और अप्सराओं की भांति स्वर्गीय प्राणी माना गया, जो नृत्य और संगीत में निपुण थे। इन प्रसंगों से स्पष्ट होता हैं कि, किन्नर न केवल स्वीकार्य थे बल्कि धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं में भी उन्हें विशेष स्थान प्राप्त था। मध्यकालीन भारत, विशेषकर मुगल शासकों और मुगल दरबारों में किन्नर की स्थिति सम्मानजनक थीं। राजप्रासादों में हरम की सुरक्षा कार्य उन्हें सौंपा जाता था। कई बार वे गुप्त संदेशवाहक और राजनीतिक सलाहकार भी बने। तुर्क और मुगल शासक उन्हें विश्वसनीय मानते थे और महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्त करते थे। इस काल में किन्नर केवल धार्मिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं रहे, बल्कि राजनीति और सत्ता संरचना का भी हिस्सा बने। लेकिन ब्रिटिश शासन ने किन्नरों के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्व को गंभीर क्षति पहुँचाई। 1871 का अपराधिक जनजाति अधिनियम (Criminal Tribes Act) के अंतर्गत किन्नरों को 'संदिग्ध चरित्र' वाली जाति घोषित किया गया। उन्हें सार्वजनिक जीवन से दूर कर दिया गया और उनकी परंपरागत भूमिकाओं को अपराध मान लिया गया। इसमें न केवल उनकी सामाजिक गरिमा ध्वस्त हुई, बल्कि उन्हें हाशिए पर जीवन बिताने के लिए बाध्य होना पड़ा।

किन्नर समुदाय की परंपराएँ और रीति-रिवाज़ समाज के साथ गहराई से जुड़े हैं, जो उन्हें भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग बनाते हैं। किन्नर समुदाय का जीवन संगठनात्मक ढाँचे पर आधारित है, जिसे गुरु-चेला परंपरा कहा जाता है। प्रत्येक किन्नर किसी न किसी गुरु के अधीन जीवन व्यतीत करता है। गुरु उनके लिए मार्गदर्शक, रक्षक और अनुशासनकर्ता की भूमिका निभाता है। शिष्य या 'चेला' गुरु से न केवल जीवन जीने की रीति सीखता है, बल्कि समाज के साथ व्यवहार करने अपनी पहचान बनाए रखने और अपनी आजीविका चलाने के तरीके भी सीखता है। यह परंपरा किन्नर समुदाय की सामूहिकता और एकजुटता का प्रतीक है। गुरु-चेला का संबंध केवल अनुशासन का नहीं, बल्कि परिवार का विकल्प है क्योंकि अधिकांश किन्नरों को उनके जन्म परिवार अस्वीकार कर देते हैं। किन्नरों की पारंपरिक पहचान केवल लिंग या शरीर की विशेषताओं पर आधारित नहीं होती, बल्कि यह एक सांस्कृतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक पहचान हैं।

भारतीय समाज में किन्नरों की सबसे प्रमुख भूमिका आशीर्वाद देने की परंपरा रही है। परंपरागत रूप से किन्नर समुदाय जन्म, विवाह और अन्य धार्मिक अनुष्ठानों में आशीर्वाद देने का कार्य करता है। लोकविश्वास हैं कि, किन्नरों का आशीर्वाद शुभ होता है और उनके श्राप का असर नकारात्मक हो सकता है। यह परंपरा रामायण की उस कथा से जुड़ी मानी जाती है, जहाँ श्रीराम ने किन्नरों को आशीर्वाद दिया कि, वे मांगलिक अवसरों पर आशीर्वाद देकर समाज में सम्मान पायेंगे। इस परंपरा के कारण समाज में उनकी एक धार्मिक और सामाजिक उपयोगिता बनी रही, जिसने उन्हें लंबे समय तक मुख्यधारा से जोड़े रखा। यह प्रथा दर्शाती हैं कि, भारतीय संस्कृति ने विविधताओं को सम्मान देने की परंपरा अपनाई थी। किन्नर केवल सामाजिक अनुष्ठानों तक सीमित नहीं रहे, बल्कि धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन में भी उनका विशेष स्थान रहा है। तमिलनाडु का 'कोवगम उत्सव' किन्नरों की धार्मिक आस्था और सांस्कृतिक पहचान का सबसे बड़ा उदाहरण है। यह उत्सव महाभारत की कथा से जुड़ा है, जहाँ किन्नर समुदाय अर्जुन के पुत्र अरावन का विवाह रचते हैं। इस उत्सव में हज़ारों किन्नर भाग लेते हैं और इसे अपनी सामूहिक पहचान का उत्सव मानते हैं। उत्तर भारत और अन्य क्षेत्रों में भी कई धार्मिक मेलों, मंदिरों और लोक-उत्सवों में किन्नरों की भागीदारी देखने को मिलती है। किन्नरों के नृत्य, गायन और आशीर्वाद लोक-संस्कृति के महत्वपूर्ण अंग बन चुके हैं। इन उत्सवों और प्रतीकों से किन्नर समुदाय अपनी सामाजिक उपस्थिति को मज़बूत करता है और सांस्कृतिक

जीवन में निरंतर सक्रिय रहता है।

गुरु-चेला परंपरा मंगल अवसरों पर आशीर्वाद देने की परंपरा और धार्मिक सांस्कृतिक उत्सवों में भागीदारी-ये सभी किन्नर समुदाय की सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक अस्तित्व की नींव है। इन परंपराओं ने उन्हें न केवल समाज में पहचान दी, बल्कि एक विशिष्ट गरिमा और सामूहिकता भी प्रदान की। यद्यपि आधुनिकता और सामाजिक बदलाओं के कारण इनकी भूमिकाएँ बदल रही है, फिर भी ये परम्पराएँ आज भी किन्नरों को भारतीय संस्कृति का अभिन्न हिस्सा बनाए हुए हैं। फिर भी "हमारा भारतीय समाज किन्नरों के साथ धार्मिकता से अलग-अलग व्यवहार करता है। धार्मिक दृष्टि से एक जगह पर इन्हें पवित्र स्थान मिलता है। तो वहीं दूसरी जगह पर व्यवहारिक दृष्टि से इनके साथ अत्यंत हेय व्यवहार किया जाता है। इन्हें हमेशा के लिए हाशिए पर रखा गया है।"(1)

किन्नर विमर्श की परिभाषा

'विमर्श' का अर्थ है- किसी विशेष वर्ग या समुदाय के जीवनानुभवों, समस्याओं और अधिकारों पर केंद्रित बहस और विचार प्रक्रिया। जैसे स्त्री विमर्श ने महिलाओं की आवाज़ को साहित्य और समाज में स्थान दिलाया, वैसे ही किन्नर विमर्श किन्नर समुदाय की अस्मिता, अधिकारों और संघर्षों पर आधारित एक सामाजिक-सांस्कृतिक और वैचारिक आंदोलन है। यह विमर्श न केवल समाज की पारंपरिक धारणाओं को चुनौती देता है, बल्कि एक अधिक मानवीय और न्यायपूर्ण दृष्टिकोण की ओर भी संकेत करता है। समाज की सच्ची पहचान उसकी विविधताओं को स्वीकारने और सभी को समान अधिकार देने में हैं। किंतु भारतीय समाज में लंबे समय तक किन्नर समुदाय को उपेक्षित और हाशिए पर रखा गया। यही कारण हैं कि, किन्नर विमर्श की आवश्यकता उत्पन्न हुई, जो केवल किन्नरों की समस्याओं को उजागर करने का प्रयास नहीं है, बल्कि समान अधिकार और मानवीय गरिमा की स्थापना का एक आंदोलन है।

"सभ्य समाज से निराश्रित, बहिष्कृत एवं तिरस्कृत, यह वर्ग दो वक्त की रोटी का मोहताज होने के साथ ही अकेलेपन एवं अजनबीपन की पीड़ा को झेलने के लिए भी बाध्य हैं समाज उन्हें प्रतिपल होकर तो मारता ही है साथ ही भद्दी गाली और उपहास उड़ाकर पुरस्कृत भी करता है।"(2)

किन्नर समुदाय की चुनौतियाँ : सामाजिक उपेक्षा और संघर्ष

भारतीय संविधान प्रत्येक नागरिक को समानता का अधिकार देता है परंतु व्यवहारिक जीवन में किन्नर समुदाय इस अधिकार से वंचित रहा है। किन्नर विमर्श यह माँग करता हैं कि, किन्नरों को न केवल कागज़ पर बल्कि वास्तविक जीवन में भी शिक्षा, नौकरी और राजनीतिक प्रतिनिधित्व के समान अवसर मिले। सामाजिक न्याय का अर्थ है, समाज के हर वर्ग को उसकी स्थिति और ज़रूरत के अनुरूप अधिकार और अवसर प्रदान करना। किन्नर समुदाय वर्षों से भिक्षावृत्ति, नाच-गाना या हाशिए पर आधारित कार्यों तक सीमित कर दिया गया। उन्हें परिवार और समाज से अस्वीकृति मिली, जिससे वे शोषण और हिंसा का शिकार बने। सामाजिक न्याय के बिना यह समुदाय मुख्य धारा से नहीं जुड़ सकता। किन्नर विमर्श इस बात पर ज़ोर देता हैं कि, उन्हें आरक्षण, रोज़गार योजनाएँ और शिक्षा में विशेष अवसर देकर न्याय सुनिश्चित किया जाए।

मानव मात्र की पहचान उसकी गरिमा से होती है। किन्नर समुदाय के साथ उपहास, भेदभाव और हिंसा का व्यवहार उनकी मानवीय गरिमा को ठेस पहुँचाते है। उन्हें सार्वजनिक स्थलों पर तिरस्कार झेलना पड़ता है। मीडिया और समाज में अक्सर उन्हें हास्यास्पद रूप में प्रस्तुत किया जाता है। उनका यौन और मानसिक शोषण आम है। किन्नरों की जीवन समस्याओं के ऊपर सहानुभूति प्रकट करते हुए सुधीश पचौरी लिखते हैं- "असामान्य लिंगी होने के साथ ही समाज के हाशिए पर धकेल दिए गए, इसकी सबसे बड़ी समस्या आजीविका है जो इन्हें अंततः इनके समुदायों में ले जाती है। इनका वर्जित लिंगी होने का अकेलापन 'एक्स्ट्रा' है और वही इनकी ज़िन्दगी का निर्णायक तत्व है। अकेले अकेले बहिष्कृत ये किन्नर आर्थिक रूप से भी हाशिए पर डाल दिए जाते है। कल्चरल तरीके से फिक्स कर दिए जाते है। यह जीवन शैली की लिंगीयता है जिससे

स्त्री लिंगी-पुलिंगी मुख्य धाराएँ हैं जो इनको दबा देती हैं। नपुंसक लिंगी कहाँ, कैसे जियेंगे? समाज का सहज, स्वीकृत हिस्सा कब बनेंगे?"[3]

किन्नर विमर्श की आवश्यकता इसीलिए है क्योंकि यह केवल किन्नर समुदाय का प्रश्न नहीं, बल्कि मानवाधिकार, लोकतंत्र और समावेशिता का प्रश्न है। समाज में किसी भी वर्ग को उसकी पहचान और अधिकार से वंचित करना लोकतंत्र की आत्मा के खिलाफ है। विमर्श के माध्यम से समाज में जागरूकता आती है और सकारात्मक दृष्टिकोण का विकास होता है। किन्नर विमर्श हमें यह सिखाता हैं कि, हर व्यक्ति को उसकी पहचान के साथ स्वीकार करना और सम्मान देना ही एक सभ्य समाज की असली पहचान है।

आधुनिक युग में भी किन्नर समुदाय कई गंभीर चुनौतियों का सामना कर रहा है। किन्नर समुदाय के ऊपर होनेवाला भेदभाव भारतीय समाज की एक गंभीर और संवेदनशील समस्या है। यद्यपि किन्नरों को अब कानूनी मान्यता और कुछ अधिकार प्राप्त हो चुके हैं, फिर भी वास्तविक जीवन में उन्हें अनेक प्रकार के भेदभाव का सामना करना पड़ता है, जो उनके सामाजिक, मानसिक, शैक्षिक और आर्थिक विकास में बाधा बनता है। समाज किन्नरों को सामान्य नागरिक की तरह नहीं देखता। उन्हें 'अशुभ', 'अलग' या 'असामान्य' मान लिया जाता है। पारिवारिक स्तर पर उन्हें अस्वीकार कर दिया जाता है, जिससे उन्हें बचपन में ही घर से निकाल दिया जाता है। महेंद्र भीष्म लिखते है, "संतान कैसे भी हो, उसमें कैसी भी शरीरिक, मानसिक कमी क्यों न हो, माता-पिता को अपनी संतान हर हाल में भली लगती है, प्यारी होती है, फिर भले ही वह संतान हिजड़ा ही क्यों न हो। फिर भी सामाजिक परिस्थितियों, खानदान की इज्ज़त-मर्यादा, झूठी शान के सामने अपने हिजड़े बच्चे से उसके जन्मदाता हर हाल में छुटकारा पा लेना चाहते हैं।"[4]

परिणामतः वे कम उम्र में ही अपने जैसे अन्य किन्नरों के समुदाय में शामिल होने को मज़बूर हो जाते हैं। साथ ही साथ सामाजिक उपहास और भेदभाव के कारण शिक्षा तक उनकी पहुँच बहुत सीमित है। स्कूलों में उनका मज़ाक उड़ाया जाता है, गालियाँ दी जाती है और शारीरिक हिंसा भी की जाती है। शिक्षक भी अक्सर उनके प्रति संवेदनशील नहीं होते और उन्हें अलग या हीन दृष्टि से देखते हैं। ऐसे में बहुत से किन्नर बच्चे स्कूल छोड़ देते हैं और शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। परिणामतरू वे कम शिक्षित रहते हैं और बेहतर नौकरियों के लिए अयोग्य बन जाते हैं। "किन्नर के रूप में पैदा होने के लिए न तो किन्नर दोषी होती है और न ही उसके जनक जननी। किन्नर होना महज एक प्राकृतिक त्रुटी है ठीक वैसे ही जैसे कि, शरीर के अंगों में विकार होना। शरीर के अन्य अंगों में त्रुटी के साथ पैदा होनेवाले किसी बच्चों को समाज और परिवार सहज स्वीकार कर लेता है परंतु अगर किसीके घर पर हमला बच्चे का जब हो जाए तो मैं एक सामाजिक अवमूल्य का कारण बन जाता है मातम से भी ज़्यादा घातक।"[5]

सरकारी और निजी क्षेत्र में ट्रांसजेंडर व्यक्तियों की नियुक्ति को लेकर झिझक है। जो पढ़े लिखे हैं, वे भी अपेक्षा और यौन-उत्पीड़न के कारण स्थायी नौकरी नहीं कर पाते। उन्हें 'प्रोफेशनल' नहीं माना जाता और कई कंपनियाँ उन्हें 'इमेज' के खतरे के रूप में देखती है। किन्नरों को स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का भी शिकार होना पड़ता है। किन्नरों के लिए स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा की स्थिति बेहद चिंताजनक है। लिंग परिवर्तन सर्जरी (Sex Reassignment Surgery), मानसिक स्वास्थ्य और यौन स्वास्थ्य सेवाएँ महँगी होने के कारण अधिकांश किन्नरों की पहुँच से बाहर रहती है। किन्नरों को उन सुविधाओं तक उचित पहुँच न होने से एचआईवी/एड्स जैसी बीमारियों का खतरा अधिक रहता है।

किन्नर समुदाय पर कानूनी और संवैधानिक पल

21वीं सदी में न्यायपालिका और विधायिका ने किन्नरों के अधिकारों और उनके सम्मान को सुनिश्चित करने के लिए महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं। इन पहेलुओं में सबसे प्रमुख है सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय संसद द्वारा पारित कानून और विभिन्न सरकारी योजनाएँ। वर्ष 2014 में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के छ ि। बनाम भारत सरकार मामले में किन्नरों को तीसरे लिंग के रूप में कानूनी मान्यता दी। इस निर्णय में न्यायालय ने कहा कि, किन्नरों को समान नागरिक अधिकार, शिक्षा, रोज़गार

और स्वास्थ्य सेवाओं में पूर्ण समानता का अधिकार है। कोर्ट ने सरकार और राज्य सरकारों को निर्देश दिया कि, वे किन्नरों को सामाजिक सुरक्षा, पहचान पत्र और अन्य आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध कराएँ। इसके बाद वर्ष 2019 में संसद ने ट्रांसजेंडर पर्सन्स (प्रोटेक्शन ऑफ़ राइट्स) एक्ट पास किया। इस कानून के मुख्य बिंदु हैः ट्रांसजेंडर व्यक्तियों को शिक्षा, रोज़गार और स्वास्थ्य में समान अवसर प्रदान करना। Smile योजना (2022) के अंतर्गत किन्नरों को पुनर्वास, कौशल विकास और आजीविका के अवसर प्रदान किए जाते हैं। "न्यायालय ने अपने एक ऐतिहासिक निर्णय के द्वारा इस समुदाय को न केवल 'तृतीय लिंग' की पहचान देने बल्कि, उन्हें सभी विधिक और 'संवैधानिक-अधिकार' भी प्रदान करने का, निर्देश केन्द्र सरकार एवं देश की राज्य सरकारों को दिया।"[6] इन योजनाओं का उद्देश्य किन्नरों को मुख्यधारा में शामिल करना और उनकी आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति सुधारना है।

किन्नर समुदाय में सकारात्मक बदलावरू समाज में नई संभावनाएँ

सामाजिक जागरूकता, कानूनी मान्यता और सरकारी पहल के साथ-साथ शिक्षा, रोज़गार और राजनीति में उनकी भागीदारी ने उन्हें सकारात्मक दिशा में आगे बढ़ाया है। किन्नर समुदाय की राजनीति में भागीदारी उनके सशक्तिकरण का सबसे महत्वपूर्ण संकेत है। इसके कई उदाहरण हैं। शबनम मौसी मध्य प्रदेश की पहली ट्रांसजेंडर विधायक बनी। जोया खान और कमला जान जैसी अन्य किन्नर नेताओं ने राज्य और स्थानीय स्तर पर अपनी पहचान बनाई। राजनीतिक भागीदारी के माध्यम से किन्नर समुदाय न केवल अपने अधिकारों के लिए आवाज़ उठा रहा है, बल्कि नीतिगत फैसलों में भी सक्रिय रूप से शामिल हो रहा है। मीडिया और सोशल मीडिया के ज़रिए बढ़ती जागरूकता ने किन्नर समुदाय की वास्तविक स्थिति और संघर्षों को उजागर किया है। मीडिया द्वारा सकारात्मक प्रतिनिधित्व ने कई मिथकों और पूर्वाग्रहों को चुनौती दी है और समाज को उन्हें सम्मान देने के लिए प्रेरित किया है। एन जी ओ और सामाजिक आंदोलनों ने सामूहिक आवाज़ और सुरक्षा सुनिश्चित की। इन बदलावों के माध्यम से किन्नर समुदाय धीरे-धीरे मुख्यधारा का हिस्सा बन रहा है और समाज में सम्मान और गरिमा के साथ अपनी पहचान बना रहा है।

किन्नर विमर्श और साहित्य : सामाजिक पहचान की अभिव्यक्ति

किन्नर समुदाय जो लंबे समय तक सामाजिक उपेक्षा और भेदभाव का शिकार रहा, ने साहित्य के माध्यम से अपनी पहचान और अनुभव को अभिव्यक्ति करना शुरू किया। किन्नर विमर्श साहित्य में उनकी आवाज़, जीवन संघर्ष और अस्मिता की लड़ाई का प्रतीक बन गया है। पारंपरिक साहित्य और लोक-कथाओं में किन्नरों का चित्रण अक्सर आशीर्वाद देनेवाले और धार्मिक अवसरों में शुभकारक के रूप में हुआ। हालांकि मध्यकाल और आधुनिक समाज में उनकी छवि को लेकर विभिन्न दृष्टिकोण सामने आए। कभी उन्हें हास्यास्पद या उपहास का पात्र बनाया गया। आधुनिक और समकालीन साहित्य ने इस छवि को बदलने का प्रयास किया और किन्नरों को मानवीय, सशक्त और संवेदनशील पात्र के रूप में प्रस्तुत किया। पिछले दो दशकों में हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं में किन्नर विमर्श साहित्य में प्रमुख रूप से उभरा। जैसे तमिल, तेलुगु, बंगाली और मराठी में भी ट्रांसजेंडर जीवन के अनुभवों को केंद्र में रखते हुए रचनाएँ हुई। समकालीन लेखकों और कवियों ने किन्नर संप्रदाय के अनुभव, संघर्ष और अस्मिता पर केंद्रित साहित्य लिखा। आत्मकथाएँ किन्नरों के निजी जीवन, संघर्ष और समाज से उपेक्षा की सच्ची झलक दिखाती है। इसमें उन्होंने परिवार से अस्वीकृति, शिक्षा और रोज़गार की कठिनाईयाँ और राजनीतिक एवं सामाजिक संघर्ष का वर्णन किया।

किन्नर साहित्य के माध्यम से समाज के पूर्वाग्रह और मिथकों को चुनौती दी गई और किन्नरों के प्रति सहानुभूति और समझ विकसित हुई। युवा पीढ़ी के लिए यह साहित्य संवेदनशील दृष्टिकोण विकसित करने और विविधता को स्वीकारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

किन्नर विमर्श की भविष्य की संभावनाएँ

किन्नर समुदाय, जिसे अब ट्रांसजेंडर व्यक्तियों के रूप में भी जाना जाता है, भारतीय समाज में सदियों से सामाजिक उपेक्षा का सामना कर रहा है। हाल के वर्षों में कानूनी मान्यता, सरकारी योजनाएँ, साहित्य में जागरूकता के कारण उनके अधिकारों और पहचान में सुधार हुआ है। भविष्य में किन्नर विमर्श की दिशा मुख्य रूप से समावेशिता, समानता और गरिमा पर आधारित हो सकती है।

शिक्षा और रोज़गार किन्नर समुदाय के सशक्तिकरण के लिए सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में से हैं। स्कूलों और कॉलेजों में ट्रांसजेंडर विद्यार्थियों के लिए विशेष संसाधन, बौद्धिक और व्यावसायिक कौशल विकास के कार्यक्रम, सरकारी और निजी क्षेत्रों में आरक्षण और अवसर प्रदान करना, कौशल विकास और प्रशिक्षण केन्द्रों के माध्यम से किन्नरों की रोज़गार क्षमता बढ़ाना, इससे किन्नर समुदाय आत्मनिर्भर और आर्थिक रूप से सशक्त बन सकेगा।

किन्नर समुदाय को स्वास्थ्य सेवाओं में विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। लिंग परिवर्तन सर्जरी, मानसिक स्वास्थ्य, यौन स्वास्थ्य और नियमित चिकित्सा सेवाएँ सुलभ होनी चाहिए। पेंशन, बीमा, पुनर्वास और राहत योजनाएँ निर्धारित करनी चाहिए। साहित्य, फिल्म, वेब सीरीज़ और सोशल मीडिया का प्रभाव भविष्य में और बढ़ सकता है। आत्मकथाएँ, कविताएँ और कहानी लेखन किन्नरों की स्वतंत्र आवाज़ और अनुभव सामने लाने में सहायक होंगे। किन्नर विमर्श का सबसे बड़ा लक्ष्य समाज में समानता और गरिमा स्थापित करना है। सामाजिक आयोजनों और सार्वजनिक जीवन में किन्नरों की भागीदारी बढ़ेगी। समाज में समावेशी दृष्टिकोण अपनाकर किन्नरों को पूर्ण रूप से मुख्यधारा का हिस्सा बनाया जाएगा। यह केवल किन्नरों के लिए नहीं, बल्कि पूरे समाज के लिए न्याय और संवेदनशीलता का संदेश होगा।

निष्कर्ष

किन्नर विमर्श केवल किन्नरों की समस्याओं और उपेक्षा का बयान नहीं है, बल्कि यह समानता, न्याय और मानवाधिकारों का एक व्यापक प्रश्न है। यह हमें याद दिलाता हैं कि, किसी भी समाज की प्रगति और लोकतांत्रिक मूल्य तब तक अधूरी रहती है जब तक सभी समुदायों को उनकी पहचान, गरिमा और अवसरों के साथ स्वीकार नहीं किया जाता। असल समानता तभी संभव है जब समाज, कानून और संस्कृति मिलकर किन्नरों को सम्मान, शिक्षा, रोज़गार और सामाजिक सुरक्षा जैसी सुविधाएँ प्रदान करें। किन्नर समुदाय सदियों से परिवार, समाज और राज्य की उपेक्षा का सामना करता आया है। उनके खिलाफ़ उपहास, हिंसा, सामाजिक बहिष्कार जैसी समस्याएँ उन्हें मुख्यधारा से अलग करती रही है। इन चुनौतियों के बावजूद किन्नरों ने लगातार अपने अधिकारों, पहचान और सम्मान के लिए संघर्ष किया है। इस संघर्ष का स्वरूप दो स्तरों पर देखा जा सकता है- पहला सामाजिक संघर्ष, जिसमें किन्नरों ने अपने जीवन, शिक्षा और रोज़गार के अवसरों के लिए आवाज़ उठाई और समाज में जागरूकता पैदा की। दूसरा कानूनी और संवैधानिक संघर्ष, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय का छ।स्१। बनाम भारत सरकार (2014), निर्णय ट्रांसजेंडर प्रक्रिया एक्ट (2019), और विभिन्न सरकारी योजनाएँ उनके अधिकारों को मान्यता देने का माध्यम बनीं। इस संघर्ष ने किन्नर समुदाय के न केवल कानूनी पहचान दिलाई, बल्कि उन्हें आत्मसम्मान और सामाजिक सहभागिता का अवसर भी दिया। किन्नर समुदाय का भविष्य तभी सुरक्षित, सम्मानजनक और सशक्त हो सकता है जब समाज उनके अस्तित्व को स्वीकारे, समझे और समर्थन करें। समाधान केवल नीति बनाने से नहीं, बल्कि मानसिकता बदलने से आएगा। आवश्यक हैं कि, हमें उन्हें "दया का नहीं, अधिकार का पात्र" माने और उन्हें वह मंच अवसर और सम्मान दें जिसके वे उतने ही हकदार है जितना कोई और नागरिक। आज यह विमर्श समाज के लिए चेतावनी और मार्गदर्शन दोनों हैं- चेतावनी कि, भेदभाव और उपेक्षा का समाप्त करना आवश्यक है और मार्गदर्शन कि, सामानता, समावेशिता और संवेदनशील दृष्टिकोण अपनाना ही सशक्त समाज का आधार है। अतः किन्नर विमर्श और संघर्ष का संदेश स्पष्ट है- समानता, न्याय और मानव गरिमा की रक्षा करना केवल किन्नरों के लिए नहीं, बल्कि पूरे समाज के लिए आवश्यक है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. शिवाजी वडचकर, किन्नर केन्द्रित हिन्दी उपन्यासों में सामाजिक जीवन, पृ. सं-23
2. डॉ. इसरार अहमद, किन्नर विमर्श साहित्य के आईने में, पृष्ठ सं-24.
3. प्रदीप सीरभ, तीसरी ताली, वाणी प्रकाशन, कवर पेज से
4. नीरजा माधव, यमदीप, पृ.सं-10
5. हर्षिता द्विवेदी, लैंगिक विमर्श और यमदीप, पृ.सं-88
6. डॉ. गुप्ता कुमार आशीष, डॉ. प्रकाश चन्द्र, डॉ. मेवादेव गुप्ता बृजेश किमर, किन्नर हाशिए का जीवन, पृ.सं-81.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

धर्मशास्त्रों का नारी के प्रति दृष्टिकोण

Dr. Indu P.
Assistant Professor Department of languages - Hindi
M.O.P.Vaishnav College for Women (Autonomous)
Nungambakkam, Chennai - 600 034
Email - indupadmanabhan@gmail.com
Mobile No. 9884153752

नारी-सृष्टि की जननी, एक सहचरी, संस्कृति व परंपरा दायनी, लोकमंगल की प्रतिमूर्ति - इन सभी उपर्युक्त विशेषणों व उपाधियों के बीच एक सवाल उठता रहा कि क्या सचमुच हमारे धर्मशास्त्रों ने इस नारी की अस्मिता को बनाने में अपना योगदान दिया है यदि हाँ, तो कैसे? और कहाँ तक? क्या मध्यकालीन में हुए नारीत्व के पतन का मूलाधार कहीं ये शास्त्र तो नहीं। इन्हीं सवालों के बीच उलझे विचारों को सुलझाने को एक खोज में की गयी छोटी सी कोशिश है यह आलेख।

भारतीय साहित्य में नारी का स्थान सदा बाह्य परिस्थितियों पर आधारित रहा तथा यह भी कहना अनुचित न होगा कि भारतीय संस्कृति व परंपरा की प्रतिछाया ही भारतीय साहित्य रही और आगे भी रहेगी। इस मौलिक आधार पर विवेचना की जाए तो नारी के निछले दर्जे व निम्न कोटी में रखे जाने का दोषी किसे टहराया जाए? इसके उत्तर की खोज करनी हो तो हमें उन धर्मशास्त्रों को खगोलना होगा जिसकी प्रामाणिकता सिद्ध है ऐसे शास्त्र जिसमें किसी भी तरीके से कोई नई कड़ियाँ जोड़ी न गईं हों, न ही जिसमें कुछ शक्तिशाली वर्गों व धर्म के ठेकेदारों को अपने मनचाहे अभिप्रायों की व्याख्या हो।

इस प्रकार देखा जाए तो यह हमें उस पुरातन काल की ओर इशारा करता है जो सदियों पहले हमारे महान मनीषियों व बुद्धिजीवियों का जन्मकाल रहा। जहाँ नर-नारी, पुरूष-स्त्री आदि शब्दों का अविर्भाव हुआ। "महिला शब्द मह + इल + आ से निर्मित है जहाँ 'मह' का अर्थ है श्रेष्ठ या पूज्य अर्थात् जो श्रेष्ठ व पूज्य हो।"[1]

महिला के लिए अन्य प्रयुक्त शब्दों में 'मेना' शब्द भी प्रचलित है जिसका यास्क कृत निरुक्त में व्युत्पत्ति दी गई है–

"मानयन्ति एवाः (पुरूषाः)"[2]

अर्थात् पुरूष इनका आदर करते हैं। इसलिए इन्हें मेना कहते हैं। ऋग्वेद में एक अन्य प्रचलित शब्द भी स्त्री का पर्याय है वह है 'ग्ना' शब्द जिसका प्रयोग देव पत्नियों को संबोधित करने हेतु किया जाता था। जिसका प्रयोग यास्क में कुछ इस प्रकार प्राप्त होता है–

"ग्ना गच्छन्ति एताः।"[3]

अर्थात् स्त्री ऐसी है जिसके पास पुरूष जाता है।

वहीं 'नारी' शब्द की व्युत्पत्ति पर यदि ध्यान दिया जाए तो नारी शब्द भी नर शब्द की तरह 'नृ' धातु से ही निर्मित है। जिसका अर्थ है– चलना, संचालन करना, नेतृत्व करना, रक्षा करना आदि।

अब यदि वेदों व शास्त्रों की बात की जाए तो भारतीय संस्कृति का सबसे प्राचीनतम व गौरवशाली ग्रंथ ऋग्वेद माना गया है जिसे मौलिक व आधारभूत वेद होने का गौरव प्राप्त है। इस ऋग्वेद में नारी दर्शन बहुत ही सम्मानित रहा। यहाँ नारी

की अस्मिता का दर्शन उत्कृष्ट व श्रेष्ठ जान पड़ता है उदाहरणार्थ नारी को ऋग्वेद में ब्राह्मण कहा गया है–

"स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ।।"[4]

अर्थात् यह कि वह ब्रह्मा ब्राह्मण थी।

ब्रह्म ज्ञान का संरक्षण करनेवाली, यज्ञों का संचालन करनेवाली, ज्ञान-विज्ञान में सिद्ध अतः उसे ब्रह्म की उपाधी दी गयी है। ऋग्वेदों में अन्य सूक्तियाँ भी हैं जिसमें स्त्री के स्वाधिकार व आत्म स्वीकृति की उद्घोषणा है।

"अहं केतुरहं मूर्धाहनुग्रा विवाचनी।
ममेदनु क्रतुं पतिः सेहानाया उपाचेरत्।।"[5]

इसका मूल अर्थ है कि मैं ही प्रेरणा की ध्वजा हूँ मैं ही सर्वोच्च स्थान पर हूँ। मैं शक्तिशाली और वाणी की अधिष्ठात्री हूँ। जो पुरूष कर्मशील है और जो बुद्धिमान है वह मेरी उपासना करें।

ऋग्वेदों में ही नहीं वरन् उपनिषदों में भी नर व नारी को समतुल्य माना गया है। उपनिषद में भी पुरूष व महिला में समान तत्व का वास व अध्यात्म चेतना के अधिष्ठता के रूप में प्रतिष्ठित बताया गया है। नारी सम्मान के प्रति विशेष रूप से प्रसिद्ध श्लोक मनु का यह कथन–

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रियाः।।"[6]

मनुस्मृति का यह श्लोक नारी के सम्मान पूज्य की बात करता है कि जहाँ नारी का आदर-सत्कार होता है वहाँ देवता सहर्ष निवास करते हैं और जहाँ नारी का अनादर व अपमान होता है वहाँ धार्मिक कर्म निष्फल हो जाते हैं।

वहीं वृहत्संहिता में कुछ श्लोक ऐसे प्रचलित हैं कि–

"नास्ति लोकेषु रत्नानां स्त्रीरत्नं परमं स्मृतम्।
पुण्येन लभ्यते हेय इतद् गृहलक्ष्मी प्रकाशम्।।"[7]

अर्थात् ब्रह्मा ने किसी भी लोक में स्त्री रत्न से श्रेष्ठ कोई रत्न नहीं स्वीकारा है; यह पुण्य से प्राप्त होता है और गृह की लक्ष्मी है, अतः इसका आदर करना चाहिए।

अन्य श्लेक में–

"रत्नान्यपि स्त्रिया सौन्दर्यं यान्ति, न तु स्त्रियो रत्नैः।
स्त्रिया बिना रत्नजातं केवलं मृणमयं भवेत्।।"[8]

अर्थात् स्त्रियों का महत्त्व बताते हुए कहा गया है कि रत्न भी उनकी शोभा से शोभित होते हैं, न कि रत्न से स्त्री शोभित होती है– स्त्री के बिना रत्न केवल मिट्टी समान है। इन श्लोकों से भी स्पष्ट है कि वृहसंहिता जैसे ज्योतिष ग्रंथों में भी स्त्री को सर्वोत्तम कृति व नैतिक संतुलन की धुरी कहा गया है।

आधार और ब्रह्म का साकार रूप कहा गया है। मार्कण्डेय पुराण के सबसे प्रसिद्ध भाग 'देवी महात्यम्' है, जिसे दुर्गा सप्तशती भी कहते हैं। इसमें नारी को केवल सृष्टिकर्त्री नहीं, बल्कि सर्वव्यापी ब्रह्मशक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। इसके प्रसिद्ध श्लोकों में–

"या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः।।"[9]

अर्थात् - हे देवी (स्त्री रूप) तुम सम्पूर्ण प्राणियों में शक्ति स्वरूप स्थित हो अतः तुम्हें बार-बार नमस्कार। अन्य श्लोक में–

"त्वया हि सर्वमिदं व्याप्तं जगत् व्याप्तं च देवि परा।
त्वया धृतं जगत्सर्वं त्वं हि सर्वस्य कारणम्।।"[10]

अर्थात्– हे देवी (स्त्री रूप) आपसे ही संपूर्ण जगत व्याप्त है आप ही इस समस्त सृष्टि की धारणकर्ता हो और इसका

कारण थी। भाव यह है कि स्त्री ही ब्रह्म है।

"विद्या समस्ता स्तव देवि भेदाः
स्त्रियः समस्ता सकला जगत्सु।।"[11]

इस श्लोक में देवी अर्थात् शक्ति स्वरूपा दुर्गा देवी की स्तुति की गयी है और यह कहा गया है कि संसार की समस्त विद्याएँ स्वयं देवी तुम्हारे ही भिन्न-भिन्न स्वरूप हैं और जगत की सभी स्त्रियाँ उसी देवी का अंश है, अर्थात् नारी दैवीय शक्ति का प्रतीक है तथा स्त्री का सम्मान करना वास्तव में उस दिव्य शक्ति रूपा की आराधना करने के समतुल्य है।

ऐसे ही धर्मशास्त्रों में शक्तिआगम तन्त्र परंपरा में प्रस्तुत ताराखण्ड है जिसमें देवी तारा (दुर्गा का उग्र रूप) की उपासना विधि, शक्तितत्व और नारी-महिमा का गुणगान है। यह श्लोक इसकी पुष्टि करता है।

"नारी त्रैलोक्य जननी, नारी त्रैलोक्य रूपिणी।
नारी त्रिभुवनाधारा, नारी शक्ति स्वरूपिणी।।"[12]

इस श्लोक का अर्थ है कि नारी ही तीनों लोकों की जननी है। नारी ही उन तीनों लोकों का रूप है। नारी ही त्रिभुवन का आधार है और स्वयं शक्ति का मूर्त स्वरूप है– अर्थात् नारी मात्र मानव नहीं वरन् आदिशक्ति का स्वरूप है। वह जन्म देने वाली व पालन करने वाली है तथा संहार करने की शक्ति रखने वाली शक्ति स्वरूपिणी है अतः यह कथन की समस्त विश्व ही नारीतत्व पर टिका है। एक वैज्ञानिक, सामाजिक व दार्शनिक रूप से सिद्ध तथ्य है।

उपर्युक्त सभी प्रमाणों से यह स्थापित हो जाता है कि 3000 वर्षों का यह वैदिक काल व उनमें रचित वे प्रामाणिक ग्रंथों में नारी की प्रशस्ति न समाज में उसका स्थान गौरवमय था। यह कहना कदापि अनुचित न होगा कि वैदिक काल महिलाओं के लिए 'स्वर्ण युग' था। जहाँ स्त्रियों को उपनयन संस्कार कर शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार था। कई ग्रंथों में विशेषकर गृह्यसूत्रों और धर्मसूत्रों में स्त्री के ब्रह्मचर्य का पालन करने का भी प्रमाण प्राप्त है। ऋग्वेदों के श्लोकों में रचयिता सिर्फ पुरूष ही नहीं वरन् स्त्रियों ने भी इसमें अपना योगदान दिया है। वैदिक काल में ऐसे कई प्रमाण निरूपित है जहाँ ऐसी ऋषिकाओं का वर्णन है जो शास्त्रार्थ करने में योग्य थी, 'बृहदारण्यक उपनिषद्' में गार्गी का उल्लेख है जो महान विदुषी के साथ-साथ एक दार्शनिक भी थीं और जिन्होंने राजा जनक द्वारा आयोजित ब्रह्मविद्या-संवाद सभा में उपस्थित हो शास्त्रार्थ किया था। अतः इससे सिद्ध होता है कि वैदिक काल में नारी को दार्शनिक स्वतंत्रता प्राप्त थी। गार्गी के समकालीन अन्य कई वाक्चातुर्य व विदूषियाँ रहीं जैसे– मैत्रेयी, अपाला, लोपामुद्रा, विश्वारा, घोषा, रोमशा, सारमा, शची पौलोमी आदि जो ज्ञान, वाणी व साधना में निपुण थीं जिनकी रचनाएँ ऋग्वेद में संगृहित है। अतः यह अविवादित पक्ष है कि वैदिक काल में नारी केवल पत्नी या माता नहीं वरन् ऋषि, पण्डिता, व समाज में सम्मानित वर्ग थीं जिसे पुरुष के समान अधिकार प्राप्त थे। परन्तु जाने कब इन अधिकारों को कुछ स्वार्थी धर्म पालनहारों ने अस्वीकार कर उसकी प्रतिष्ठा छीन ली फलस्वरूप हमारी संस्कृति व परंपरा का हनन किया। उसे सीमाओं में बाँध कर उसके अस्तित्व को नकारा। यदि हम अपने उन परंपराओं को उस संस्कृति को पुनर्जीवित करना चाहते हैं तो नारी को फिर से उसकी वहीं वैदिक प्रतिष्ठा लौटानी होगी उसे पुनः शक्ति व ब्रह्मस्वरूपा की उपाधी प्रदान करनी होगी।

संदर्भ ग्रंथ

1. धर्मशास्त्रों में नारी की गरिमा– अखण्ड ज्योति पत्रिका– (प्रकाशक) अखिल विश्व गायत्री परिवार, मधुरा– (संस्करण)– सितंबर 1996– वॉल्यूम-2, इश्यू-4
2. यास्का निरूक्ता– 3.21.2
3. यास्का निरूक्ता– 3.21.3
4. ऋग्वेद– 8.33.19

5. ऋग्वेद– 10.159.2
6. मनुस्मृति, अध्याय– 3, श्लोक– 56
7. वृहसंहिता, अध्याय– 74
8. वृहसंहिता, अध्याय– 74
9. मार्कण्डेय पुराण– अध्याय– 81, श्लोक– 10
10. मार्कण्डोय पुराण, अध्याय– 83, श्लोक– 1
11. देवी महात्यम् / दुर्गा सप्तशति, अध्याय– 11, श्लोक– 6
12. शक्ति आगमतन्त्र, ताराखण्ड् - 13.44

Residential Postal Address :
D1 210, Akshaya Republic, 4/287, Kundrathur Main Road,
Kovur, Chennai, Tamil Nadu - 600 128

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के समक्ष ऑनलाइन शिक्षण की चुनौतियों का अध्ययन

पूनम व्यास
शोधार्थी, जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, जयपुर (राज)

प्रो. ग्रीष्मा शुक्ला
जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, स्कूल ऑफ़ एजुकेशन

सारांश

बदलते परिवेश में तकनीकी में भी काफी परिवर्तन हुए हैं और इनकी उपयोगिता भी बढ़ी हैं। तकनीकी के वजह से शिक्षा लेने की पद्धति में भी बहुत से परिवर्तन देखने को मिले हैं। आज ऑनलाइन शिक्षा में उपयोग होने वाली शिक्षण संबंधित सामग्री, तकनीकी के माध्यम से एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजी जा सकती है। विद्यार्थी लगातार अपने शिक्षकों से ऑनलाइन कक्षा से पढ़ने के नए तरीकों को सीखते हैं और पढ़ने में भी रूचि रखते हैं। प्रस्तुत शोध का उद्देश्य उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यालय के प्रकार के आधार पर विद्यार्थियों के समक्ष आने वाली ऑनलाइन शिक्षण की संभावनाओं चुनौतियों को जानना है। इस अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। तथा ऑनलाइन शिक्षण की संभावनाओं चुनौतियों का पता लगाने हेतु स्वर्ण निर्मित उपकरण का निर्माण किया गया है। निष्कर्ष में पाया गया कि निजी विद्यालयों की तुलना में राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के लिए तकनीकी चुनौतियाँ, पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियाँ व व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ अधिक गंभीर थी।

मुख्य शब्द- ऑनलाइन शिक्षण, तकनीकी, डिजिटल।

प्रस्तावना

शिक्षा वह जीवन ज्योति है जो मानव जीवन को अज्ञान रुपी अंधकार से ज्ञान रुपी प्रकाश की ओर ले जाती है। शिक्षा हम किसी भी माध्यम के द्वारा ग्रहण कर सकते हैं, चाहे वह पारंपरिक हो या ऑनलाइन। पारंपरिक शिक्षा प्रणाली में विद्यार्थी गुरुकुल या विद्यालय में जाते हैं और उनके शिक्षक के सामने बैठकर उनका ज्ञान प्राप्त करते हैं, लेकिन ऑनलाइन शिक्षा प्रणाली में इसे शिक्षा का नवीनतम रूप माना जाता है। इसमें विद्यार्थी अपने शिक्षक से इंटरनेट सुविधा का उपयोग करते हुए लैपटॉप, कंप्यूटर या सेलफोन के माध्यम से मिलते हैं और उनसे ज्ञान प्राप्त करते हैं।

इस प्रकार आधुनिक युग तकनीकी युग है, जिसमें शिक्षा में तकनीकी का उपयोग शिक्षा की गुणवत्ता और रचनात्मकता को प्रभावी बना रहा है। आज के समय में शिक्षा के क्षेत्र में पावर पॉइंट प्रस्तुतीकरण और वेब-संवाद की महत्त्वपूर्ण भूमिका है, जो ऑनलाइन शिक्षा को और भी महत्त्वपूर्ण बना रहा है। वर्तमान समय में वैश्विक महामारी के कारण, ऑनलाइन शिक्षा को हर क्षेत्र में बढ़ावा मिल रहा है। इसके लिए Zoom, WebX, Google Hangout, Microsoft Teams जैसे एप्लिकेशन का प्रयोग किया जा रहा है।

ऑनलाइन शिक्षण ने शिक्षा के क्षेत्र में एक नया आयाम जोड़ा है, जिससे विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार की चुनौतियों

का सामना करना पड़ रहा है। इस अध्ययन का उद्देश्य उच्च माध्यमिक स्तर पर ऑनलाइन शिक्षण के संदर्भ में विद्यार्थियों के समक्ष विद्यालय के प्रकार के आधार पर आने वाली चुनौतियों का विश्लेषण करना है। विद्यालय के प्रकार के आधार पर विद्यार्थियों को भिन्न-भिन्न प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। अनेक शोधों में यह पाया गया है कि विद्यार्थियों की शैक्षणिक उपलब्धियों और मानसिक स्वास्थ्य इससे प्रभावित होती है। (शर्मा, 2020; गुप्ता, 2021)। सरकारी विद्यालयों में संसाधनों की कमी और निजी विद्यालयों में प्रतिस्पर्धा की उच्च स्तर की चुनौतियाँ विद्यार्थियों के लिए तनाव का कारण बनती हैं (सिंह, 2019)। ऑनलाइन शिक्षण के संदर्भ में, कई अध्ययनों ने यह दर्शाया है कि तकनीकी बाधाएँ, जैसे इंटरनेट की कमी और डिजिटल साक्षरता की कमी, विद्यार्थियों के लिए प्रमुख चुनौतियाँ हैं (कुमार, 2022; वर्मा, 2023)।

शोध का औचित्य

वर्तमान में ऑनलाइन शिक्षण तेजी से प्रचलित हो गया है, विशेष रूप से COVID-19 महामारी के मद्देनजर, जिसने दुनिया भर के शैक्षणिक संस्थानों में डिजिटल शिक्षण प्लेटफार्मों को अपनाने में तेजी ला दी है। हालाँकि यह परिवर्तन शिक्षा की निरंतरता के लिए आवश्यक है, इसने विशेष रूप से उच्च माध्यमिक स्तर पर असंख्य चुनौतियों और अवसरों को भी सामने लाया है। इसलिए, इन मुद्दों पर व्यापक रूप से शोध करने के लिए शोध करना अनिवार्य है।

उच्च माध्यमिक स्तर पर ऑनलाइन शिक्षण से जुड़ी चुनौतियों पर आधारित यह शोध न केवल वर्तमान समय की माँग है, बल्कि अत्यंत उपयोगी भी है। इस अध्ययन का उद्देश्य ऑनलाइन शिक्षा में मौजूद विविध पहलुओं को समझकर, नीतियों के निर्माण में सहायता करना, शैक्षणिक संस्थानों की कार्यप्रणालियों को दिशा देना और अंततः डिजिटल युग में उच्च माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता तथा समावेशिता को बढ़ावा देना है।

शोध उद्देश्य

उच्च माध्यमिक स्तर में अध्यनरत विद्यार्थियों के समक्ष ऑनलाइन शिक्षण की चुनौतियां का विद्यालय भिन्नता (राजकीय एवं निजी) के संदर्भ में अध्ययन करना–

शोध प्रश्न

उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के समक्ष ऑनलाइन शिक्षण की चुनौतियां में विद्यालय के प्रकार के आधार पर क्या भिन्नताएँ पाई जाती हैं?

शोध अभिकल्प

प्रस्तुत अध्ययन में सर्वेक्षण विधि का प्रयोग किया गया है। जयपुर जिले के उच्च माध्यमिक स्तर के 20 विद्यालयों (राजकीय व निजी)का चयन न्यादर्श हेतु किया गया। ऑनलाइन शिक्षण की संभावनाओं को जानने हेतु स्व निर्मित उपकरण का प्रयोग किया गया है। उपकरण से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण प्रतिशत विधि के द्वारा किया गया।

आंकड़ों का विश्लेषण

विद्यार्थियों के समक्ष आने वाली ऑनलाइन शिक्षण की चुनौतियाँ

प्रस्तुत शोध में शिक्षकों के समक्ष ऑनलाइन शिक्षण की चुनौतियाँ को निम्न क्षेत्रों में विभक्त कर विश्लेषण किया गया ये चुनौतियाँ निम्न थी-

(a) तकनीकी चुनौतियाँ
(b) पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियाँ
(c) व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ

तालिका 4.1.3(a)
विद्यार्थियों के समक्ष आने वाली ऑनलाइन शिक्षण की तकनीकी चुनौतियाँ

विद्यालय के प्रकार	निम्न स्तर		औसत स्तर		उच्च स्तर		कुल	
राजकीय	10	6.67%	71	47.33%	69	46%	150	100%
निजी	35	7.78%	266	59.11%	149	33.11%	450	100%
कुल विद्यार्थी	45	7.5%	337	56.17%	218	36.33%	600	100%

तालिका संख्या 4.1.3(a) में ऑनलाइन शिक्षण में आने वाली तकनीकी चुनौतियों से संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया है। तालिका देखने से स्पष्ट होता है कि समस्त 600 विद्यार्थियों में से सबसे अधिक 337 अर्थात 56.17% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के अंतर्गत औसत स्तर की तकनीकी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। जैसे -अकसर उपकरणों का अपनी कार्य क्षमता खो देना और कक्षाओं के दौरान बंद हो जाना के कारण महत्वपूर्ण जानकारी छुट जाना।।इन चुनौतियों ने शिक्षण प्रक्रिया को बहुत अधिक प्रभावित किया इसके विपरीत कुल 600 विद्यार्थियों में से मात्र 45 अर्थात 7.5% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के अंतर्गत निम्न स्तर की चुनौतियों का सामना करना पड़ा। जिसके अंतर्गत ऑनलाइन कक्षाओं में पढाई के दौरान नेटवर्क कनेक्टिविटी में बार बार रुकावट आने से अधिगम प्रभावित होने संबंधित चुनौतियांसम्मिलित थी। यह चुनौतियाँ शिक्षण प्रक्रिया को बाधित करती रही। इसके अतिरिक्त समस्त 600 विद्यार्थियों में से 218 अर्थात 36.33% विद्यार्थी ऐसे थे जिन्हें उच्च स्तर की तकनीकी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। यह चुनौतियाँ बुनियादी ढांचे के अभाव में कंप्यूटर, मोबाइल, लैपटॉप, और सॉफ्टवेयर की पहुंच सभी छात्रों के लिए उपलब्ध नहीं होना, ऑनलाइन कक्षाओं के दौरान गुणवत्ता इंटरनेट कनेक्टिविटी हमेशा बनी न रहना, जिससे अधिगम में रुकावट होना तथा ऑनलाइन कक्षाओं के लिए आवश्यक सॉफ्टवेयर और नवीन तकनीकों की जानकारी में कमी होने के कारण पढ़ाई में कठिनाई होना आदि से संबंधित थी।इन चुनौतियों ने व्यापक रूप से शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित किया।

ऑनलाइन शिक्षण में आने वाली तकनीकी चुनौतियों के विश्लेषण को विद्यालय के प्रकार के आधार पर देखने से स्पष्ट होता है कि–

समस्त 150 राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में से 71 अर्थात 47.33% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के अंतर्गत औसत स्तर की तकनीकी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। जैसे अकसर उपकरणों का अपनी कार्य क्षमता खो देना और कक्षाओं के दौरान बंद हो जाना, जिससे महत्वपूर्ण जानकारी छुट जाने संबंधी चुनौतियां सम्मिलित थी। इन चुनौतियों ने शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित किया इसके विपरीत 150 विद्यार्थियों में से मात्र 10 अर्थात 6.67% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान निम्न स्तर की तकनीकी चुनौतियों का सामना करना पड़ा जैसे - ऑनलाइन कक्षाओं में पढाई के दौरान नेटवर्क कनेक्टिविटी में बार बार रुकावट आने से अधिगम प्रभावित होना। इन चुनौतियों ने आंशिक रूप से शिक्षण प्रक्रिया को बाधित किया इसके अतिरिक्त कुल 150 विद्यार्थियों में से 69 अर्थात 46% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान उच्च स्तर की तकनीकी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। यह चुनौतियाँ बुनियादी ढांचे के अभाव में कंप्यूटर, मोबाइल, लैपटॉप, और सॉफ्टवेयर की पहुंच सभी छात्रों के लिए उपलब्ध नहीं होना, ऑनलाइन कक्षाओं के दौरान गुणवत्ता इंटरनेट कनेक्टिविटी हमेशा बनी न रहना, जिससे अधिगम में रुकावट होना तथा ऑनलाइन कक्षाओं के लिए आवश्यक सॉफ्टवेयर और नवीन तकनीकों की जानकारी में कमी होने के कारण पढ़ाई में कठिनाई होना आदि से संबंधित थी। यह चुनौतियाँ सबसे व्यापक रूप से अनुभव की गई और शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित करने वाली प्रमुख चुनौतियों में से एक रही।

समस्त 450 निजी विद्यालय के विद्यार्थियों में से 266 अर्थात 59.11% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के अंतर्गत औसत स्तर की तकनीकी चुनौतियों का सामना करना पड़ा जैसे- अकसर उपकरणों का अपनी कार्य क्षमता खो देना और कक्षाओं के दौरान बंद हो जाना, जिससे महत्वपूर्ण जानकारी छुट जने संबंधित चुनौतियां सम्मिलित थी। जिन्होंने शिक्षण प्रक्रिया को

प्रभावित किया। इसके विपरीत समस्त 450 विद्यार्थियों में से मात्र 35 अर्थात 7.78% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान निम्न स्तर की तकनीकी चुनौतियों का सामना करना पड़ा जैसे - ऑनलाइन कक्षाओं में पढाई के दौरान नेटवर्क कनेक्टिविटी में बार बार रुकावट आने से अधिगम प्रभावित होना। इन चुनौतियों ने आंशिक रूप से शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित किया इसके विपरीत समस्त 450 विद्यार्थियों में से 149 अर्थात 33.11% विद्यार्थियों के एक बड़े वर्ग को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान उच्च स्तर की तकनीकी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। यह चुनौतियाँ बुनियादी ढांचे के अभाव में कंप्यूटर, मोबाइल, लैपटॉप, और सॉफ्टवेयर की पहुंच सभी छात्रों के लिए उपलब्ध नहीं होना, ऑनलाइन कक्षाओं के दौरान गुणवत्ता इंटरनेट कनेक्टिविटी हमेशा बनी न रहना, जिससे अधिगम में रुकावट होना तथा ऑनलाइन कक्षाओं के लिए आवश्यक सॉफ्टवेयर और नवीन तकनीकों की जानकारी में कमी होने के कारण पढ़ाई में कठिनाई होना आदि से संबंधित थी। यह चुनौतियाँ अधिक गंभीर थी तथा शिक्षण प्रक्रिया को व्यापक रूप से प्रभावित करती रही।

ऑनलाइन शिक्षण में आने वाली तकनीकी चुनौतियों से संबंधित राजकीय व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों से प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण का तुलनात्मक अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में (47.33%) और निजी विद्यालय के विद्यार्थियों में (59.11%) विद्यार्थियों औसत स्तर की समस्याओं का सामना कर रहे हैं।वहीं दूसरी ओर निम्न स्तर की समस्याओं का सामना करने के संदर्भ में राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की संख्या (6.67%) निजी विद्यालय के विद्यार्थियों (7.78%) की तुलना में कम है जो यह दर्शाता है कि राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षा निजी विद्यालय के विद्यार्थियो को निम्न स्तर की तकनीकी चुनौतियों का सामना कम करना पड़ता है। उच्च स्तर की तकनीकी चुनौतियों का सामना करने के संदर्भ में राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की संख्या 46% व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की संख्या 33.11% से अधिक परिलक्षित हो रही है जिसका तात्पर्य है कि गंभीर तकनीकी चुनौतियाँ जैसे बिजली आपूर्ति कब ऑनलाइन शिक्षण के लिए आवश्यक साधनों कंप्यूटर लैपटॉप व सॉफ्टवेयर उपलब्ध न होने जैसी चुनौतियाँ राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों को परेशान करती रही इन चुनौतियों के कारण विद्यार्थियों को अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा तथा उनके शैक्षिक कार्य में कठिनाई उत्पन्न हुई।

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के लिए यह चुनौतियाँ अत्यधिक गंभीर थी। इसका एक कारण राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के पास निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की तुलना में कम तकनीकी समझ तथा संसाधनों की उपलब्धता हो सकता है।

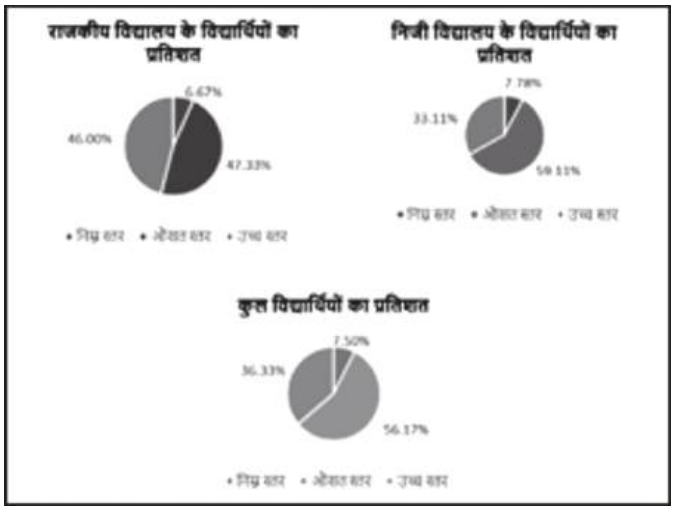

आरेख 4.1.3(a)

विद्यार्थियों के समक्ष आने वाली ऑनलाइन शिक्षण की तकनीकी चुनौतियाँ

तालिका 4.1.3(b)

विद्यार्थियों के समक्ष आने वाली ऑनलाइन शिक्षण की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियाँ

विद्यालय के प्रकार	निम्न स्तर		औसत स्तर		उच्च स्तर		कुल	
राजकीय	8	5.33%	72	48%	70	46.67%	150	100%
निजी	35	7.78%	265	58.89%	150	33.33%	450	100%
कुल विद्यार्थी	43	7.17%	337	56.17%	220	36.66%	160	100%

तालिका संख्या 4.1.2(b) में ऑनलाइन शिक्षण में आने वाली पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों से संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण किया गया है। तालिका देखने से स्पष्ट होता है कि समस्त 600 विद्यार्थियों में से सबसे अधिक 337 अर्थात 56.17% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के अंतर्गत औसत स्तर की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। जिसके अंतर्गत ऑनलाइन कक्षाओं के दौरान परिवार के सदस्यों का सामूहिक रूप से शिक्षण प्रक्रिया में व्यवधान उत्पन्न करना व विद्यार्थियों के लिए गृहस्थी के खर्चों के कारण पढ़ाई पर ध्यान केंद्रित करना में कठिनाई संबंधी चुनौतियाँ सम्मिलित थी। इन चुनौतियों ने शिक्षण प्रक्रिया को बहुत अधिक प्रभावित किया। इसके विपरीत कुल 600 विद्यार्थियों में से मात्र 43 अर्थात 7.17% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के अंतर्गत निम्न स्तर की चुनौतियों का सामना करना पड़ा। जिसके अंतर्गत पारिवारिक जिम्मेदारियों के चलते छात्रों को ऑनलाइन शिक्षण में भाग लेने का समय नहीं मिल पाना एक चुनौती पूर्ण कार्य था। इसके अतिरिक्त समस्त 600 विद्यार्थियों में से 220 अर्थात 36.66% विद्यार्थियों ऐसे थे जिन्हें उच्च स्तर की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। यह चुनौतियाँ अत्यधिक गंभीर थी इसके अंतर्गत पारिवारिक पृष्ठभूमि और आर्थिक स्थिति ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण करने में गंभीर बाधा प्रस्तुत करती रही जैसे - कई विद्यार्थियों को अपने परिवार की आर्थिक स्थिति के कारण ऑनलाइन कक्षाओं में भाग लेने में दिक्कत होना आदि इन परिस्थितियों में अधिगम करना अत्यधिक चुनौती पूर्ण कार्य था।

ऑनलाइन शिक्षण में आने वाली पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों के विश्लेषण को विद्यालय के प्रकार के आधार पर देखने से स्पष्ट होता है कि-

समस्त 150 राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में से 72 अर्थात 48% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के अंतर्गत औसत स्तर की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। जिसके अंतर्गत ऑनलाइन कक्षाओं के दौरान परिवार के सदस्यों का सामूहिक रूप से शिक्षण प्रक्रिया में व्यवधान उत्पन्न करना व विद्यार्थियों के लिए गृहस्थी के खर्चों के कारण पढ़ाई पर ध्यान केंद्रित करना में कठिनाई आदि चुनौतियाँ सम्मिलित थी। इन चुनौतियों ने शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित किया इसके विपरीत 150 विद्यार्थियों में से मात्र 8 अर्थात 5.33% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान निम्न स्तर की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियाँ का सामना करना पड़ा। जिसके अंतर्गत पारिवारिक जिम्मेदारियों के चलते छात्रों को ऑनलाइन शिक्षा में भाग लेने का समय नहीं मिल पाने जैसी चुनौतियों ने आंशिक रूप से शिक्षण प्रक्रिया को बाधित किया इसके अतिरिक्त कुल 150 विद्यार्थियों में से 70 अर्थात 46.67% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान उच्च स्तर की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। यह चुनौतियाँ अत्यधिक गंभीर थी इसके अंतर्गत पारिवारिक पृष्ठभूमि और आर्थिक स्थिति ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण करने में गंभीर बाधा प्रस्तुत करती रही। कई छात्रों को अपने परिवार की आर्थिक स्थिति के कारण ऑनलाइन कक्षाओं में भाग लेने में दिक्कत होने जैसी परिस्थितियों में अधिगम करना अत्यधिक चुनौती पूर्ण कार्य था।

समस्त 450 निजी विद्यालय के विद्यार्थियों में से 265 अर्थात 58.89% विद्यार्थियों को औसत स्तर की पारिवारिक और

आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। जिसके अंतर्गत ऑनलाइन कक्षाओं के दौरान परिवार के सदस्यों का सामूहिक रूप से शिक्षण प्रक्रिया में व्यवधान उत्पन्न करना व छात्रों के लिए गृहस्थी के खर्चों के कारण पढ़ाई पर ध्यान केंद्रित करना में कठिनाई जैसी चुनौतियाँ सम्मिलित थी। जिन्होंने शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित किया इसके विपरीत समस्त 450 विद्यार्थियों में से मात्र 35 अर्थात 7.78% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान निम्न स्तर की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। जिसके अंतर्गत पारिवारिक जिम्मेदारियों के चलते छात्रों को ऑनलाइन शिक्षा में भाग लेने का समय नहीं मिल पाने जैसी चुनौतियाँ अत्यधिक गंभीर नहीं थी उसने शिक्षण प्रक्रिया को अत्यधिक प्रभावित नहीं किया। इसके विपरीत समस्त 450 विद्यार्थियों में से 150 अर्थात 33.33% विद्यार्थियों के एक बड़े वर्ग को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान उच्च स्तर की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा। यह चुनौतियाँ अत्यधिक गंभीर थी इसके अंतर्गत पारिवारिक पृष्ठभूमि और आर्थिक स्थिति ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण करने में गंभीर बाधा प्रस्तुत करती रही। कई विद्यार्थियों को अपने परिवार की आर्थिक स्थिति के कारण ऑनलाइन कक्षाओं में भाग लेने में दिक्कत होना व इन परिस्थितियों में अधिगम करना अत्यधिक चुनौती पूर्ण कार्य था।

ऑनलाइन शिक्षण में आने वाली पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों से संबंधित राजकीय व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों से प्राप्त प्रदतों के विश्लेषण का तुलनात्मक अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में (48%) और निजी विद्यालय के विद्यार्थियों में (58.89%) विद्यार्थियों औसत स्तर की चुनौतियाँ का सामना कर रहे हैं वहीं दूसरी ओर निम्न स्तर की चुनौतियाँ का सामना करने के संदर्भ में निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की संख्या (5.33%) राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों (7.78%) की तुलना में कम है जो यह दर्शाता है कि राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों को निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षा निम्न स्तर की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना कम करना पड़ता है। उच्च स्तर की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना करने के संदर्भ में राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की संख्या (46.67%) निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की संख्या (33.33%) से अधिक परिलक्षित हो रही है जिसका तात्पर्य है कि गंभीर पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों जैसे अंतर्गत पारिवारिक पृष्ठभूमि और आर्थिक स्थिति ऑनलाइन शिक्षा ग्रहण करने में गंभीर बाधा प्रस्तुत करती रही। कई विद्यार्थियों को अपने परिवार की आर्थिक स्थिति के कारण ऑनलाइन कक्षाओं में भाग लेने में दिक्कत होना व इन परिस्थितियों में अधिगम करना अत्यधिक चुनौती पूर्ण कार्य था।

इन चुनौतियों के कारण राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों को अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा तथा उनके शैक्षिक कार्य में कठिनाई उत्पन्न हुई।

उपर्युक्त विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि राजकीय व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों को समान प्रकार की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों का सामना करना पड़ा किंतु राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के लिए यह चुनौतियाँ अत्यधिक गंभीर थी।

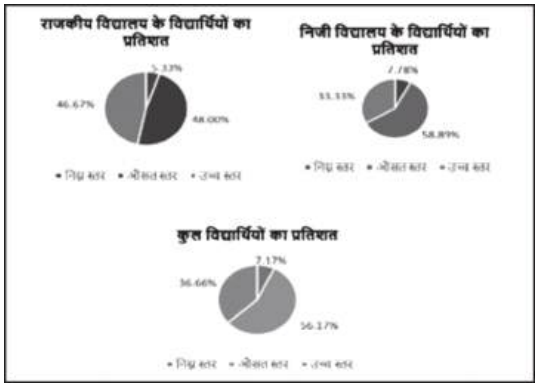

आरेख 4.1.3(b)

विद्यार्थियों के समक्ष आने वाली ऑनलाइन शिक्षण की पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियाँ

तालिका 4.1.3(c)

विद्यार्थियों के समक्ष आने वाली ऑनलाइन शिक्षण की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ

विद्यालय के प्रकार	निम्न स्तर		औसत स्तर		उच्च स्तर		कुल	
राजकीय	10	6.67%	72	48%	68	45.33%	150	100%
निजी	35	7.78%	256	56.89%	159	35.33%	450	100%
कुल विद्यार्थी	45	7.5%	328	54.67%	227	37.83%	600	100%

तालिका संख्या 4.1.3(c) में ऑनलाइन शिक्षण में आने वाली व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ से संबंधित प्रदतों का विश्लेषण किया गया है। तालिका देखने से स्पष्ट होता है कि समस्त 600 विद्यार्थियों में से सबसे अधिक 328 अर्थात 54.67% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के अंतर्गत औसत स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना करना पड़ा। जिसके अंतर्गत ऑनलाइन शिक्षण के लिए आत्म-प्रेरित होने में कठिनाई होने के कारण पढाई में निरन्तरता बनाए रखने संबंधी चुनौतियां सम्मिलित थी। इसके विपरीत कुल 600 विद्यार्थियों में से 45 अर्थात 7.5% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के अंतर्गत निम्न स्तर की चुनौतियों का सामना करना पड़ा। जिसके अंतर्गत आनलाइन परिक्षा में, पारंपरिक परीक्षा प्रणाली के मुकाबले अधिक असहजता का अनुभव होना जिससे प्रदर्शन प्रभावित होना आदि। यह चुनौतियाँ शिक्षण प्रक्रिया को बाधित करती रही।इसके अतिरिक्त समस्त 600 विद्यार्थियों में से 227 अर्थात 37.83% विद्यार्थियों ऐसे थे जिन्हें उच्च स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना करना पड़ा। यह चुनौतियाँ गूगल मीट, स्काइपी जैसे कन्फरेसिंग एप्लीकेशनों का उपयोग न आना, ऑनलाइन शिक्षा के लिए एक बड़ी चुनौती है व मूल्यांकन परीक्षा ऑनलाइन होने पर कई छात्रों को प्रश्न पत्र समय पर पूरा करने में कठिनाई होना आदि से संबंधित थी। जिसने शिक्षण प्रक्रिया को नकारात्मक रूप से प्रभावित किया।

ऑनलाइन शिक्षण में आने वाली व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ के विश्लेषण को विद्यालय के प्रकार के आधार पर देखने से स्पष्ट होता है कि–

समस्त 150 राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में से 72 अर्थात 48% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के अंतर्गत औसत स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना करना पड़ा। जिसके अंतर्गत ऑनलाइन शिक्षण के लिए आत्म-प्रेरित होने में कठिनाई होना जिससे पढाई में निरन्तरता बनाए रखने संबंधीय चुनौतियां सम्मिलित थी। इसके विपरीत 150 विद्यार्थियों में से 10 अर्थात 6.67% विद्यार्थियों ऑनलाइन शिक्षण के दौरान निम्न स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना करना पड़ा जिसके अंतर्गत आनलाइन परिक्षा में पारम्परिक परिक्षा के मुकाबले अधिक असहजता का अनुभव होता है जिससे प्रदर्शन प्रभावित होता है। इन चुनौतियों ने आंशिक रूप से शिक्षण प्रक्रिया को बाधित किया इसके अतिरिक्त कुल 150 विद्यार्थियों में से 68 अर्थात 45.33% विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान उच्च स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना करना पड़ा। यह चुनौतियाँ गूगल मीट, स्काइपी जैसे कन्फरेसिंग एप्लीकेशनों का उपयोग न आना, ऑनलाइन शिक्षा के लिए एक बड़ी चुनौती है व मूल्यांकन परीक्षा ऑनलाइन होने पर कई छात्रों को प्रश्न पत्र समय पर पूरा करने में कठिनाई होना आदि थी। यह शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित करने वाली प्रमुख चुनौतियों में से एक रही।

समस्त 450 नीजि विद्यालय के विद्यार्थियों में से 256 अर्थात 56.89% विद्यार्थियों को औसत स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना करना पड़ा जिसके अंतर्गत ऑनलाइन शिक्षण के लिए आत्म-प्रेरित होने में कठिनाई जिससे पढाई में निरन्तरता बनाए रखना अत्यधिक चुनौतीपूर्ण था। इसके विपरीत समस्त 450 में से 35 अर्थात 7.78% विद्यार्थियों

को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान निम्न स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना करना पड़ा जिसके अंतर्गत आनलाइन परिक्षा में पारम्परिक परिक्षा के मुकाबले अधिक असहजता का अनुभव होना जिससे प्रदर्शन प्रभावित होने संबंधी चुनौतियां सम्मिलित थी। इन चुनौतियों ने आंशिक रूप से शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित किया।इसके विपरीत समस्त 450 में से 159 अर्थात 35.33% विद्यार्थियों के एक बड़े वर्ग को ऑनलाइन शिक्षण के दौरान उच्च स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना करना पड़ा यह चुनौतियाँ गूगल मीट, स्काइपी जैसे कन्फरेसिंग एप्लीकेशनों का उपयोग न आना, ऑनलाइन शिक्षा के लिए एक बड़ी चुनौती है व मूल्यांकन परीक्षा ऑनलाइन होने पर कई छात्रों को प्रश्न पत्र समय पर पूरा करने में कठिनाई होना आदि चुनौतियां सम्मिलित थी। यह शिक्षण प्रक्रिया को व्यापक रूप से प्रभावित करती रही।

ऑनलाइन शिक्षण में आने वाली तकनीकी चुनौतियों से संबंधित राजकीय व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों से प्राप्त प्रदत्तों के विश्लेषण का तुलनात्मक अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों में (48%) और निजी विद्यालय के विद्यार्थियों में (56.89%) विद्यार्थी औसत स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना कर रहे हैं। वहीं दूसरी ओर निम्न स्तर की चुनौतियों का सामना करने के संदर्भ में राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की संख्या (.6.67%) निजी विद्यालय के विद्यार्थियों (7.78%) की तुलना में कम है जो यह दर्शाता है कि राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों को निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की अपेक्षा निम्न स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना कम करना पड़ता है। उच्च स्तर की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ का सामना करने के संदर्भ में राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों की संख्या (45.33%)निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की संख्या (33.33%) से अधिक परिलक्षित हो रही है जिसका तात्पर्य है कि राजकीय विद्यालय के विद्यार्थी, नीजि विद्यालय के शिक्षकों की तुलना में गंभीर व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ जैसे- गूगल मीट, स्काइपी जैसे कन्फरेसिंग एप्लीकेशनों का उपयोग न आना, व मूल्यांकन परीक्षा ऑनलाइन होने पर कई छात्रों को प्रश्न पत्र समय पर पूरा करने में कठिनाई होना आदि चुनौतिों का सामना अधिक करते हैं। अतः तुलनात्मक रूप से देखा जा सकता है कि निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की तुलना में राजकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों के लिए यह चुनौती व्यापक रुप में बनी रही।

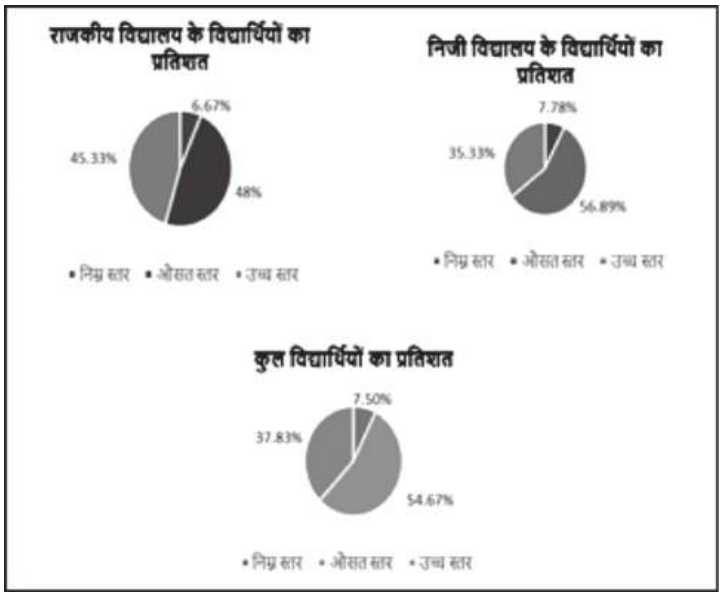

आरेख 4.1.3(c)
विद्यार्थियों के समक्ष आने वाली ऑनलाइन शिक्षण की व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधी चुनौतियाँ

निष्कर्ष

तकनीकी चुनौतियों के संबंध में राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों को निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की तुलना में उच्च स्तर की गंभीर चुनौतियों का सामना करना पड़ा जिसका एक कारण राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के पास तकनीकी समाज तथा संसाधनों की कम उपलब्धता हो सकता है।

पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों के संबंध में राजकीय व निजी विद्यालय के विद्यार्थियों को सम्मान प्रकार की पारिवारिक पृष्ठभूमि और आर्थिक स्थिति ऑनलाइन शिक्षण ग्रहण करने में गंभीर बड़ा होने जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ा किंतु राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों के लिए यह चुनौतियां अत्यधिक गंभीर थी।

व्यक्तिगत व परीक्षा संबंधित चुनौतियां के संबंध में निजी विद्यालय के विद्यार्थियों की तुलना में राजकीय विद्यालय के विद्यार्थियों को गूगल मीट स्काइप जैसे कॉन्फ्रेंसिंग एप्लीकेशन का उपयोग न आना ऑनलाइन शिक्षा के लिए एक बड़ी चुनौती वह मूल्यांकन परीक्षा ऑनलाइन होने पर कई छात्रों को प्रश्न पत्र समय पर पूरा करने में कठिनाई होने जैसी उच्च स्तर की चुनौतियों का सामना करना पड़ा।

संदर्भ

1. शर्मा, एन. (2025). ऑनलाइन शिक्षारू एक उभरता हुआ शैक्षिक माध्यम. शैक्षिक परिप्रेक्ष्य, 12(1), 45-50.
2. वर्मा, एस. (2025). ऑनलाइन शिक्षा के प्रकाररू समकालिक, अतुल्यकालिक एवं मिश्रित लर्निंग का विश्लेषण. भारतीय डिजिटल शिक्षा समीक्षा, 13(2), 34-42.
3. Ministry of Education, Government of India. (n.d.). PM eVIDYA - One Nation One Digital Platform. https://www.education.gov.in/pm-evidya
4. गुप्ता, आर. (2023). ऑनलाइन शिक्षण में शिक्षकों की चुनौतियाँरू एक विश्लेषणात्मक अध्ययन। शिक्षा और समाज, 12(3), 45-60.
5. UNICEF. (2023). ऑनलाइन शिक्षा : समस्याएँ और समाधान
   [Online Education: Problems and Solutions]. UNICEF. https://www.unicef.org/northmacedonia/stories/learning-online-problems-and-solutions
6. निर्भय कुमार योगी एवं पालीवाल, अ. (2022). भारत में ऑनलाइन शिक्षा की चुनौतियांरू एक विश्लेषणात्मक अध्ययन. शिक्षा और विकास पत्रिका, 8(1), 23-34.
7. Yadav, G. (2022). कोविड-19 के दौरान रीवा विकासखण्ड के हाई स्कूल स्तर के विद्यालयों में ऑनलाइन शिक्षा की चुनौतियों का समीक्षात्मक अध्ययन
   [A review study of challenges in online education at high school level institutions of Rewa block during COVID-19]. International Journal of Applied Research, 8(1), 329-333. Retrieved from https://www.allresearchjournal.com/archives/2022/vol8issue1/PartE/8-1-57-735.pdf
8. Kumar, A., & Tripathi, D. K. (2022).A study of problems faced by the teachers and students in online teaching-learning at upper primary level. The Learning, 11(2), 39-47. https://ndpublisher.in/admin/issues/TLv11n2b.pdf
9. Mehta, S., Bedi, S., & Arora, R. (2022). Perceptions and challenges of online teaching and learning amidst the COVID-19 pandemic in India: A cross-sectional study with dental students and teachers. Journal of Dental Education, 86(3), 349-361. https://doi.org/10.1002/jdd.12635
10. Pandit, S., & Agrawal, A. (2022). Exploring challenges of online education in COVID times. Indian Journal of Educational Studies, 10(1), 23-35.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

पारम्परिक पारिस्थितिकी ज्ञान और जलवायु

डॉ. वाणीश्री बुग्गी
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
माउंट कार्मल महाविद्यालय (स्वायत्त), बेंगलुरु
कर्नाटक (भारत)

बीज शब्द- जैविक, पर्यावरण, जलवायु, पारिस्थितिकी, परम्परागत, ज्ञान, सृष्टि, चेतना, भोजन, ऊर्जा, तत्त्व, प्रकृति तथा ग्रंथ आदि।

सारांश : पारम्परिक पारिस्थितिकी को अंग्रेजी भाषा में इकोसिष्टम कहा जाता है। इसमें जीवों तथा उनके गैर-जीवित (अजैविक) पर्यावरण के मध्य के सम्बन्धों का विश्लेषण किया जाता है। इस प्रक्रिया में जीवों तथा पर्यावरण के परस्पर सम्बन्ध सम्मिलित होते हैं। इसमें भोजन, आश्रय (स्रोत) तथा ऊर्जा के लिए प्रतिस्पर्धा आदि हैं। पौधे, जानवर, सूक्ष्म जीव तथा अन्य जीव पारिस्थितिकी तंत्र में सम्मिलित रहते हैं। ये जैविक घटक कहलाते हैं। अजैविक घटक इस प्रकार हैं—हवा, मिट्टी, सूर्य का प्रकाश तथा जलवायु अर्थात् तापमान आदि।

जैविक तथा अजैविक घटक परस्पर वार्तालाप करते हैं इस परस्पर वार्तालाप की प्रक्रिया से ऊर्जा एवं पोषक तत्वों का आदान-प्रदान होता है।

पारम्परिक पारिस्थितिकी ज्ञान : पारिस्थितिकी जीव विज्ञान तथा भूगोल की एक शाखा है। पारिस्थितिकी (Ecologg) में जीव समुदायों तथा उनके वातावरण के साथ ही पारस्परिक सम्बन्धों का गहन अध्ययन किया जाता है। पारिस्थितिकी तंत्र में जैविक तथा गैर जैविक घटकों का मिश्रण रहता है जो परस्पर एक दूसरे से प्रभावित रहते हैं तथा एक जटिल प्रक्रिया का निर्माण करते हैं। इस जटिल प्रक्रिया को सन्तुलन (Balance) की भी संज्ञा प्रदान की जाती है क्योंकि यही बैलेन्स ही मानव सृष्टि का आधार है।

''मानस समुदाया का उसका सम्मिलित स्वरूप समस्त जीवित जीवों एवं भौतिक पर्यावरण के मध्य के सम्बन्धों के अध्ययन को परिस्थिति की कहा जाता है।''[1]

पारिस्थितिकी का तात्पर्य यह है कि यह जीव विज्ञान की वह शाखा है जिसके अंतर्गत पौधों, प्राणियों तथा वातावरण के पारस्परिक सम्बंधों का वर्णन किया जाता है। ''पारिस्थिति की अर्थात् इकोलाजी शब्द का सर्व प्रथम प्रयोग सन् 1866 ई. में जर्मन वैज्ञानिक 'अर्नेस्ट हैकल' ने किया था। कुछ विद्वानों के मतानुसार पारिस्थितिकी का जनक 'अलेक्जेंडर वान हम्बोल्ट' को माना जाता है।''[2]

पारम्परिक पारिस्थितिकी जीवित जीवों, जिसमें मनुष्य भी सम्मिलित हैं जीवित जीव एक दूसरे साथ तथा अपने पर्यावरण के साथ अन्तःक्रिया करते हैं।

आधुनिक पारिस्थितिकी के जनक 'यूजीन पी. ओउम' को माना जाता है। आपने इस विषय पर गहनता से विश्लेषण किया है।

हमारे देश भारतवर्ष में रामदेव मिश्रा को इस पारिस्थितिकी तंत्र का जनक माना जाता है। आधुनिक युग प्रगतिशीलता का युग है। प्रगति के लिए परम्परागत समाजों को भी आधुनिकीकरण अपनाना पड़ा है।

अन्तरिक्ष के जीवन का अवलोकन ही ज्ञान है, इसका अर्थ सृष्टि के जीवन में भाग लेना है। जल के बिना एक दिन रहना भी कठिन होता है। इसी प्रकार दूरस्थ लोकों के आलोक के बिना रहना हमारी चेतना के लिए कठिन है। ''व्यक्ति भोजन अथवा जल की तरह एक महाजीवन के विचारों का भी अभ्यस्त हो सकता है। केवल नहीं चेतना सृष्टि की सच्ची सहकर्मिणी हो सकती है जो विश्व को व्यापक अर्थ में समेटे है। अपने-आपको पृथ्वी का नहीं बल्कि सृष्टि का निवासी होना चाहिए इस प्रकार हम एक और व्यापक दायित्व संभाल सकेंगे।''[3]

आदि मानव के लिए काल-ज्ञान तथा दिशा ज्ञान भौतिक आवश्यकताएँ थीं। इस तरह का ज्ञान आकाश के पिण्डों की गतियों को सतत अवलोकन करने से ही प्राप्त हो सकता था। हजारों वर्षों के संचित अनुभव से प्राचीन मानव से यह ज्ञात कर लिया था कि पेड़-पौधों, अन्न, फल-फूल, भोजन सामग्री, हवा पानी आदि का सम्बन्ध ऋतुओं से है और ऋतु चक्र का ज्ञान सूर्य एवं नक्षत्रों की गतियों का विश्लेषण करने से ही प्राप्त हो सकता है। ''प्राचीन मानव ने यह शोध किया था कि उसकी भोजन सामग्री-वन्य-जीव-जन्तु पशु वनस्पति आकाश में स्थित पिण्डों की गति-स्थिति से प्रभावित हैं। उसने आकाश के इस आवरण को अपनी पोशाक की तरह धारण कर लिया। कालान्तर में इसे ज्योतिष-शास्त्र की संज्ञा प्रदान की गयी।''[4]

पारिस्थितिकी जीवों के वितरण और प्रचुरता जीवों के बीच परस्पर क्रिया और ऊर्जा और पदार्थ के परिवर्तन और प्रवाह को प्रभावित करने वाली प्रक्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है। जीव विज्ञान में जीवों पर शारीरिक या शारीरिक वर्गीकरण विषयों के रूप में ध्यान केन्द्रित किया जाता है। पारिस्थितिकी और जीव विज्ञान की आधुनिक चिन्ताओं में भिन्नता है। ''प्रकृति तथा संस्कृति का सम्बन्ध अत्यन्त प्राचीन है। सृष्टि के चार आधार भूत तत्व हैं जल अग्नि वायु तथा पृथ्वी (मृदा)। पाँचवाँ सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है आकाश।''[5] आकाश के व्यापक धरातल पर ही इन तत्वों का अस्तित्व विद्यमान है। इन तत्वों का विस्तृत वर्णन (विश्लेषण) हमें वेदों में प्राप्त होता है। ऋग्वेद में अग्नि तत्व का स्वरूप विश्लेषण, रूप रुपान्तर कार्य तथा अग्नि के गुणों का भी विश्लेषण हुआ है। यजुर्वेद में वायु के विविध रूपों एवं गुणधर्मों का मंत्रों के माध्यम से निरुपण हुआ है। सामवेद में जल तथा इसी प्रकार अथर्ववेद में पृथ्वी (मृदा) तत्व की विस्तृत व्याख्या की गयी है।

सामवेद में प्राकृतिक सुषमा, वनस्पति, पशु जगत की सुरक्षा, ऋतु चक्र की निरन्तरता तथा औषधि विज्ञान के महत्व का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। इसी ग्रन्थ में यही लिखा है कि–

''आधुनिक वर्षा करने वाला इन्द्र जब जल बरसाता है तब सूर्य की पुष्टि कारक किरणें वृक्षों, वनस्पतियों तथा अन्य पौधों जो जीवन के लिए आवश्यक हैं का पोषण करने का कार्य करती हैं जीवन की पुष्टता प्रदान करती हैं। शरीर को पुष्ट करने वाला तत्व अन्न वर्षा होने पर ही उत्पादित है।''[6]

महाकवि बाणभट्ट अपनी पुस्तक कादम्बरी में लिखते हैं कि विन्ध्य क्षेत्र में वनस्पतियों की अधिकता दृष्टिगोचर होती है। साल के वनों में लवंग, पल्लव, बकुल, केतकी, चंदन, कदम्ब, तमाल, पूंग (सुपाड़ी) तथा नारिकेल के वृक्ष थे। इसके अतिरिक्त पलास, असन, आमलक, शमी, कुसुम, हरिति, श्रीदुम, कोविदार, तथा शात्मली आदि के वृक्ष विद्यमान हैं। बाणभट्ट ने शाल्मली वृक्ष को विन्ध्य के मित्र तथा दण्डकारण्य को राजा (अधिपति) की संज्ञा प्रदान की है। फलदार वृक्षों का वर्णन इस प्रकार किया है। दाड़िम, द्राक्ष, कदली, जाम्बूवन, आमलक, आम तथा नारियल आदि। पौधों एवं वृक्षों के प्रति मानव जीवन की सन्निकटता हमारे सांस्कृतिक, सामाजिक परम्पराओं तथा जन जीवन का भाग रही है।

मत्स्य पुराण में जलवायु सम्बन्धी वर्णन इस प्रकार किया गया है- ''दस कुओं के बराबर एक बावड़ी है। दस बाबड़ियों के बराबर एक तालाब है। दस तालाबों के बराबर एक पुत्र है तथा दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष है।''[7]

हमारे धार्मिक ग्रंथों में वृक्षों को लगाने एवं उनका पोषण करना आदि का वर्णन मिलता है। निम्नलिखित वृक्षों की उपयोगिता का उल्लेख इस प्रकार है–

क्रम सं.	वृक्ष	उपयोगिता
1	अशोक वृक्ष	दुःख (शोक) निवारण
2	बिल्ब वृक्ष	दीर्घायु प्रदान करना
3	जामुन वृक्ष	धन प्रदान करना
4	तेंदू वृक्ष	कुल वृद्धि
5	पीपल वृक्ष	एक लाख पुत्रों से भी बढ़कर
6	वट वृक्ष	मोक्ष प्रदायी
7	बजुल वृक्ष	बुद्धि प्रदायी
8	आम वृक्ष	अभीष्ट कामना प्रदायी
9	गुवरक (सुपाड़ी) वृक्ष	सिद्धप्रद
10	महुआ वृक्ष तथा अर्जुन वृक्ष	अन्न प्रदायी
11	कदम्ब वृक्ष तथा शमी वृक्ष	लक्ष्मी प्रदायी, रोगनाशक

इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि वनस्पतियाँ तथा वृक्ष जलवायु को प्रदूषित होने से रोकते हैं तथा मानव जीवन को सुखी बनाने में अहम् भूमिका अदा करते हैं।

निष्कर्ष

प्राचीन ज्ञान परम्परा के अन्तर्गत पारम्परिक पारिस्थितिकी ज्ञान एवं जलवायु यह एक प्रकार से मानव जीवन के सन्तुलन हैं। प्राचीन समय से ही इस विषय पर हमारे ऋषि मुनियों द्वारा ज्ञान प्रदान किया जाता रहा है। यह मूल रूप से जीव विज्ञान का विषय है परन्तु इसमें मानव जीवन के समस्त तन्तु विद्यमान हैं। पारिस्थितिकी में जैविक जीवों तथा गैर जैविक जीवों के मध्य तथा उनके परस्पर सम्बन्धों का विश्लेषण एवं वर्णन किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें ग्रह-नक्षत्रों, आकाश गंगाओं, खगोल विज्ञान तथा सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की संरचना का भी अध्ययन किया जाता है।

संदर्भ

1. सृष्टि पृथ्वी और मनुष्य-स्तेपान स्तुलगिंस्की, पृ. 15 संस्करण 2010 शुभदा प्रकाशन दिल्ली।
2. वही, पृ. 54
3. ब्रह्माण्ड परिचय-गुणाकर मुले-पृ. 211, संस्करण 2019, राजकमल प्रकाशन दिल्ली
4. वही, पृ. 1 प्राक्कथन
5. भारतीय ज्ञान परम्परा में कौशल विकास के विविध आयाम- डॉ. आभा गोयल, पृ. 57, संस्करण 2025, समता प्रकाशन कानपुर।
6. वही, पृ. 57
7. मत्स्य पुराण

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

हिन्दी उपन्यास में मानव तस्करी : सरिता पटेल का उपन्यास 'बिकता बदन' के विशेष संदर्भ में

SILPA.A
Research scholar
Govt.Arts and Science College meenchanda, Calicut
Mob: 7994393322
Email: Shilpadinesh.shilpadinesh@gmail.com

शोध सारांश

इस शोध पत्र का उद्देश्य हिन्दी साहित्य में मानव तस्करी के चित्रण का अध्ययन करना है। विशेष रूप से सरिता पटेल कृत बिकता बदन उपन्यास के संदर्भ में। यह अध्ययन मानव तस्करी के सामाजिक, आर्थिक और पितृसत्तात्मक कारणों को उजागर करने, स्त्रीयों और बालिकाओं के शोषण और पीड़ा को साहित्यिक दृष्टिकोण से समझने और पाठक को इस गंभीर सामाजिक यथार्थ के प्रति संवेदनशील बनाने के लिए किया गया है।

शब्द संकेत : तस्करी, देह व्यापार, धकेल, मौन शोक।

हिंदी साहित्य में मानव तस्करी पर चित्रण पहले से ही हुआ है। यह एक गंभीर और संवेदनशील विषय है,जो सामाजिक यथार्थ को उजागर करता है। मानव तस्करी विशेष रूप से महिलाओं और बच्चों की तस्करी को हिन्दी साहित्य में अनेक रचनाकारों ने अपने उपन्यासों, कहानियों और कविताओं में उठाया है। लेखकों ने इसे एक अपराध ही नहीं बल्कि मानवता के हनन के रूप में चित्रण किया है।

मानव तस्करी दुनियाभर में एक गंभीर समस्या बनकर उभरी है। यह एक ऐसा अपराध है जिसमें लोगों को उनके शोषण केलिए खरीदा और बेचा जाता है। खरीदे जाने के बाद उसका इस्तेमाल मुफ्त में आजीवन मज़दूरी करने उसके शरीर के अंगों को बेचने एवं अन्य लाभ केलिए उपयोग किया जाता है। मानव तस्करी मुख्य रूप से यौन शोषण, देह व्यापार, जबरन मज़दूरी, जबरन शादी, घरेलू काम करवाना, गोद देना, भीख मांगवाना, अंगों की बिक्री , मादक पदार्थ को एक स्थान से दूसरे स्थान भिजवाने केलिए महिलाओं और बच्चों की होती है। राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो के अनुसार 2018 से 2022 के बीच भारत में 10,659 मानव तस्करी के मामले दर्ज किए गए। 44% मानव तस्करी के पीड़ित 18 वर्ष से कम आयु के होते हैं। ये बच्चे अक्सर बेहतर जीवन की तलाश में धोखाधड़ी का शिकार होते हैं।

मानव तस्करी से संबंधित अब तक हिंदी में जितनी भी साहित्य सर्जन हुई है उनमें सबसे समृध्द कथा साहित्य ही रहा है। हिंदी में अब तक मानव तस्करी पर जो उपन्यास रचे गए है उनमें निर्मला भुराडिया कृत गुलाम मंडी, प्रवीण कुमार झा कृत कूली लाइन्स, कुसुम लता कृत अभागा बचपन, अभिमन्यु अनत कृत लाल पसीना, गीता पंडित कृत वह कोठेवाली है, कुसुम खेमानी कृत लालबत्ती की अमृत कन्याएं, सरिता पटेल कृत बिकता बदन आदि चर्चित रहे हैं।

'सरिता पटेल' कृत 'बिकता बदन' उपन्यास समाज के उस अंधेरे पक्ष को उजागर करता है जहां आर्थिक विसंगति

और पितृसत्तात्मक व्यवस्था के कारण स्त्रियां और बालिकाएं देह व्यापार एवं तस्करी के दलदल में धकेल दी जाती हैं। इस उपन्यास के पात्र 'रश्मि' और 'मीरा' स्त्री जीवन के उस कटु यथार्थ को सामने लाता है जहां गरीबी, शोषण, धोखा और मजबूरी मिलकर एक स्त्री के शरीर को बाज़ार की वस्तु बना देते हैं।

भारत में मानव तस्करी से पीड़ित 10 राज्यों में झारखंड चौथे स्थान पर है। झारखंड एक ऐसा राज्य है जहां मानव तस्करी एक विकराल समस्या के रूप में उभरा है। इस उपन्यास में लेखिका ने गिरीडीह नामक झारखंड के गाँव की दो लड़कियों के ज़रिए शादी के बहाने चलते जिस्मफरोशी की ओर संकेत देती हैं। जहां जबरन विवाह के उद्देश्य से मीरा और रश्मि दोनों की शादी करवाती है लेकिन विवाह के बाद ससुराल जाने के बाद उन्हें पता चलते है कि उनको किसी दलाल के माध्यम से बेच दी गई हैं। उन लड़कियों को बचपन से ही दबाया जाता, हजार बंधन और लगाम लगाया जाता हर चीज़ को लेकर डराया धमकाया जाता। ऐसी हालत में इन परिस्थितियों में कुछ कर पाने की हिम्मत उनमें नहीं होती। बचपन से ही माँ गुजरने करने के कारण मीरा को अपनी सौतैली माँ लक्षमीदेवी की डाँटना मारना पीटना से लेकर स्कूल तक न भिजवाना और घर से सारे काम गधे की तरह करवाना पड़ता है। ऐसी हालत पर जब उसकी शादी बिना उसकी सहमति के तय किया जाता है तो उसे कुछ कहने का अवकाश भी प्राप्त नहीं होता।

रश्मि की कहानी भी ऐसी कुछ अलग नहीं है। माता पिता के अभाव में चाचा- चाची के साथ रहने वाली रश्मि को अपनी शादी से नामंजूरी व्यक्त कर पाना मुश्किल हो जाती है। दोनों लड़कियाँ देह व्यापार की धंधे में जबरन ग्राहकों के सामने परोसी जाती हैं। हर रात एक नीलामी की तरह उसका शरीर बेच जाता है। उपन्यास में एक और पात्र है 'आराधना ' वह अपनी बहनों की परवरिश और पढ़ाई- लिखाई के लिए पैसे कमाने के लिए मजबूरी से इस धंधे में आई हैं।

उपन्यास केवल बाहरी यातना नहीं बल्कि उस मौन शोक को दर्शाता है। जो इन स्त्रियों के अंतर चलती है। "हमने जन्म लेकर जैसे कोई पाप किया हो कितनी अजीब बात है ना, हम माँ हैं, बहन हैं, बेटी हैं और वेश्या भी हैं। हर रूप में मर्दों को संभाला खुद को भूलकर और क्या मिला हमें? आँसू, दर्द, सदमें , गालियाँ और बदनामी।" यह एक खुला सवाल छोड़ता है। "एक ही तो चीज़ चाहिए थी इज्ज़त, सम्मान... वो भी न मिल सका हमें। तो ये दुनिया क्या देगी हमें?" पाठ को विवश करता है कि सोचने पर - मानव तस्करी अपराध ही नहीं, बल्की मानवता पर कलंक है।

बिकता बदन केवल इन स्त्रियों की कहानी नहीं, उन सभी आवाज़ों की कथा है जो कहती है "यहाँ आँसुओं की नहीं, जिस्म की भूख है।" यह साहित्य ही समाज का आईना है जिसमें हम सबका चेहरा दिखाई देता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. बिकता बदन - सरिता पटेल
2. झारखंड में मानव तस्करी एक विकराल समस्या धनबाद के संदर्भ में - शोध प्रारूप - कुमारी रमा उपाध्याय।
3. मानव तस्करी से संघर्ष नीति और कानून की कमियाँ, वीरेन्द्र मिश्रा
4. hindi-feminisminindia.com

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

मरंग गोडा नीलकंठ हुआ : विकिरण, प्रदूषण से जूझते आदिवासियों की गाथा

डॉ. श्रीकांत राठोड
श्री गु रा गाँधी कला, श्री य अ पाटील वाणिज्य एवं
श्री मा पु दोशी विज्ञान उपाधि महाविद्यालय इंडि, जिला विजयपुर

शोधसार : इक्कीसवीं सदी में तथाकथित विकास के नाम पर पेडों की अंधाधुंध कटाई, समुद्र एवं नदियों की गति और दिशा में मनमाना परिवर्तन, औद्योगिकरण और शहरीकरण, खनिज उत्खनन के नाम पर पारिस्थितिकी तंत्र का आवश्यकता से अधिक दोहन, जैव विविधता का क्रमिक न्हास मनुष्य के सभ्य होते चले जाने का बर्बर इतिहास प्रमाणित कर रहा है। आज अंतरराष्ट्रीय कंपनियां एक दूसरे के होड में है कि कौन कामगारों का सबसे अधिक शोषण और पारिस्थितिकी को सबसे अधिक बर्बाद कर सकता है। वर्तमान में विकास का अर्थ है पारिस्थितिकी तंत्र का विनाश और व्यक्ति का अमानवीकरण आज विकास की लालसा एवं मोह में मनुष्य जल, जंगल और जमीन को नष्ट कर रहा है। इक्कीसवीं सदी के प्रतिनिधि उपन्यासों में औद्योगिक क्रांति, मल्टीनेशनल कंपनियों का निर्माण, लोह और युरेनियम खदान का निर्माण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, जल प्रदूषण, भूमि प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग पेड़-पौधों की कटाई, जीव जंतुओं का नष्ट होना, पशु-पक्षियों की हत्या, रासायनिक एवं कीटकनाशक पदार्थों के बढ़ते उपयोग के कारण किस प्रकार पारिस्थितिकी तंत्र का न्हास हो रहा है इसका प्रभावशाली विवेचन प्रस्तुत किया है। इसी पारिस्थितिकी तंत्र के हास को लोगों तक पहुंचाना और लोगों के अंदर पारिस्थितिकी संरक्षण एवं संवर्धन के प्रति जागरूकता लाना तथा उसे जन आंदोलन बनाना आवश्यक है। आज हिंदी साहित्य के इतिहास में पारिस्थितिकी विषय को आधार बनाकर व्यापक स्तर पर लिखा जा रहा है। पारिस्थितिकी संकट की समस्या पर लिम्बने वाले हिदी के प्रतिनिधि उपन्यासकारों में कमलेश्वर, एस.आर.हरनोट, नासिरा शर्मा, शांता कुमार, अभिमन्यु अनंत कामतानाथ, नवीन जोशी, अलका सरावगी, विद्यासागर नौटियाल, ब्रजेश बर्मन, संजीव, कुसुम कुमार, महुआ माजी, रत्नेश्वर सिंह ओर भालचंद्र जोशी आदि का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

बीज शब्द : पारिस्थितिकी, प्रकृति, यूनियम, ग्लोबल वार्मिंग, भूमिगत खुदाई, टोलिंग, कैंसर।

आज संपूर्ण विश्व में विकास की अंधी दौड़ चल रही है। आज का मनुष्य न तो पारिस्थितिकी का ध्यान रख रहा है और न ही अपने संभावित भविष्य का। अत्याधिक और नियंत्रित विकास और प्राकृतिक संसाधनों के और अनैतिक दोहन ने मनुष्य के स्वास्थ्य को खतरे में डाल दिया है। आजादी के बाद से देश में खनन उद्योग के विकास पर अधिक ध्यान दिया है। जहां खनन कार्य से एक और भूमि और वायु प्रभावित होती है, वहीं भूमिगत खुदाई से प्राकृतिक जल स्रोत और जल स्तर पर भी प्रभाव पड़ता है। 'भरंग गोड़ा नीलकंठ हुआ उपन्यास में महुअ मांजी ने यूरेनियम खनन से उत्पन्न होने वाली विकिरण के दुष्प्रभाव का प्रभावशाली वर्णन किया है। किस तरह यह स्थानीय लोगों के स्वास्थ् पर प्रतिकूल प्रभाव के साथ-साथ जल के प्राकृतिक स्रोतों को भी प्रदूषित कर रही है। खदानों का प्रदूषित पानी ने खेत, कमल को बर्बाद कर दिया, जल के स्रोत को जहरिला बना दिया है। विकास योजनाओं के नाम पर जो खदान कंपनियाँ स्थापित किए जा रहे हैं उनसे आदिवासियों

को लाभ कम, नुकसान ज्यादा हो रहा है।

महुआ माजी अपने उपन्यास 'मरंग गोडा नीलकंठ हुआ' में आदिवासी इलाकों में बढ़ रहे प्रदूषण का गहनता से अध्ययन कर उसके कारण पर उंगली रखने का सफल प्रयास किया है। खदानों से निकलने वाले कचरे को आदिवासियों के इलाके में लाकर डाला जाता है। जिसमें आदिवासी बच्चे खेल कूद करते हैं। लेखिका लिखती हैं- "खदान के मिल से लगातार निकलने वाले गीले कचरे, जिन्हें बडे बडे पाइपों द्वारा लाकर बनाए गए डैम में डाला जाता, सूखकर सफेद मैदान का शक्ल लेता जा रहे थे। सगेन और उसके साथियं को खेलने की नयी जगह मिल गयी थी। कचरे की बलुआही मिटटी में बिना चोट चपेड के उछलते कूदते, गिरते, पडते, रहते सारे बच्चे।"[1]

मरंग गोडा, सारंडा तथा अन्य आदिवासी इलाकों में बने टेलिंग डैम के आस पास के तालाब में साल भर पानी सूखता नहीं क्योंकि टेलिंग डैम से रिस-रिस कर यूरेनियम कचरे का पानी तालाब में आते रहता है। वही पानी लोगों के नहाने धोने के लिए उपयोग में आता है। तालाब में नहाते एक व्यक्ति आदित्यश्री से कहता है- "आजकल सालों भर हमारे तालाब पानी से लबालब रहते हैं, मगर यहाँ का पानी बहुत भारी हो गया है। सर डुबाओ तो बाल मोटे लगते हैं। साबुन घिसते जाओ घिसते जाओ झाग ही नहीं होता।"[2]

एक संदर्भ में नायर साहब पर्यावरण के प्रदूषित होने के कारण बताते हैं- वैसे यह बात सही है कि समय के साथ साथ जैसे पर्यावरण दुषित होते जा रहा है, विकृतियों बढ़ रही हैं। वे कहते हैं, 'यूरेनियम खनन के दौरान निकलने वाले रैडॉन गैस ही हवा को प्रदूषित करने वाला मुख्य कारक है। उसी से थीमा जहर फैलता जुआ रहा है इलाके में।"[3]

खदानों के प्रदूषित पानी से खेत, फसल बर्बाद हो जाते हैं। जीव-जंतुओं, पशु-पक्षियों के शरीर में विकृतियों पैदा होती हैं। पेड़-पौधे जहरीले हो जाते हैं, फलों में बीज पड़ना बंद हो जाते हैं। सगेन कहता है- "इस प्रकार रेडियोधर्मी पदार्थों से दुइत पानी को जब सिंचाई के लिए इस्तेमाल किया जाता है तो उससे मिटटी प्रदूषित होती है। और उस मिटटी में उपजा अनाज, उपजी फसलें भी जहरीली हो जाती है।"[4]

सगेन, प्रज्ञा से 'मरंग गोडा में फैल रही विकिरण-प्रदूषण की समस्या के संदर्भ में कहता है- 'मरंग गोडा से सटे गाँव की आबादी तो कम है, मगर समस्या बहुत ज्यादा है। यूरेनियम की सात खदानें, एक मिल और तीन टोलिंग डैम, इससे वहाँ के लोगों के स्वास्थ्य पर भारी मार पड़ी है। इन कारणों से मरंग गोडा का पूरा इलाका तबाह हो गया है।' सुगेज एक गहरी सांस लेते कहता है- "यूरेनियम की सात खदानें, एकमिल और तीन टेलिंग डैम। विकिरण, प्रदूषण तथा विस्थापन जनित कभी न खत्म होने वाली पीड़ा ने इस इलाके को जर्जर कर डाला है। स्वास्थ्य पर तो मार पड़ी ही है, सैंकड़ों एकड़ जमीन चली गयी है-ग्रामीणों की।"[5]

आदिवासी लोग निरंतर अलग-अलग बीमारियों से जुझते रहते हैं। टेलिंग डैम के आस-पास के इलाकों में आदिवासी लोग अज्ञानतावश और लापरवाही से भी सुरक्षा की और ज्यादा ध्यान नहीं देते। अशिक्षित और अल्पशिक्षित लोगों से अधिक सुरक्षा के उपक्रम की उम्मीद भी नहीं कर सकते। जापान के ओट्टो, विश्वविद्यालय के परमाणु वैज्ञानिक प्रोफेसरबोयदे मुरंग गोड़ा की मिटटी, इचा और पानी की जांच कर रिपोर्ट देते हैं, जिससे चौंकानेवाले तथ्य सामने आते हैं। लेखिका लिखती हैं "टेलिंग डेम के पास हुवा में गामा किरणों का विकिरण इस से सौ गुना खाय था। प्रोफेसर बोयदे की रिपोर्ट में यह भी था कि टेलिंग डैम में मिटटी का नमूना लेते वक्त जिन औरतों को उन्होंने सिर पर लकड़ी का गटठर लेकर नंगे पांच टेलिंग डैम के मुखे कचरे के ऊपर से चलकर पार होते हुए देखा उनके शरीर में खतरनाक गामा किरणों के प्रवेश करने और क्षति पहुंचाने की पूरी संभावना थी।"[6]

उपन्यास में विकिरण और प्रदूषण से मरंग गोडा और उसके आस-पास के क्षेत्रों में फैली बीमारियों का भी चित्रण किया है। टी.बी॰, कैंसर, दमा, थैलेसिया, थायराइड, विकलांगता, अंगों के विकास में असंतुलन, कंपन आदि बीमारियाँ आम होती हैं, इन इलाकों में सगेन के दादा-दादी की मृत्यु टी.बी. और कैंसर से हुई थी। औरतें और बच्चे इस विकिरण और प्रदूषण से ज्यादा प्रभावित हुए थे। सगेन अपने संगठन की तरफ से एक अनुभवी डॉक्टर को आमंत्रित कर उस इलाके के रोगियों

से मिलाते हैं। वे उनका परीक्षण कर उनकी बीमारियों का खुलासा करते हैं "किसी के शरीर पर उभर आए काले काले धब्बों को त्वचा के कैंसर का पहला स्टेज बताते कहते हैं- "त्वचा के अंदर कैरेटिन बुद्ध जाने पर ऐसा होता है बच्चों वर बड़ों की देहू के विभिन्न स्थानों में खासकर पेट में उभर आई बड़ी सी गांठ को छ छकर देखते और आश्वस्त होकर 'आबूर्द' की संज्ञा देते। किसी बच्चे के एक हाथ या पांव को अस्वाभाविक रूप से बड़ा देख कर चिंता व्यक्त करते तो सामान्य से छोटे आकार के सिर वाले बच्चे को माइक्रो कैचेली और बहुत बड़े आकार के सिर वाले बच्चे को मेगा कैथेली से पीडित बताते।"[7]

टेलिंग डैम से पानी रिस रिसकर तालाब में मिल जाता है। तालाब की मछलियाँ भी जहरीली हो गयी हैं। नाले के आसपास पाए जाने वाले सांप, मेंढक, विच्छ इस जहरीले पाने से मरते रहते हैं। लोग कैंसर की बीमारी से मरते रहते हैं। कंपनियों के रेकार्ड में कैंसर से भरनेवाले एक भी मरीज का नाम दर्ज नहीं होता। मुआवजा देने के डर से कैंसर को टी.वी. का नाम दिया जाता है। तालाब में नहाते हुए व्यक्ति आदित्यश्री से कहता है- "जो गिनी चुनी मछलियाँ हैं, उनमें से ज्यादातर बड़ी अजीब सी दिखती हैं। उनकी मुंडी बहुत्त मोटी होती है और देहू पतली। ऐसी मछलियाँ आपको मरंग गोडा के अलावा और कहीं नहीं दिखेंगी साहब। कहीं नहीं। नाले के आसपास पाए जाने वाले सांपों का भी यही हाल है। पुतली देह और बुड़ा सा. सिर कितने ही सांप, मेंढक, बिच्चू मरते रहते हैं, जब तब। मगर हुम जिंदा हैं साइब अभी भी जिंदा हैं। जाने कब तक रहेंगे। खांसते खांसते दुम बंद होने लगते हैं, मेरे। कंपनी की डिस्पेंसरी में दिखाया, कहते हैं, टी. बी. है। ठीक हो जाएगा। पर मैं जानता हूँ कोई नहीं बचा इस रहस्यमयी टी.बी. से हमारे मरंग गोड़ा में।"[8]

अजित गुप्ता कुत उपन्यास 'अरण्य में सु2ज' में भी टी.बी. की बीमारी से जूझ रहे भील आदिवासियों का चित्रण मिलता है। किसन की माँ खून की उल्टी करने लगती है। सोहना उसे अस्पताल ले जाता है। डॉक्टर उसका इलाज करके कहता है- "इसे टी.वी. की पुरानी बीमारी है, पहले पूरा इलाज नहीं कराया तो इसके फेफड़ों में घाव बन गए हैं, और खांसने के साथ घावों से खून आने लगता है। अब दवा भी काम नहीं करेगी।"[9]

रणेन्द्र के उपन्यास 'ग्लोबल गाँव के देवता' में प्रदूषण की समस्या की ओर संकेत किया गया है। आदिवासी असूरों के इलाके में शिंडाल्को जैसी बड़ी-बड़ी कंपनियाँ लगाई गई हैं। बॉक्साइट खदानों से बनें गड्ढों को बरने का कोई उपाय नहीं होता। बरसत के समय में उन खदानों में पानी भरने लगता है और वहाँ का इलाका प्रदुषित हो जाता है। इससे उन् इलाके के लोग अलग-अलग बीमारियों का शिकार हो जाते हैं। कोयलेश्वर आश्रम में बुलाए गाए मीटिंग में अपना मत रखते हुए लालचन-रुमझुम कहते हैं "अब तक इन खुले खदानों की बरसाती जमें पानी में पल-वहकर मच्छरों ने हमारा जीना हराम कर रखा है। हमारे होश में चार दर्जन से ज्यादा नयी उमर के लड़के माथा पुरखार-सेरेब्रल मलेरिया से मरे हैं पूड़े-बुजुर्गों की तो गिनती ही नहीं। हुमारे दुख से इन्हें क्या, इनको तो बस अपने मुनाफे से मतलब है।"[10]

आदिवासी केन्द्रित उपन्यासों में विकिरण-प्रदषण से होनेवाली समस्याओं तथा बीमारियों का चित्रण है। महुआ माजी ने अपने उपन्यास 'मरंग गोडा नीलकंठ हुआ में मरंग गोडा तथा आसपास के क्षेत्रों में खदानों से रिसनेवाला पानी तालाब में मिलता है। उसके उपयोग से लोग टी.बॉ. और कैंसर जैसी बीमारियों का शिकार हो रहे हैं, तालाब की मछलियाँ, मेंढक, सांप, खेत-खलिहानों की उपज भी उससे प्रभावित हो रहे हैं। अजित गुप्ता मरीजों का गरीबी के चलते मृत्यु होना आदि का चित्रण हुआ है। अंततः कहना गलत नहीं होगा की विकास के नाम पर आदिवासियों के क्षेत्रों में यूरेनियम, बॉक्साईट के खदानों की कंपनियाँ लगाई जाती हैं, लेकिन इनसे निकलने वाले गंदगी से पूरा इलाका विकरिण और प्रदुषण का शिकार हो जाते हैं।

संदर्भ

1. मरंग गोडा नीलकंठ हुआ, महुआ माजी -पृ.सं. 91
2. मरंग गोडा नीलकंठ हुआ, महुआ माजी -पृ.सं. 184
3. मरंग गोडा नीलकंठ हुआ, महुआ माजी -पृ.सं. 191

4. मरंग गोडा नीलकंठ हुआ, महुआ माजी -पृ.सं. 192
5. मरंग गोडा नीलकंठ हुआ, महुआ माजी -पृ.सं. 355
6. मरंग गोडा नीलकंठ हुआ, महुआ माजी -पृ.सं. 327
7. मरंग गोडा नीलकंठ हुआ, महुआ माजी -पृ.सं. 182
8. मरंग गोडा नीलकंठ हुआ, महुआ माजी -पृ.सं. 185
9. अरण्य में सूरज, अजित गुप्ता, पृ. सं. 162
10. ग्लोबल गाँव का देवता, राणेंद्र, पृ. सं. 62

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary &
Multiple Languages Quarterly Research Journal

डॉ. नरेश सिहाग का कहानी संग्रह और किन्नर विमर्श

डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय
चित्रकूट (उत्तर प्रदेश)-210204
मो.- 8604112963, ईमेल - putupiyush@gmail.com

इच्छा उपाध्याय
छात्रा (एम. ए.), हिन्दी विभाग
जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय
चित्रकूट (उत्तर प्रदेश)-210204
मो.- 78808 34947

शोध सारांश- डॉ. नरेश सिहाग समकालीन हिंदी साहित्य के एक सशक्त कथाकार, आलोचक और संवेदनशील समाज चिंतक भी हैं। उनके लेखन में समाज के हाशिए पर स्थित वर्गों जैसे दलित, महिला, आदिवासी और विशेष रूप से किन्नर समुदाय की समस्याएँ, पीड़ा और संघर्ष को गहराई से उभारते हैं।

समकालीन हिंदी कहानी साहित्य में हाशिए पर स्थित समुदायों की आवाज़ें प्रमुखता से उभर रही हैं। इन समुदायों में किन्नर समाज एक ऐसा वर्ग है जिसे लंबे समय तक सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक विमर्शों में उपेक्षित रखा गया। डॉ. नरेश सिहाग का कहानी संग्रह इस मौन समुदाय को वाणी प्रदान करता है और उनके जीवन, संघर्ष, संवेदना तथा अस्तित्व की जटिलताओं को यथार्थ रूप में प्रस्तुत करता है। उनकी कहानियाँ किन्नर पात्रों को मात्र दया या सहानुभूति के पात्र के रूप में नहीं बल्कि, आत्मसम्मान और मानवीय अधिकारों के प्रतीक के रूप में चित्रित करती हैं।

इस शोध पत्र में डॉ. सिहाग के कहानी संग्रह के माध्यम से किन्नर विमर्श की साहित्यिक अभिव्यक्ति का विश्लेषण किया गया है। इससे स्पष्ट है कि, लेखक किस प्रकार सामाजिक पूर्वाग्रहों को तोड़ते हुए किन्नर पात्रों की अंतपीड़ा, आकांक्षाएँ और संघर्षों को संवेदनशीलता से अभिव्यक्त करते हैं। साथ ही साथ इस बात पर भी प्रकाश डालता है कि, डॉ. सिहाग की रचनाएँ हिंदी साहित्य में किन्नर विमर्श को एक नई वैचारिक दिशा प्रदान करती हैं।

बीज शब्द- किन्नर, उपेक्षित, गुणसूत्र, बहिष्कृत, दायरा, उपहास, हिजड़े, खामोशी।

प्रस्तावना

साहित्य समाज का प्रतिबिम्बन है। जो केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं बल्कि, समाज में हाशिए पर पड़े वर्गों की आवाज़ को सामने लाने का महत्वपूर्ण साधन भी है। भारतीय समाज में किन्नर समुदाय लंबे समय से सामाजिक बहिष्कार और उपेक्षा का शिकार रहा है। उनकी पहचान, जीवन और संघर्ष को लेकर अक्सर रूढ़िवादी दृष्टिकोण प्रबल रहे हैं।

'मैं पायल' उपन्यास में किन्नरों की स्थिति के विषय में कहा गया है कि अधूरी देह क्यों मुझको बनाया, बता ईश्वर तुझे यह क्या सुहाया। किसी का प्यार हूँ न वास्ता हूँ, न तो मंजिल हूँ मैं न रास्ता हूँ। कि अनुभव पूर्णता का हो न पाया, अजब खेल यह रह - रह धूप छाया।

इस संदर्भ को स्पष्ट करने में डॉ. नरेश सिहाग का कहानी संग्रह महत्वपूर्ण योगदान करता है। उनके कथ्य में किन्नर समुदाय के जीवन की वास्तविकताएँ, उनकी भावनाएँ, संघर्ष और अस्तित्व की गरिमा जीवंत रूप में चित्रित होती है। उनकी

कहानियाँ केवल समाज की आलोचना नहीं करती बल्कि, पाठक को मानवीय संवेदनाओं और सहिष्णुता के दृष्टिकोण से सोचने पर मजबूर करती हैं।

प्रस्तुत शोध का उद्देश्य डॉ. सिहाग के कहानी संग्रह के माध्यम से किन्नर विमर्श के साहित्यिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आयामों का विश्लेषण करना है। यह अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि, साहित्य में किन्नर समुदाय को केवल प्रतीकात्मक रूप में नहीं देखा जाना चाहिए अपितु उनके जीवन और संघर्ष को वास्तविकता के परिप्रेक्ष्य में समझा जाना आवश्यक है।

किन्नर विमर्श से अभिप्राय

यह स्त्री विमर्श और दलित-विमर्श की तरह ही एक उपेक्षित वर्ग का विमर्श है। किन्नर विमर्श से अभिप्राय समाज में किन्नर, उभयलिंगी, हिजड़ा अथवा ट्रांसजेंडर समुदाय के जीवन, पहचान, अधिकार एवं उनके समाजिक-सांस्कृतिक संघर्षो का अध्ययन कर उन्हें समाज में उनका अधिकार दिलाना है। यह विमर्श उन मान्यताओं या नियमों को चुनौती देता है जिसने लिंग को स्त्री एवं पुरुष दो दायरों में बाँधने का कार्य किया। यह विमर्श उन लोगों के जीवन में आने वाले संघर्ष और समस्याओं को केन्द्र में रखकर कार्य करता है, जिन्हें हमारे समाज में 'न पुरुष और न स्त्री ' मानकर उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है।

'किन्नर यह शब्द हिन्दी के 'किं' और 'नर' के योग से बना हुआ है। जिसका संबन्ध हिमाचल के किन्नर जनजाति से नहीं है बल्कि, उस वर्ग से है जो पूर्णरूपेण न स्त्री और न पुरुष ही है।'[1]

किन्नरों को देखते ही लोगों के मनोमस्तिष्क में एक नकारात्मक विचारधारा आती है, उन्हें स्त्री एवं पुरुष दोनों का संयुक्त रूप मानते हैं क्योंकि वह पूर्णरूपेण न स्त्री और न ही पुरुष हैं।

'सभ्य समाज से निराश्रित, बहिष्कृत एवं तिरस्कृत यह वर्ग दो वक्त की रोटी का मोहताज होने के साथ ही अकेलेपन एवं अजनबीपन की पीड़ा को झेलने के लिए भी बाध्य है समाज इन्हें प्रति पल ठोकर तो मारता ही है साथ ही भद्दी गाली और उपहास उड़ाकर पुरस्कृत भी करता है।'[2]

किन्नर समुदाय को भी मौलिक अधिकार प्राप्त हैं पर फिर भी उन्हें समाज के लोगों द्वारा उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता है और गन्दी-गन्दी गालियों और परिहास का पात्र बना दिया जाता है।

किन्नर शब्द को विभिन्न रूपों में परिभाषित करने का कार्य विभिन्न विद्वानों द्वारा अपने-अपने मतानुसार किया गया। जिनमें से कुछ इस प्रकार हैं–

Williams (1989)- "Who have male bodies, a social position closer to those women than of man and great spiritual power."[3]

अर्थात् ऐसा कहा जा सकता है कि, किन्नर समुदाय के लोग न तो स्त्री होते हैं न ही पुरुषों की संरचना में आते हैं किन्नर बाहर से तो पुरुष दिखते हैं किन्तु उनके ज्यादातर हावभाव स्त्रियों के समान होते हैं।

भारत में किन्नरों की जनसंख्या की बात करें तो उनकी कुल जनसंख्या के बारे में इस प्रकार से आँकड़े प्राप्त होते हैं–

'भारत की 2011 की जनगणना के अनुसार पूरे भारत में 49 लाख किन्नर हैं। इसी जनगणना के अनुसार शिक्षित किन्नरों की संख्या सिर्फ 46 प्रतिशत है, 2 लाख हिजड़ों में से 400 ही जन्मजात हिजड़े हैं।'[4]

भारतीय समाज में किन्नरों के प्रति नकारात्मक दृष्टिकोण के परिणाम स्वरूप उनकी शिक्षा में न्यूनता परिलक्षित होती है।

कहानी संग्रह : एक विहंगावलोकन - डॉ. नरेश सिहाग वर्तमान हिंदी साहित्य के एक ऐसे संवेदनशील रचनाकार हैं, जिन्होंने समाज के उस वर्ग को एक साहित्यिक आधार प्रदान करने का कार्य किया है; जिसे समाज एवं साहित्य दोनों ने ही अभी तक अनसुना किया और न ही उनकी समस्याओं के समाधान के लिए कोई प्रयास किया।

इनके कहानी संग्रह 'बहुत तेज भागती है जिंदगी' का प्रकाशन 2025 में हुआ। इस कहानी संग्रह के अन्तर्गत 36 कहानियाँ संग्रहित हैं। जिसकी सभी कहानियाँ किन्नर जीवन पर आधारित हैं। कहानी संग्रह की कुछ कहानियाँ इस प्रकार से हैं-'तेरे बस का नहीं', 'बहुत तेज भागती है जिंदगी', 'बचपन गुजर जाने के बाद', 'तेरी कहानी तेरी कलम', 'टूटती डाल', 'मुस्कान', 'कमबख्त वक्त' आदि हैं।

इन सभी कहानियों का उद्देश्य किन्नरों की समस्याओं को दिखाते हुए उन्हें समाज में अन्य लोगों की तरह ही अधिकार दिलाना है। साथ ही साथ किन्नरों के द्वारा समस्याओं का निवारण कर आगे बढ़ते हुए शिक्षा से समाज को एक नई सीख प्रदान करना भी है।

संग्रह की कहानियाँ और किन्नर विमर्श

डॉ. नरेश सिहाग वर्तमान हिन्दी मर्मज्ञों में से एक हैं। जिन्होंने समाज के द्वारा उपेक्षित वर्गों में किन्नर समुदाय के जीवन, संघर्ष और मानवीय पक्ष को अपनी कहानियों में प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियों में किन्नर विमर्श न केवल सामाजिक स्थिति को वास्तविक रूप में उभारकर सामने लाया गया है बल्कि, यह विमर्श मानवीय संवेदना, भावनाओं, स्वीकृति की गहराई से भी जुड़ा हुआ है।

डॉ. नरेश सिहाग की कहानी संग्रह में किन्नार विमर्श के संदर्भ का विश्लेषण इस प्रकार से प्रस्तुत किया गया है–

जब राजू ने कहा– माँ! मैं रिया बनना चाहती हूँ तो जैसे बिजली गिर पड़ी उस घर पर।

पिता चिल्लाए– शर्म आती है मुझे। निकल जा इस घर से अभी।

माँ रोती रह गई-कहाँ जाएगी तू?

रिया ने सिर्फ इतना कहा– 'जहाँ मुझे कोई नाम नहीं पूछेगा।'[5]

उक्त उदाहरण किन्नर की स्थिति को दिखाने का कार्य करता है। बच्चे जैसे भी हों उनमें मां-बाप की जान बसती है, किन्तु हमारे समाज में किन्नर होना न सिर्फ उस व्यक्ति के लिए ही समस्या है बल्कि, उस व्यक्ति के परिवार वालों को भी समाज उपेक्षा की दृष्टि से देखते है। इतनी बड़ी उपेक्षा से बचने के लिए रिया को घर से निकाल दिया जाता है। उसकी माँ देखती रह जाती है उसे रोक भी नहीं पाती है। यही स्थिति हर किन्नर की है और उसे जन्म देने वाली माँ के साथ ऐसी ही घटना घटती है।

किन्नर समुदाय के लिए उपेक्षा एवं उपहास न सिर्फ बड़ों के ही मन में होता है बल्कि, छोटे-छोटे बच्चे भी उन्हें हँसी का पात्र समझते हैं। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि बच्चे जैसा समाज के लोगों के द्वारा सुनते और देखते वैसे ही सीखते और करते हैं। यहाँ पर जैसे रिया का बच्चे उपहास उड़ाते हैं वैसे ही हमारे समाज में प्रत्येक किन्नर के साथ होता है। समाज के लोग यह भूल जाते हैं कि, किन्नर भी इंसान होता है। इसका उदाहरण डॉ. नरेश सिहाग की कहानी में इस प्रकार मिलता है-

बच्चे पहले हँसे–

'अरे ये तो हिजड़ा है!'

रिया मुस्कराई, बोली–

'हाँ, हिजड़ा हूँ पर इंसान भी हूँ।

तुम्हारी माँ की तरह रोती हूँ, तुम्हारे पिता की तरह डरती हूँ और तुम्हारे जैसे सपने देखती हूँ।'[6]

समाज के लोगों द्वारा नीलम को उन सभी कार्यों को करने पर भी उसे उपेक्षा का पात्र बना दिया गया जिन कार्यों का निर्धारण कुत्सित विचारों और के कारण समाज ने किन्नरों के लिए कर निर्धारित किया है। हमारे समाज में कुछ ऐसे भी लोग पाये जाते हैं जो किन्नरों को तेरे बस की बात नहीं है शरीफों की दुनियाँ में रहने का ताना मारते हैं। अपनी सीमित एवं दूषित मानसिकता के कारण लोगों के प्रति समानता का भाव न रखकर खुद को ही शरीफ मानते हैं। उसका एक उदाहरण

द्रष्टव्य है–

नीलम ने ताली बजाना, दुआएँ देना, और मेहँदी लगाना सीखा। लोगों के दरवाजे पर मुस्कुराते हुए जाती, पर कई बार दरवाजा बंद कर दिया जाता।

कभी सिक्का मिलता, कभी ताने–'चल हट, तेरे बस का नहीं है शरीफों की दुनिया में रहना।'[7]

शिक्षा का अधिकार सभी नागरिकों के लिए एक समान होता है और शिक्षा प्रदान करने वाले सभी स्कूल एवं संस्थाएँ मंदिर की तरह होते हैं। जहाँ पर बिना किसी प्रकार के भेदभाव के सभी को एक साथ रहकर पढ़ने का अधिकार प्राप्त है। किन्तु हमारे शिक्षित समाज ने तो शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थाओं तक किन्नरों के लिए भेदभाव को लाकर खड़ा कर दिया है। किन्नरों को शिक्षा ग्रहण करने में भी समाज द्वारा बनाई हुई अनेक समस्याओं को झेलना पड़ता है। हॉस्टल वॉर्डन ने नीलम के अन्दर पढ़ाई के प्रति लगाव न देखकर उसे हॉस्टल से सिर्फ इसलिए निकाल दिया क्योंकि वह किन्नर थी। यही हालत प्रायः सम्पूर्ण किन्नर समुदाय के लोगों की होती है। इसका एक सशक्त उदाहरण इस प्रकार है–

जब कॉलेज में दाखिला लिया तो हॉस्टल वॉर्डन बोली–

'हमारे यहाँ तुम्हारे जैसे लेगों के लिए कमरा नहीं है।'

नीलम ने जवाब दिया - तो फिर मैं दरवाजे के बाहर बैठ जाऊँगी, लेकिन पढाई नहीं छोड़ूँगी।

वो किताबों के साथ मंदिर की सीढ़ियों पर रातें काटती। कई बार भूखी रहती, कई बार बरसात में भीग जाती।'[8]

उसकी खामोशी में तो सारे सवाल दफन हो गए जो कभी समाज से पूछना चाहता था–

'अगर मैं इंसान हूँ तो मेरे हक क्यों अलग हैं?

अगर मैं मुस्कुरा दूँ तो वो तमाशा क्यों बन जाता है?

और अगर मैं जीना चाहूँ तो मेरे जीने पर ताने क्यों लगते हैं?'[9]

भारतीय संविधान में प्रायः सभी नागरिकों के लिए समानता के अधिकारों की बात की गयी है। फिर भी हमारे समाज के लोगों के द्वारा किन्नरों को उस समानता की दृष्टि से नहीं देखा जाता है। यही स्थिति हर किन्नर की है। उनके मन में समाज से पूछने के लिए प्रश्न प्रति क्षण जन्म लेते हैं कि, हम लोग भी इंसान हैं हमें भी उसी ईश्वर ने ही बनाया है, जिसने अन्य लोगों को बनाया है। फिर हमारे अधिकार क्यों समाज के द्वारा अलग कर दिए गए हैं? क्या हमें जीने और सपने देखने का भी अधिकार नहीं है? लेखक द्वारा उपर्युक्त पंक्तियों में इस बात को स्पष्ट किया गया है।

विज्ञान कहता है कि, बच्चे का जन्म माता-पिता के गुण सूत्रों के मिलने से होता है और हमारी धार्मिक मान्यताओं के अनुसार बच्चे का जन्म ईश्वर की देन होती है। हमारा देश सभी प्रकार की विचारधाओं पर धार्मिक मान्यताओं पर आधारित रहता है। जिस प्रकार से स्त्री एवं पुरुष का निर्माण ईश्वर करता है ठीक उसी प्रकार से किन्नर की शारीरिक रूपरेखा का भी निर्माण ईश्वर ही करता है, फिर भी उनके साथ समाज के लोगों के द्वारा दुर्व्यवहार किया जाता है।

किन्नर ईश्वर से विनती करते हुए बोलता है कि, मुझे अगर अगला जन्म दीजिएगा तो पूरा शरीर देकर ही भेजिएगा क्योंकि मैं समाज के द्वारा किये जाने वाले मजाक एवं उनके द्वारा बनाए जाने बाले तमाशे का अब हिस्सा नहीं बनाना चाहता हूँ। ईश्वर से यह विनती प्रायः सभी किन्नरों की रहती है। किन्नरों के इस भाव को अपनी कहानी में डॉ नरेश सिहाग ने बढ़े ही सुन्दर ढंग से इस प्रकार प्रस्तुत किया है-

'कमबख्त वक्त!!
कभी रोटी के पीछे भागता है,
कभी इज्जत के टुकड़े माँगता है,
कभी सजधज के रंगो में हँसता हूँ ,
तो कभी आँसुओं में भी मुस्कुराता हूँ।
कभी मंदिर की सीढ़ियों पे सिक्का गिरा के,

खुदा से कुछ नहीं माँगता,
बस ये दुआ करता हूँ
कि, अगली बार मैं पूरा इंसान बनूँ ,
किसी मजाक या तमाशे का हिस्सा नहीं।
कमबख्त वक्त।'[10]

निष्कर्ष

डॉ. नरेश सिहाग के कहानी-संग्रह में किन्नर समुदाय का प्रस्तुत किया गया चित्रण केवल सहानुभूति का विषय नहीं बल्कि, एक गहन सामाजिक विमर्श का आधार बनकर सामने आता है। डॉ. सिहाग ने किन्नर जीवन की जटिलताओं, उनकी भावनात्मक आवश्यकताओं, सामाजिक अस्वीकार्यता और अस्तित्व के संघर्ष को अत्यंत संवेदनशीलता के साथ प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि, किन्नर होना केवल जैविक या शारीरिक भिन्नता का प्रश्न नहीं बल्कि, सामाजिक स्वीकार्यता और मानवीय गरिमा से जुड़ा गहरा मुद्दा है। उनका लेखन समाज में व्याप्त पूर्वाग्रहों को चुनौती देता है और एक ऐसे मानवीय दृष्टिकोण की स्थापना करता है, जो हर व्यक्ति को उसकी पहचान और गरिमा के साथ देखने का आग्रह करता है।

उनका कथा-साहित्य न केवल किन्नर विमर्श को एक नई दिशा प्रदान करता है बल्कि, सामाजिक चेतना और मानवीय संवेदना के विस्तार का भी माध्यम बनता है। इस दृष्टि से उनका रचनात्मक योगदान वर्तमान हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण पड़ाव है, जो समाज में समानता, स्वीकृति और अस्मिता को स्थापित करने की दिशा में एक सार्थक कदम है।

संदर्भ

1. https://warpudkarcollege.com
2. अहमद, डॉ. इसरार, किन्नर विमर्श साहित्य के आईने में, विकास प्रकाशन, कानपुर, सन् -2017, पृ.- 24.
3. Connell Raewyn, Gender in world perspective, bolity press, first edition in 2009, pg.-109.
4. https://snckollam.ac.in
5. बोहल, डॉ. नरेश सिहाग, बहुत तेज भागती है जिंदगी, एस एस. पब्लिकेशंस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, सन 2025, पृ. 10.
6. वही, पृ.-11.
7. वही, पृ.-15.
8. वही, पृ.-16.
9. वही, पृ.-35.
10. वही, पृ.-75-76.

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

2047 में भारत की उच्च शिक्षा का परिदृश्य : विश्वविद्यालय और कॉलेजों में शिक्षा के स्वरूप और वैश्विक प्रतिस्पर्धा

Dr. Mahesh Chand Gurjar
Education department - Assistant professor
Smt.Anar Devi Teacher's Training College Bakharana (Kotputli -Behror) 303105
Email - Jangalmahesh@Gmail.com

सारांश

भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली ने पिछले दशकों में उल्लेखनीय प्रगति की है। 2047 तक, शिक्षा के स्वरूप में तकनीकी नवाचार, वैश्विक प्रतिस्पर्धा, अनुसंधान, उद्यमिता और कौशल विकास की महत्वपूर्ण भूमिका होगी। विश्वविद्यालय और कॉलेज केवल ज्ञान हस्तांतरण तक सीमित नहीं रहेंगे, बल्कि व्यावहारिक कौशल, अनुसंधान और नवाचार पर अधिक जोर दिया जाएगा।

यह शोध-पत्र 2047 तक भारत की उच्च शिक्षा की वर्तमान स्थिति, संभावित चुनौतियाँ, वैश्विक प्रतिस्पर्धा, नीति सुधार और भविष्य की रणनीतियों का विस्तृत विश्लेषण करता है। अध्ययन में यह भी समझाया गया है कि कैसे तकनीकी नवाचार, प्रशासनिक सुधार और समाजिक भागीदारी से भारत को वैश्विक मानकों के अनुरूप प्रतिस्पर्धात्मक और समावेशी शिक्षा प्रणाली तैयार करने में मदद मिलेगी।

कुंजी शब्द : उच्च शिक्षा, विश्वविद्यालय, वैश्विक प्रतिस्पर्धा, तकनीकी नवाचार, कौशल विकास, अनुसंधान, उद्यमिता, नीति सुधार, भारत, 2047

प्रस्तावना

उच्च शिक्षा किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, आर्थिक और वैज्ञानिक विकास का आधार होती है। भारत में पिछले दशकों में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण बदलाव हुए हैं। विश्वविद्यालय और कॉलेजों की संख्या में वृद्धि हुई है, नए पाठ्यक्रम और कौशल विकास कार्यक्रम लागू किए गए हैं, लेकिन वैश्विक प्रतिस्पर्धा और तकनीकी नवाचार के संदर्भ में अभी भी चुनौतियाँ बनी हुई हैं।

2047 तक, भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली को बदलने की आवश्यकता होगी। यह केवल पाठ्यपुस्तक आधारित शिक्षा तक सीमित नहीं रहेगी, बल्कि अनुसंधान, नवाचार, व्यावहारिक कौशल, उद्यमिता और वैश्विक सहयोग पर अधिक ध्यान देगी। वैश्विक प्रतिस्पर्धा को ध्यान में रखते हुए, विश्वविद्यालय और कॉलेज छात्रों को अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप तैयार करेंगे।

भौगोलिक, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से यह आवश्यक है कि सभी वर्गों और क्षेत्रों के छात्रों तक उच्च शिक्षा की

पहुँच सुनिश्चित की जाए। इस शोध-पत्र का उद्देश्य 2047 तक उच्च शिक्षा के स्वरूप, चुनौतियों, संभावित सुधारों और रणनीतियों का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करना है।

उद्देश्य

1. 2047 तक भारत की उच्च शिक्षा की संभावित दिशा और स्वरूप को समझना।
2. विश्वविद्यालय और कॉलेजों में तकनीकी नवाचार और वैश्विक प्रतिस्पर्धा के प्रभाव का विश्लेषण।
3. उच्च शिक्षा में वर्तमान और भविष्य की चुनौतियों की पहचान।
4. नीतिगत सुधार, संसाधन प्रबंधन और समाजिक भागीदारी के माध्यम से उच्च शिक्षा की गुणवत्ता और समावेशिता सुनिश्चित करना।
5. अनुसंधान, नवाचार और व्यावहारिक कौशल पर ध्यान केंद्रित करते हुए उच्च शिक्षा की रणनीति विकसित करना।

कार्यप्रणाली

इस शोध-पत्र की कार्यप्रणाली में निम्नलिखित तत्व शामिल हैं :

साहित्य समीक्षा : उच्च शिक्षा, वैश्विक प्रतिस्पर्धा, तकनीकी नवाचार, नीति सुधार और अनुसंधान पर प्रकाशित शोध-पत्रों और पुस्तकों का अध्ययन।

सरकारी और नीतिगत दस्तावेज़ : UGC रिपोर्ट, Ministry of Education, NEP 2020, National Knowledge Commission और अंतरराष्ट्रीय शिक्षा रिपोर्टों का विश्लेषण।

सांख्यिकीय अध्ययन : विश्वविद्यालयों में नामांकन, छात्रों की संख्या, शोध गतिविधियाँ, शिक्षकों की योग्यता, वैश्विक रैंकिंग डेटा और वित्तीय संसाधनों का तुलनात्मक अध्ययन।

भौगोलिक और सामाजिक दृष्टि : शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में उच्च शिक्षा की पहुंच, लैंगिक समानता और सामाजिक समावेशिता का तुलनात्मक अध्ययन।

विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण : वर्तमान नीतियों और अंतरराष्ट्रीय दृष्टिकोण की तुलना करके भारत की उच्च शिक्षा के लिए सुधार और रणनीतियों का सुझाव।

भारत में उच्च शिक्षा की वर्तमान स्थिति

भारत में उच्च शिक्षा प्रणाली का आकार और प्रभाव दोनों तेजी से बढ़ रहे हैं। वर्तमान में भारत में लगभग 1,000 विश्वविद्यालय और 40,000 से अधिक कॉलेज हैं। इनमें विभिन्न क्षेत्रों में शिक्षा के अवसर उपलब्ध हैं, जैसे विज्ञान, प्रौद्योगिकी, मानविकी, सामाजिक विज्ञान और व्यावसायिक शिक्षा।

उपलब्धियां

1. सांख्यिकीय वृद्धि : उच्च शिक्षा में छात्रों की संख्या में पिछले दशक में 50% से अधिक वृद्धि हुई है।

2. नई नीतियां : राष्ट्रीय शिक्षा नीति (NEP 2020) ने उच्च शिक्षा में नवाचार, अनुसंधान और उद्यमिता को बढ़ावा दिया है।

3. डिजिटल शिक्षा : ऑनलाइन पाठ्यक्रम और ई-लर्निंग प्लेटफ़ॉर्म से शिक्षा की पहुंच में वृद्धि हुई है।

चुनौतियाँ

1. गुणवत्ता में असमानता : शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की गुणवत्ता में बड़ा अंतर।

2. वैश्विक प्रतिस्पर्धा : भारतीय विश्वविद्यालय अंतरराष्ट्रीय रैंकिंग में पीछे हैं।

3. संसाधनों की कमी : अनुसंधान और नवाचार के लिए पर्याप्त वित्तीय संसाधन उपलब्ध नहीं।

4. शिक्षक और प्रशिक्षण : योग्य और कुशल शिक्षकों की कमी।

5. लैंगिक और सामाजिक असमानताएँ : महिलाओं और वंचित वर्गों के लिए उच्च शिक्षा में समान अवसर की कमी।

2047 में उच्च शिक्षा की संभावित चुनौतियाँ

वैश्विक प्रतिस्पर्धा

2047 तक भारतीय विश्वविद्यालयों को वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धा के लिए उच्च गुणवत्ता वाले अनुसंधान, नवाचार और शिक्षा प्रदान करनी होगी। वैश्विक रैंकिंग में पिछड़ने से छात्रों का विदेशी विश्वविद्यालयों की ओर प्रवाह बढ़ सकता है।

तकनीकी और डिजिटल बदलाव

AI, VR, AR और डिजिटल शिक्षण प्रणाली का पर्याप्त उपयोग न होने पर उच्च शिक्षा पिछड़ सकती है। डिजिटल विभाजन शहरी और ग्रामीण छात्रों के बीच अंतर बढ़ा सकता है।

संसाधन और वित्तीय बाधाएँ

अच्छे पाठ्यक्रम और अनुसंधान के लिए पर्याप्त वित्तीय संसाधनों की आवश्यकता होगी। सरकारी अनुदान और निजी निवेश की कमी उच्च शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकती है।

शिक्षक और गुणवत्ता की कमी

योग्य और कुशल शिक्षकों की कमी से उच्च शिक्षा की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। प्रशिक्षण और शिक्षक विकास के उपाय न अपनाने पर छात्रों की वैश्विक प्रतिस्पर्धा क्षमता सीमित रह सकती है।

सामाजिक और भौगोलिक असमानताएँ

ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में उच्च शिक्षा की पहुंच सीमित है। समान शिक्षा सुनिश्चित करने के लिए विशेष प्रयास आवश्यक हैं।

सुधार और नीतिगत उपाय

अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा

- विश्वविद्यालयों में अनुसंधान और नवाचार के लिए विशेष फंड और सुविधाएँ प्रदान की जाएँ।
- अंतरराष्ट्रीय सहयोग और उद्योग के साथ साझेदारी से छात्रों और शोधकर्ताओं को प्रोत्साहित किया जाए।

तकनीकी नवाचार और डिजिटल शिक्षा

- AI, VR, AR और ऑनलाइन लर्निंग प्लेटफ़ॉर्म का अधिकतम उपयोग।
- डिजिटल उपकरण और इंटरनेट की पहुँच सभी छात्रों तक सुनिश्चित।

शिक्षक प्रशिक्षण और गुणवत्ता सुधार

- शिक्षकों के लिए नियमित प्रशिक्षण और पेशेवर विकास।

- शिक्षण गुणवत्ता के मूल्यांकन और मानकों के अनुरूप नियुक्तियाँ।

वित्तीय और प्रशासनिक सुधार

- उच्च शिक्षा में निजी और सरकारी निवेश बढ़ाया जाए।
- विश्वविद्यालय प्रशासन को लचीला और प्रभावी बनाया जाए।

समावेशिता और सामाजिक न्याय

- सभी छात्रों, विशेषकर महिलाओं और वंचित वर्गों को समान अवसर।
- छात्रवृत्ति, वित्तीय सहायता और विशेष कार्यक्रमों के माध्यम से समावेशी शिक्षा।

विश्वविद्यालय और कॉलेजों में शिक्षा का स्वरूप 2047 तक

व्यावहारिक और कौशल आधारित शिक्षा

- केवल पाठ्यपुस्तक आधारित नहीं, बल्कि उद्योग और व्यावहारिक अनुभव पर ध्यान।

अनुसंधान और नवाचार

- प्रत्येक विश्वविद्यालय में अनुसंधान केंद्र, स्टार्टअप इनक्यूबेटर और तकनीकी नवाचार के लिए सुविधाएँ।

डिजिटल शिक्षा और ऑनलाइन लर्निंग

- VR/AR और AI आधारित शिक्षण प्रणाली।

वैश्विक प्रतिस्पर्धा और सहयोग

- अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालयों के साथ साझेदारी और छात्र विनिमय कार्यक्रम।

सतत और मूल्य आधारित शिक्षा

- नैतिक मूल्यों, सामाजिक जिम्मेदारी और सतत विकास पर जोर।

अंतरराष्ट्रीय तुलना और वैश्विक दृष्टि

1. संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप : अनुसंधान और नवाचार में अग्रणी। भारतीय विश्वविद्यालयों को भी अनुसंधान केंद्र और स्टार्टअप इनक्यूबेशन बढ़ाने की आवश्यकता।

2. चीन और दक्षिण कोरिया

- तकनीकी नवाचार और व्यावसायिक शिक्षा में अग्रणी।
- 2047 तक भारत को STEM (Science, Technology, Engineering, Mathematics) और उद्यमिता शिक्षा में वैश्विक मानकों तक पहुँचाना आवश्यक होगा।

3. फिनलैंड और स्कैंडिनेवियाई देश

- शिक्षा में समानता और समावेशिता पर जोर।
- भारत में भी ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों के छात्रों के लिए उच्च शिक्षा के समान अवसर सुनिश्चित करना होगा।

4. मालदीव, इंडोनेशिया और अन्य द्वीपीय राष्ट्र

- तटीय और द्वीपीय क्षेत्रों के लिए समुद्र-स्तर वृद्धि और जलवायु परिवर्तन जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता

है।

- भारत के समुद्री और तटीय विश्वविद्यालयों को पर्यावरण विज्ञान और जलवायु अनुसंधान में अग्रणी बनाना होगा।

5. वैश्विक प्रतिस्पर्धा के उपाय

- अंतरराष्ट्रीय विश्वविद्यालयों के साथ साझेदारी और संयुक्त शोध।
- विदेशी शिक्षकों और विशेषज्ञों के माध्यम से शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार।
- छात्रों के लिए वैश्विक इनक्यूबेशन और इंटरनशिप अवसर।

2047 में उच्च शिक्षा के लिए रणनीति और सुधार

नीति सुधार

- राष्ट्रीय शिक्षा नीति के तहत उच्च शिक्षा संस्थानों को अधिक स्वायत्तता और लचीलापन दिया जाए।
- गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए मानक निरीक्षण और मूल्यांकन प्रणाली लागू।

तकनीकी नवाचार

- AI और VR आधारित पाठ्यक्रम विकसित किए जाएँ।
- डिजिटल शिक्षण प्लेटफॉर्म सभी छात्रों के लिए सुलभ हों।

अनुसंधान और विकास

- राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अनुसंधान निधियों में वृद्धि।
- स्टार्टअप और नवाचार केंद्रों को विश्वविद्यालयों में स्थापित किया जाए।

सामाजिक समावेशिता

- महिला छात्रों और वंचित वर्ग के लिए विशेष छात्रवृत्ति और सहायता कार्यक्रम।
- शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा की समान पहुंच।

वैश्विक सहयोग

- अंतरराष्ट्रीय छात्र और शिक्षक विनिमय कार्यक्रम।
- वैश्विक अनुसंधान नेटवर्क का निर्माण।

उच्च शिक्षा में वित्तीय और प्रशासनिक सुधार

1. निजी और सरकारी निवेश

- उच्च शिक्षा में दोनों स्रोतों से निवेश बढ़ाने की आवश्यकता।
- विशेष फंड अनुसंधान, डिजिटल शिक्षा और विद्यार्थियों के कौशल विकास पर केंद्रित।

2. प्रशासनिक सुधार

- विश्वविद्यालयों में लचीले प्रशासनिक ढांचे।
- नीति निर्माण और निर्णय लेने की प्रक्रिया में तेज़ी और पारदर्शिता।

3. शिक्षक विकास और प्रशिक्षण

- नियमित प्रशिक्षण और पेशेवर विकास कार्यक्रम।

- वैश्विक शिक्षा मानकों के अनुरूप शिक्षकों की भती।

2047 में उच्च शिक्षा का सामाजिक और आर्थिक प्रभाव

आर्थिक विकास : उच्च शिक्षा में सुधार से रोजगार सृजन, नवाचार और उद्यमिता को बढ़ावा मिलेगा।
सामाजिक सुधार : महिला सशक्तिकरण, वंचित वर्ग की शिक्षा और समान अवसर सुनिश्चित होंगे।
वैश्विक प्रतिष्ठा : भारत की उच्च शिक्षा वैश्विक मानकों के अनुरूप होगी और अंतरराष्ट्रीय छात्रों को आकर्षित करेगी।
कौशल विकास : छात्रों को तकनीकी और व्यावहारिक कौशल में दक्ष बनाया जाएगा।

निष्कर्ष

2047 में भारत की उच्च शिक्षा का परिदृश्य व्यापक और समावेशी होगा। शिक्षा केवल पाठ्यपुस्तक आधारित नहीं रहेगी, बल्कि अनुसंधान, नवाचार, उद्यमिता और व्यावहारिक कौशल पर केंद्रित होगी।

हालांकि वर्तमान में उच्च शिक्षा में कई चुनौतियाँ हैं, जैसे वैश्विक प्रतिस्पर्धा, शिक्षक और संसाधनों की कमी, डिजिटल विभाजन और गुणवत्ता में असमानता, लेकिन सही नीतिगत सुधार और निवेश से भारत 2047 तक विश्व स्तर पर प्रतिस्पर्धात्मक और समावेशी शिक्षा प्रणाली स्थापित कर सकता है।

उच्च शिक्षा में सुधार न केवल छात्रों के लिए अवसर बढ़ाएगा, बल्कि राष्ट्र के आर्थिक, सामाजिक और तकनीकी विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देगा।

संदर्भ सूची

1. भारत सरकार, शिक्षा मंत्रालय। (2022)। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020. नई दिल्ली : भारत सरकार।
2. विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC), भारत। (2021)। भारत में उच्च शिक्षा पर वार्षिक रिपोर्ट. नई दिल्ली : UGC प्रकाशन।
3. ऑल्टबाख, पी.जी., एवं डी विट, एच। (2020)। अंतरराष्ट्रीयकरण और उच्च शिक्षा में वैश्विक प्रतिस्पर्धा, लंदन : रूटलेज।
4. यूनेस्को। (2021)। वैश्विक शिक्षा निगरानी रिपोर्ट : उच्च शिक्षा की प्रवृत्तियाँ. पेरिस : यूनेस्को।
5. OECD (2020)। एजुकेशन एट ए ग्लांसरू वैश्विक उच्च शिक्षा अवलोकन. पेरिस : OECD प्रकाशन।
6. अग्रवाल, ए. (2018)। भारत में उच्च शिक्षा : उभरती समस्याएँ और चुनौतियाँ. नई दिल्ली : सेज पब्लिकेशन।

SHODH SAMALOCHAN ISSN : 2348-5639
An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

A Study on Differential Geometry of Curved Manifolds

Dr. Nimesh Kumar
Assistant Professor of Mathematics
St. Paul Teachers' Training College Birsinghpur, Samastipur, Bihar
Email - nimesh1511990@gmail.com

Abstract

Differential geometry studies the properties of curves, surfaces, and higher-dimensional spaces called manifolds. Curved manifolds are key to understanding intrinsic and extrinsic geometry. This study examines differentiable and Riemannian manifolds, metric and curvature tensors, geodesics, and connections, highlighting how topology influences local geometry. Applications span physics (Einstein's General Relativity), robotics, computer graphics, and data science through manifold learning. By linking abstract mathematical concepts with real-world phenomena, this research demonstrates the versatility of differential geometry and its ongoing importance in advancing science, technology, and mathematical understanding.

Keywords : Differential Geometry, Curved Manifolds, Riemannian Metric, Curvature Tensor, Geodesics, Connections, Topology, General Relativity, Manifold Learning, Higher-Dimensional Geometry.

Introduction

Differential geometry studies smooth curves, surfaces, and higher-dimensional spaces using calculus and linear algebra. Unlike classical geometry, it focuses on flexible, curved structures that arise naturally in mathematics and physics. A manifold is a space that locally resembles Euclidean space but can have complex global properties.

The field began with Gauss, who introduced intrinsic curvature, showing that it depends only on the surface itself. Riemann extended these ideas to n-dimensional manifolds, introducing the metric tensor to measure lengths, angles, and curvature.

Differential geometry underpins Einstein's General Relativity, where gravity is the curvature of spacetime and geodesics describe natural trajectories of particles and light. Beyond physics, it finds applications in computer graphics, robotics, and manifold learning in data science, enabling dimensionality reduction and feature extraction.

This paper explores the mathematical structure, curvature, geodesics, and applications of curved manifolds, highlighting the interplay between geometry and topology in both theory and practice.

Historical Background

The evolution of differential geometry is a fascinating journey from classical geometry to modern theoretical physics. The field began with the study of curves and surfaces in Euclidean space. In the 18th century, Leonhard Euler developed foundational ideas in the calculus of variations, studying geodesics and minimal surfaces. Euler's work laid the groundwork for understanding extremal properties of curves and surfaces.

Carl Friedrich Gauss, often regarded as the father of differential geometry, made profound contributions by introducing the concept of intrinsic curvature. His Theorema Egregium (Remarkable Theorem) established that Gaussian curvature is determined entirely by the internal geometry of a surface, independent of its embedding in higher-dimensional space. This discovery revolutionized the understanding of surfaces and provided the first rigorous framework for intrinsic geometry.

Bernhard Riemann extended these concepts to higher-dimensional manifolds. In his 1854 habilitation lecture, Riemann proposed that space itself could be curved and introduced the notion of a Riemannian metric, a smoothly varying positive-definite tensor that defines the inner product on tangent spaces. Riemann's ideas were initially abstract but later became essential for modern physics, particularly in Einstein's formulation of General Relativity.

The 20th century saw the formalization of differential geometry through the work of Élie Cartan, who developed the theory of connections, torsion, and differential forms. These tools allowed the systematic study of curvature and parallel transport in arbitrary manifolds. Meanwhile, the integration of topology with differential geometry led to the study of global properties, linking curvature to topological invariants, such as the Euler characteristic through the Gauss–Bonnet theorem.

Modern differential geometry has branched into multiple subfields, including Riemannian geometry, symplectic geometry, and complex differential geometry. Its applications now span theoretical physics, computer vision, data science, and robotics. Understanding the historical development of differential geometry illuminates the evolution of mathematical thought and its enduring relevance in describing both abstract spaces and the physical universe.

Definition and Concept of Manifolds

A manifold is a topological space that locally resembles Euclidean space \mathbb{R}^n. Intuitively, while globally a manifold may have complex structure or curvature, each small neighborhood can be mapped smoothly to Euclidean space. Examples include the circle S^1, the sphere S^2, and the torus T^2. Each point on these surfaces has a local neighborhood that behaves like a flat plane, even though the global surface may curve and twist.

Formally, an n-dimensional manifold M is defined as a topological space in which every point has a neighborhood homeomorphic to \mathbb{R}^n. This structure allows calculus to be applied, leading to the notion of differentiable manifolds, where smooth transitions between coordinate charts are defined. Charts and atlases provide the local coordinate descriptions needed to perform differentiation and integration on the manifold.

When a manifold is equipped with a metric tensor g, it becomes a Riemannian manifold (M, g). The metric allows for the measurement of distances and angles and enables the definition of curvature. Curvature quantifies how a manifold deviates from flat Euclidean space. Riemannian manifolds

generalize the classical geometry of surfaces to higher dimensions, enabling the study of complex geometrical and physical phenomena.

Manifolds provide a flexible framework to model spaces in mathematics and science. They allow the study of local properties through differential calculus and global properties through topology. This duality makes manifolds a cornerstone of modern mathematics and physics, bridging abstract theory and applied analysis.

Differentiable Manifolds and Charts

Differentiable manifolds extend the concept of manifolds by enabling smooth calculus operations. A differentiable manifold is one where the transition functions between overlapping charts are differentiable. These charts provide local coordinate systems, forming an atlas that covers the entire manifold. Differentiability ensures that derivatives, tangent vectors, and other analytical structures are well-defined.

The tangent space T_pM at a point p is the vector space of all tangent vectors at that point. Tangent vectors represent directions of curves passing through p and form the foundation for defining derivatives on manifolds. Vector fields, differential forms, and tensor fields are built upon tangent spaces and provide tools for analyzing geometrical and physical properties.

The differential of a smooth map f: M \rightarrow N between manifolds maps tangent vectors from one manifold to another, preserving linear structure locally. This concept is essential in formulating physical laws in curved spaces and in mapping data from one geometric representation to another.

By combining charts, tangent spaces, and differentiable structures, mathematicians can generalize the familiar concepts of calculus to abstract manifolds. This enables the rigorous study of curvature, geodesics, and connections, forming the backbone of differential geometry.

Riemannian Manifolds and Metric Tensor

A Riemannian manifold (M, g) is a differentiable manifold M endowed with a metric tensor g, which is a symmetric, positive-definite bilinear form on each tangent space T_pM. The metric allows measurement of lengths of curves, angles between vectors, and distances between points. The line element is expressed as:

$$ds^2 = g_{ij}\, dx^i\, dx^j$$

where g_{ij} are the metric tensor components and dx^i are differential coordinates. The choice of metric determines the geometric structure of the manifold, affecting curvature, geodesics, and volume elements.

Riemannian manifolds generalize the geometry of surfaces to arbitrary dimensions. The metric tensor allows the definition of curvature tensors, including the Riemann curvature tensor R^i_{jkl}, the Ricci tensor R_{ij}, and the scalar curvature R. These tensors quantify how the manifold bends and twists in different directions.

Riemannian geometry provides the language for Einstein's theory of General Relativity. The metric tensor of spacetime encodes gravitational effects, while the curvature tensors describe how matter and energy influence the geometry of space. Beyond physics, Riemannian metrics are used in robotics for configuration spaces, in computer graphics for surface modeling, and in data science for manifold learning.

Curvature: Riemann, Ricci, Scalar

Curvature is central to differential geometry. The Riemann curvature tensor R^i_{jkl} measures how vectors are rotated when parallel transported along infinitesimal loops. Its components describe the manifold's local bending in multiple directions.

The Ricci tensor R_{ij} is obtained by contracting the Riemann tensor and summarizes volume distortion due to curvature. The scalar curvature R is the trace of the Ricci tensor and represents the average curvature at a point.

Positive curvature corresponds to sphere-like geometries, negative curvature to saddle-like geometries, and zero curvature to flat Euclidean spaces. Curvature influences geodesics, volume growth, and topological invariants. The Gauss–Bonnet theorem beautifully connects curvature to topology, stating that the integral of Gaussian curvature over a closed surface is proportional to its Euler characteristic.

In physics, curvature tensors describe gravitational fields, spacetime geometry, and the motion of particles. In applied mathematics, curvature measures are used in shape analysis, computer graphics, and manifold learning.

Geodesics and Connections

Geodesics generalize straight lines to curved manifolds. They are defined as curves that locally minimize distance and satisfy the geodesic equation:

\frac{d^2 x^i}{ds^2} + \Gamma^i_{jk} \frac{dx^j}{ds} \frac{dx^k}{ds} = 0

where \Gamma^i_{jk} are Christoffel symbols derived from the metric tensor.

Connections, including Levi-Civita connections, provide rules for parallel transport of vectors, allowing differentiation along curves. These structures are essential for defining curvature, torsion, and covariant derivatives, which describe how tensors change over the manifold.

Geodesics and connections are critical in physics for describing particle motion in curved spacetime, in robotics for path planning, and in computer graphics for surface parametrization.

Topology and Geometry Interrelation

Topology studies properties preserved under continuous deformation, while geometry focuses on distances and curvature. On a manifold, topology determines the global shape, while geometry determines local structure.

The Gauss–Bonnet theorem links topology to curvature: for a compact 2D surface S:

\int_S K \, dA = 2\pi \chi(S)

where K is Gaussian curvature and \chi(S) is the Euler characteristic. This reveals deep connections between local geometric quantities and global topological invariants.

Understanding topology is crucial for classifying manifolds, predicting geodesic behavior, and modeling spaces in physics and data analysis.

Applications

Physics (General Relativity): Spacetime curvature governs gravitational interactions; Einstein's field

equations relate energy-momentum to Ricci curvature.

1. Robotics: Configuration spaces of robotic arms are manifolds; motion planning uses geodesics and curvature analysis.
2. Computer Graphics: Smooth surfaces and 3D models are designed using curved manifolds and differential operators.
3. Data Science: High-dimensional data often lie on lower-dimensional manifolds; manifold learning techniques like Isomap and LLE exploit this.
4. Biology and Medicine: Curvature analysis helps in brain surface modeling, protein structure analysis, and tissue geometry.

Differential geometry provides a versatile framework connecting theory with practical systems.

Modern Developments and Research Trends

Recent research focuses on:

- Symplectic and complex manifolds in quantum physics.
- Geometric deep learning leveraging manifolds for non-Euclidean data.
- Computational geometry for simulations and 3D modeling.
- Topology optimization and curvature-based design in engineering.

Emerging fields like string theory, manifold-valued machine learning, and robotics increasingly depend on advanced differential geometry.

Conclusion

The study of curved manifolds through differential geometry provides profound insights into the nature of space, curvature, and motion. From classical surfaces to high-dimensional data, the concepts of metric, curvature, and geodesics unify theoretical and applied mathematics. Applications span physics, robotics, computer graphics, and data science, demonstrating the versatility of the discipline. Ongoing research continues to expand its frontiers, bridging abstract mathematics with emerging technologies, ensuring that differential geometry remains a cornerstone of scientific and mathematical inquiry.

References

1. Riemann, B. (1854). On the Hypotheses which Lie at the Bases of Geometry.
2. Do Carmo, M. P. (1992). Riemannian Geometry. Academic Press.
3. O'Neill, B. (1983). Semi-Riemannian Geometry with Applications to Relativity. Academic Press.
4. Lee, J. M. (2018). Introduction to Smooth Manifolds. Springer.
5. Kobayashi, S., & Nomizu, K. (1963). Foundations of Differential Geometry. Wiley.
6. Gallot, S., Hulin, D., & Lafontaine, J. (2004). Riemannian Geometry. Springer.
7. Boothby, W. M. (1986). An Introduction to Differentiable Manifolds and Riemannian Geometry. Academic Press.

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

भक्ति कुमारी

शोधार्थी, हिन्दी विभाग

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

for the paper titled

हिन्दी साहित्य में गाँधी का प्रभाव

(विशेष सन्दर्भ-सियाराम शरण गुप्त)

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

राकेश

शोधार्थी, हिन्दी विभाग

प्रो. ज्योति किरण

शोध निर्देशिका, महिला महाविद्यालय पी.जी. कॉलेज, किदवई नगर, कानपुर (उत्तर प्रदेश)

for the paper titled

हरीश अरोड़ा की कविताओं में स्त्री-जीवन के विविध सौंदर्य आयाम

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

सन्तोष कुमारी

पी.एच.डी. हिन्दी शोधार्थी

ग्लोकल विश्वविद्यालय, सहारनपुर, उत्तर प्रदेश

पंजीकरण संख्या : GU23R2203

for the paper titled

मलबे का मालिक कहानी में भारत विभाजन की त्रासदी : एक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Atul Kumar
Assistant Professor, Department of Commerce, Shri Ram College, Muzaffarnagar
Dr. Pardeep Kumar
Assistant Professor, S.G.Technical University, Sikkim

for the paper titled

Quality Analysis and Management Practices for Sugar Factory Wastewater

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Arti Sood

for the paper titled

AI and Digital Education in India: Driving a Pedagogical Shift for Better Learning Outcomes

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Dhanya B
Assistant Professor, University of Kerala
Dhanya house, Elampa PO 695103
Attingal, Trivandrum

for the paper titled

हिंदी साहित्य में पर्यवरण प्रदूषण - जल प्रदूषण समकालीन हिंदी कविताओं के विशेष संदर्भ में

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. बी.के. चौधरी

शोध निर्देशक : (ऐसोसिएट प्रोफेसर)

शारीरिक शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

पूजा नागपाल

शोधकर्त्री : शारीरिक शिक्षा संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

for the paper titled

आधुनिक जीवन-शैली में योग की प्रासंगिकता का अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

विनोद प्रसाद जायसवाल

शोध छात्र - हिन्दी विभाग

डॉ. विनोद कुमार शर्मा

शोध निर्देशक - सह- प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, डॉ. सी. वी. रमण विश्वविद्यालय, वैशाली, बिहार

for the paper titled

मुंशी प्रेमचंद के कथा-साहित्य में स्त्री-पुरुष मनोविज्ञान का अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

प्रवीण कुमार

शोधार्थी (समाजशास्त्र) शासकीय विश्वनाथ यादव तामस्कर स्नातकोत्तर स्वशासी महाविद्यायल, दुर्ग (छ.ग.)

डॉ. अश्विनी महाजन

शोध निर्देशक (प्राचार्य) डॉ. खूबचंद बघेल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यायल, भिलाई-3, जिला-दुर्ग (छ.ग.)

for the paper titled

छत्तीसगढ़ के कबीरधाम जिले में निवासरत बैगा जनजाति के विकास में शासकीय योजनाओं की भूमिका

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

प्रो. डॉ. केशव क्षीरसागर

हिंदी विभागाध्यक्ष,

रामकृष्ण परमहंस महाविद्यालय, धाराशिव

for the paper titled

समकालीन हिंदी नवगीतों में व्यक्त पर्यावरणीय चेतना

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Jagdish Rai
Shri Jagdishprasad Jhabarmal Tibrewala University, Department of Commerce, Jhunjhunu, Rajasthan
Dr. Aman Gupta
Shri Jagdishprasad Jhabarmal Tibrewala University, Department of Commerce, Jhunjhunu, Rajasthan

for the paper titled

Stacked for Scale: India's Digital Public Infrastructure, UPI Adoption, and Inclusive Growth

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

रोहताश कुमार

शोधार्थी (भूगोल), टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.)

डॉ. सोम प्रकाश

शोध निर्देशक (भूगोल), टांटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.)

for the paper titled

कृषि में कीटनाशकों का उपयोग : मानव व पारिस्थिति पर प्रभाव (हनुमानगढ़ जिले का भौगोलिक अध्ययन)

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. विजयलक्ष्मी देवांगन

सहा प्राध्यापक राजनीति विज्ञान

पं देवी प्रसाद चौबे शासकीय महाविद्यालय साजा, जिला बेमेतरा छ.ग.

for the paper titled

मानव अधिकार की अवधारणा, विकास और महत्व : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Subhash Chander
(Research scholar), Department of History
Tantia University, Riico, Sri Ganganagar
Dr. Vijay Shankar Kaushik
Supervisor - Assistant professor

for the paper titled

राजस्थान की स्थापत्य कला : एक ऐतिहासिक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

आदित्य राज

शोधार्थी (NET) राजनीति विज्ञान विभाग

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार

for the paper titled

जयप्रकाश नारायण की संपूर्ण क्रांति एवं विचारों का एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. सुनीता सिंह मरकाम

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी

शास. इन्दिरा गांधी गृहविज्ञान कन्या महाविद्यालय शहडोल, मध्य प्रदेश

for the paper titled

भाषा और समाज

(वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भाषाओं का योगदान)

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

नेहा जैन अज़ीज़

सहायक अध्यापक, कवयित्री

for the paper titled

प्रेमचंद का साहित्य : समाज का दर्पण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

सावन कुमार

शोधार्थी (इतिहास विभाग) टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

डॉ. विजय शंकर कौशिक

सहायक आचार्य (इतिहास विभाग) टांटिया विश्वविद्यालय, श्री गंगानगर

for the paper titled

डॉ. बी.आर. अंबेडकर और उनका समतामूलक समाज- इतिहास के परिप्रेक्ष्य में

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

कुसुम लता टाक

(शोधार्थी) शिक्षा विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)

डॉ. श्रद्धा सिंह चौहान

शोध निर्देशिका (सहायक आचार्या), श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय, सी.टी.ई. केशव विद्यापीठ जामडोली जयपुर (राज.)

for the paper titled

उच्च माध्यमिक स्तर पर विभिन्न संकाय में कार्यरत ग्रामीण एवं शहरी शिक्षकों की शैक्षिक नवाचारों के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

आरती ग्वालेर

शोधार्थी

डॉ. मोहम्मद नासिर

पर्यवेक्षक, पुस्तकालय एवं सूचना विज्ञान विभाग कलिंगा विश्वविद्यालय, नया रायपुर (छत्तीसगढ़)

for the paper titled

मध्यप्रदेश के विश्वविद्यालयों में शोधार्थियों की डिजिटल सूचना संसाधनों के प्रति अभिरुचि और संतुष्टि : एक समीक्षात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

कविता

शोधकर्त्री : कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा

शोध निर्देशक : (सहायक प्रोफेसर)

कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

for the paper titled

महिला सशक्तिकरण में मानवाधिकारों की भूमिका : एक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

आन्नपूर्ण भोसले

शोध छात्रा, हिंदी विभाग, कर्नाटक राज्य अक्कमहादेवी महिला विश्वविद्यालय, विजयपुर, कर्नाटक

डॉ. अमरनाथ प्रजापति

शोध पर्यवेक्षक, सहायक आचार्य, हिंदी विभाग,

कर्नाटक राज्य अक्कमहादेवी महिला विश्वविद्यालय, विजयपुर, कर्नाटक

for the paper titled

अगम बहै दरियाव : किसान जीवन का महाकाव्य

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

सरिता पूनिया

शोधकर्त्री : कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

डॉ. जगदीश प्रसाद कड़वासरा

शोध निर्देशक : (सहायक प्रोफेसर), कला संकाय, टांटिया विश्वविद्यालय

for the paper titled

भारत में महिला अधिकार विधान एवं संरक्षण : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. विजय सदामते

हिंदी विभाग, शिवाजी विश्वविद्यालय, कोल्हापुर (महाराष्ट्र)

for the paper titled

मोहनदास नैमिशराय का उपन्यास 'महानायक बाबासाहब डॉ. आम्बेडकर' डॉ. बाबासाहब आंबेडकर- संघर्षशील महानायक

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

Impact Factor 6.521

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

निहारिका शुक्ला
प्रो. राजीव कुमार

for the paper titled

महिला सशक्तिकरण में शिक्षा की भूमिका

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Adapa Kedari
Telugu Lecturer,
Y.N.N.R. Government Degree College,
Kaikaluru, Eluru Dist.

for the paper titled

పాల్కురికి సోమనాథుని రచనలు – సామాజిక దృక్పథం

"కులరహిత సమాజంకోసం కలంపట్టిన తొలి తెలుగు అభ్యుదయ కవి"

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

बबिता सिंह मरकाम

शोधार्थी

(अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा, म॰प्र.)

for the paper titled

गोंड जनजातियो में 750 का योगदान
(सीधी जिले के विशेष संदर्भ)

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

ललित कुमार

एम. ए. तृतीय सत्र हिन्दी एव अन्य भारतीय भाषा विभाम, जम्मू केन्द्रीय विश्वविद्यालय, राया सुचानी बांग्ला जम्मू - कश्मीर

for the paper titled

कबीर समाज सुधारक के रूप में

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Anupama
Assistant Professor, Department of Hindi, Mount Carmel College,
Autonomous,
#58, Palace Road, Abshot Layout,
Vasanth Nagar, Bangalore

for the paper titled

किन्नर विमर्श : सामाजिक पहचान और आधुनिक संदर्भ में संभावनाएँ

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science,
DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Indu P.
Assistant Professor Department of languages - Hindi
M.O.P.Vaishnav College for Women (Autonomous)
Nungambakkam, Chennai

for the paper titled

धर्मशास्त्रों का नारी के प्रति दृष्टिकोण

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

पूनम व्यास

शोधार्थी, जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, जयपुर (राज)

प्रो. ग्रीष्मा शुक्ला

जयपुर नेशनल यूनिवर्सिटी, स्कूल ऑफ़ एजुकेशन

for the paper titled

उच्च माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के समक्ष ऑनलाइन शिक्षण की चुनौतियों का अध्ययन

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. वाणीश्री बुग्गी

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग

माउंट कार्मल महाविद्यालय (स्वायत्त), बेंगलुरु

कर्नाटक (भारत)

for the paper titled

पारम्परिक पारिस्थितिकी ज्ञान और जलवायु

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

SILPA. A
Research scholar
Govt.Arts and Science College meenchanda, Calicut

for the paper titled

हिन्दी उपन्यास में मानव तस्करी : सरिता पटेल का उपन्यास 'बिकता बदन' के विशेष संदर्भ में

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. श्रीकांत राठोड

श्री गु रा गाँधी कला, श्री य अ पाटील वाणिज्य एवं
श्री मा पु दोशी विज्ञान उपाधि महाविद्यालय इंडि, जिला विजयपुर

for the paper titled

मरंग गोडा नीलकंठ हुआ : विकिरण, प्रदूषण से जूझते आदिवासियों की गाथा

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

डॉ. पीयूष कुमार द्विवेदी

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग

जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट (उत्तर प्रदेश)

इच्छा उपाध्याय

छात्रा (एम. ए.) हिन्दी विभाग

जगद्गुरु रामभद्राचार्य दिव्यांग राज्य विश्वविद्यालय चित्रकूट (उत्तर प्रदेश)

for the paper titled

डॉ. नरेश सिहाग का कहानी संग्रह और किन्नर विमर्श

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor

Dr. Varsha Rani

Editor

Dr. Naresh Sihag Advocate

M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Mahesh Chand Gurjar
Education department - Assistant professor
Smt.Anar Devi Teacher's Training College Bakharana (Kotputli -Behror)

for the paper titled

2047 में भारत की उच्च शिक्षा का परिदृश्य : विश्वविद्यालय और कॉलेजों में शिक्षा के स्वरूप और वैश्विक प्रतिस्पर्धा

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

ISSN:2348-5639

Impact Factor 6.521

शोध समालोचन
Shodh Samalochan

An International Peer Reviewed, Refereed Multidisciplinary & Multiple Languages Quarterly Research Journal

Published by : Guganram Educational & Social Welfare Society (Regd.)

https://ginajournal.com/shodh-samalochan/

Certificate of Publication*

is awarded to

Dr. Nimesh Kumar
Assistant Professor of Mathematics
St. Paul Teachers' Training College Birsinghpur, Samastipur, Bihar

for the paper titled

A Study on Differential Geometry of Curved Manifolds

Published in Shodh Samalochan ISSN:2348-5639

October to December 2025, Vol. 12, Issue-4

Executive Editor
Dr. Varsha Rani

Editor
Dr. Naresh Sihag Advocate
M.A., LL.B. (Hon's), M.A. (JMC), M.Lib.& Information Science, DHLT, M.Phil. Ph.D., Diploma Panchayati Raj (Silver Medalist)

***This Certificate is only Valid with the Presentation of Research Paper/Topic**

#202, Old Housing Board, Bhiwani-127021 (Hry.) 8708822674, 9466532152